

शिक्षावल्लरी

Shikshavallari

(शिक्षाशास्त्रविभागीयपत्रिका)



शिक्षाशास्त्रविभागः

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

मानितविश्वविद्यालयः

भोपालपरिसरः, भोपालम् - 462043

मध्यप्रदेशः

शिक्षावल्लरी

(शिक्षाशास्त्रविभागीय पत्रिका)

2018-19

संरक्षक:

प्रो. परमेश्वरनारायणशास्त्री

प्रधानसम्पादक:

प्रकाशपाण्डेय:

परामर्शकौ

प्रो. प्रभादेवीचौधरी

प्रो. जे. भानुमूर्ति

सम्पादकाः

डॉ. नगेन्द्रनाथ झा

डॉ. डम्बरुधरपति:

डॉ. रजनी वी.जी.

डॉ. मनीषजुगरान:

डॉ. सोमनाथसाहु:

डॉ. कृष्णाकान्त तिवारी

डॉ. सुनील कुमार शर्मा



शिक्षाशास्त्रविभागः

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

(भारतशासनाधीनः मानितविश्वविद्यालयः)

भोपालपरिसरः, संस्कृतमार्गः, बागसेवनिया, भोपालम्

सर्वाधिकारो राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानभोपालपरिसराधीनः

| | |
|----------------------------|--|
| प्रकाशकः | - शिक्षाशास्त्रविभागः राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् मानितविश्वविद्यालयः, भोपालपरिसरः |
| प्रकाशनवर्षम् | - 2019 |
| अङ्कः | - द्वितीय |
| पत्रिका | - शिक्षावल्लरी |
| मूल्यम् | - 250/- |
| आकल्पनम् अक्षरसंयोजनञ्च | - रोहित पचौरी |
| प्राप्तिस्थलम् | - राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः) भोपालपरिसरः, संस्कृतमार्ग, बागसेवनिया भोपालम् (मध्यप्रदेशः) - 462043 |
| दूरभाषः | - 0755-2418043 |
| दूरप्रेषः | - 0755-2418003 |
| वैपत्रम् | - rsks_bhopal@yahoo.com |
| जालपुटम् | - www.rsksbhopal.ac.in |
| मुद्रकः | - S.M.Systems M.P. Nagar, Bhopal |

प्रकाश पाण्डेय

प्राचार्य

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान

(मानित विश्वविद्यालय)

(मानवसंसाधनविकासमन्त्रालय, भारतशासनाधीन)

भोपाल परिसर, संस्कृत मार्ग, बागसेवनिया,

भोपाल - 462043 (म.प्र.)



Prakash Pandey

Principal

Rashtriya Sanskrit Sansthan

(Deemed University)

(Under Ministry of H.R.D., Govt. of India)

Bhopal Campus, Sanskrit Marg, Bagsevaniya, Bhopal - 462043 (M.P.)

शुभाशंसनम्

शिल्प क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था सङ्क्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता ।

यस्योभयं साधु सः शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव ॥

इति कालिदासवचोऽनुसारं यः स्वीयविषयस्य सम्यग् ज्ञाता तथा ज्ञातविषयस्य प्रभावपूर्णसम्प्रेषणे दक्षो भवति स एव उत्तमोऽध्यापकः भवति । ईदृशानामुत्तमसंस्कृतभाषाध्यापकानां निर्माणे राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य भोपालपरिसरस्य शिक्षाशास्त्रविभागो बहोः कालात् सततं संलग्नो वरीवर्ति । भाविनां संस्कृतभाषाध्यापकानां बहुविधविकासार्थं नैकविधाः प्रयासा विभागपक्षतः आवर्षं क्रियन्ते । अस्मिन्नेव क्रमे शिक्षाशास्त्रविभागद्वारा विभागीयप्राध्यापकानां छात्राणाञ्च शैक्षिकदर्शन-शैक्षिकमनोविज्ञान-शैक्षिकप्रविधि-शैक्षिकप्रबन्धन-पाठ्यचर्या-अधिगमप्रक्रिया-भाषाशिक्षणादि विविधविषयोपेता 'शिक्षावह्नी' ति वार्षिकशैक्षिकपत्रिका प्रकाशयत इति विज्ञाय मोमुद्यते मे चेतः । अवसरेऽस्मिन् विभागीयेभ्यः सर्वेभ्योऽपि विद्वत्प्राध्यापकेभ्यः सम्पादकेभ्यश्च शुभाशयान् साधुवादांश्च विज्ञापयामि । पत्रिकायाः प्रकाशने स्वीयपरिश्रमोपेतान् लेखांश्च प्रदाय साहाय्यमाचरितवद्भ्यः सर्वेभ्यः छात्रेभ्यो भूयांसि वर्धापनानीति शम् ।

(आचार्यः प्रकाशपाण्डेयः)

सम्पादकीयम्

‘अनभ्यासे विषं शास्त्रम्’ इत्युच्यते। भाषणे लेखने च शुद्धसम्पादनाय अभ्यासः अनिवार्यरूपेण कर्तव्यः। नवनवीनविचाराणामविष्काराय अपि चिन्तनस्य अभ्यासस्य च पात्रमधिकं वर्तते। तदत्र सफलीकर्तुं परिसरस्यास्य शिक्षाशास्त्रविभागेन ऐषमः ‘शिक्षावल्लरी’ नाम्नी वार्षिकी पत्रिका प्रकाशयिष्यत इति महतो हर्षस्य कारणम्। पत्रिकेयं समेषां छात्राध्यापकानां शिक्षकप्रशिक्षकाणाञ्च विविधैः शैक्षिकलेखैः विद्वन्मानसविनोदिनी भविष्यतीति मन्महे।

प्रसङ्गेऽस्मिन् राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य कुलपतिवर्यान् नानाशास्त्रपारङ्गतान् प्रशासनदक्षान् आचार्यपरमेश्वरनारायण-शास्त्रिवर्यान् सश्रद्धं वन्दामहे। पत्रिकाप्रकाशनकर्मणि मार्गदर्शनकृतवद्भ्यः शिक्षावेदान्तादिशास्त्रनिष्णातेभ्यः परिसर-प्राचार्येभ्यः आचार्यः प्रकाशपाण्डेयवर्येभ्यः धन्यवादान् वितरामः। सम्पादनकार्ये सहकृतवद्भ्यः समेभ्यः विभागीयाध्यापकेभ्यः धन्यवादान् निवेदयामः। महाकालेश्वरं स्मारं स्मारं विस्तरभयात् निरमामः इत्थम्।

सम्पादकाः

विषय-सूची

| क्र. | विषयः | लेखकः | पृ.सं. |
|------|--|-----------------------|--------|
| १ | छन्दोऽलङ्कारयोः रसानुभूतिः छन्दशास्त्रम् | प्रो. प्रभादेवी चौधरी | 01 |
| २ | समावेशी शिक्षा में कक्षाशिक्षक एवं संबलशिक्षक की भूमिका | डॉ. कृष्णकान्त तिवारी | 07 |
| ३ | सेवापूर्वाध्यापकानां जीवनशैल्यां स्वास्थ्यचेतनायाः महत्त्वम् | सुशीलकुमारः | 08 |
| ४ | व्यक्तित्व विषये भारतीय स्वरूपं महत्त्वञ्च | विकासकुमारवपाण्डेयः | 10 |
| ५ | भारतीय दर्शनम् | शशिभूषण उपाध्याय | 11 |
| ६ | ICT मध्ये शिक्षकस्य भूमिका | सुजाताराणी दास | 16 |
| ७ | नेतृत्वम् | कुमारी पूनम | 19 |
| ८ | पाठ्यचर्या | केशव नाथ झा | 22 |
| ९ | अधिगमानुभवानां चयने अवधेयांशाः | सोनिया साह | 25 |
| १० | शिक्षायां मूल्याङ्कनम् | शिवनारायण त्रिपाठी | 27 |
| ११ | शैक्षिकानुसन्धानम् | नीलेश शर्मा | 29 |
| १२ | संस्कृतं राष्ट्रभाषा स्यात् | भास्कर पाणिग्राही | 30 |
| १३ | समावेशी शिक्षा के सिद्धान्त | दिवाकर मिश्र | 31 |
| १४ | प्रायोगिकमनोविज्ञानस्यौचित्यम् | संजय कुमार तिवारी | 32 |
| १५ | वसुधैवकुटुम्बकम् | ममतासाहुः | 33 |
| १६ | नारीशिक्षा | मधुस्मिता नन्दी | 34 |
| १७ | समयस्य महत्त्वम् | पङ्कज उपाध्यायः | 35 |
| १८ | शिक्षाक्षेत्रे मनोविज्ञानस्य योगदानम् | संध्या मेहरा | 35 |
| १९ | अभिप्रेरणम् | गीताञ्जली | 37 |
| २० | पाठयोजनायाः आवश्यकतत्त्वानि | कान्हु पधान | 38 |
| २१ | समावेशात्मकशिक्षा | राजेशरञ्जनः त्रिपाठी | 39 |
| २२ | सत्यमेव जयते नानृतम् | अभय देहुरी | 41 |
| २३ | आधुनिकयुगे संस्कृतशिक्षकाय शैक्षिकप्रविधेः उपयोगिता | भास्करपाणिग्राही | 42 |
| २४ | लेखनशिक्षणम् | प्रकाश पाणिग्राही | 44 |
| २५ | विद्यालये पुस्तकालयस्य महत्त्वम् | बिरेन्द्रबट्टेह | 45 |
| २६ | परीक्षाप्रबन्धनम् | चैतन्यप्रसादमाझी | 47 |
| २७ | न्यायदर्शने शैक्षिकचिन्तनम् | सस्मितानाथः | 49 |
| २८ | शिक्षायाः स्वरूपम् | संयुक्तादासः | 50 |
| २९ | बालकेन्द्रितशिक्षा | रविन्द्र कुमार | 52 |
| ३० | कर्मणि एव अधिकारः | दिप्तीमयी महापात्र | 53 |
| ३१ | नास्ति ज्ञानं गुणं विना.... | अंकित यादव | 54 |
| ३२ | संस्कृतस्य महत्त्वम् | रमेश चन्द | 55 |
| ३३ | कर्मणि एव अधिकारः | राई किशोरी दास | 57 |
| ३४ | अधिगमः | रस्मिता धनी | 59 |
| ३५ | संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति | शुभश्री जेना | 60 |
| ३६ | सर्जनात्मकता (Creativity) | सीना मीना | 61 |
| ३७ | सद्ज्ञान | धानेश्वरी साहु | 64 |
| ३८ | मूल्यशिक्षायाः स्वरूपम् | मानसी प्रधान | 65 |
| ३९ | अनुवादविधिः | अनिषा साहू | 66 |
| ४० | आत्मविश्वास | सुनयना | 67 |
| ४१ | आत्ममूल्याङ्कनस्य सम्प्रत्ययः | मोनिका शिवहरे | 68 |
| ४२ | बौद्धकाले शिक्षा | किरण कुमार पटेल | 69 |
| ४३ | पाठ्यचर्या | रेबति बाग | 70 |

| | | | |
|----|--|-------------------------|-----|
| ४४ | विद्या ददाति विनयम् | मधुस्मिता साहु: | 72 |
| ४५ | आधुनिकयुगे लैङ्गिकशिक्षा | गौरी शङ्कर त्रिपाठी | 73 |
| ४६ | वैदिकवाङ्मये अग्रितत्त्वम् | ऋषिराम पाण्डेय | 74 |
| ४७ | पाठ्यचर्यायाः महत्त्वम् | लोपामुद्रा जेना | 76 |
| ४८ | मानवजीवने शिक्षायाः महत्त्वम् | कौशल्या दीप | 77 |
| ४९ | स्वामिविवेकानन्दमते शिक्षा | मोनालिसा त्रिपाठी | 78 |
| ५० | प्रारूप-योगात्मकमूल्याङ्कनम् | चिन्मयी साहु | 79 |
| ५१ | रचनात्मक-योगात्मकमूल्याङ्कनम् | अपूर्वा अग्रवाल | 81 |
| ५२ | श्रीचैतन्योपरि राधाकृष्णयोः प्रभावः | लक्ष्मीप्रिया नायक | 82 |
| ५३ | शिक्षायाम् अनुशासनस्य आवश्यकता | अलका जेना | 83 |
| ५४ | शान्तिसंस्थापने बाधकत्वरूपेण आतङ्कवादः | मिनती पात्र | 85 |
| ५५ | स्त्री शिक्षा | दिव्यांशु आय | 87 |
| ५६ | शारीरिक शिक्षा (Physical education) | सौरभ धाकड | 88 |
| ५७ | मैं शिक्षक हूँ | सीमावती बारिक | 90 |
| ५८ | अनुशासन | वन्दिता राउत | 92 |
| ५९ | विश्व शान्ति | पुष्पिता मिश्र | 93 |
| ६० | वैज्ञानिक अध्यात्मवाद | पार्वती यादव | 94 |
| ६१ | वर्तमान शिक्षा पद्धति | वैभव भूषण | 95 |
| ६२ | समावेशी शिक्षा (शिक्षा नीति-2006 के सन्दर्भ में) | सुरेश लाक्रा | 96 |
| ६३ | मानसिक विकास में शिक्षकों एवं माता-पिता की भूमिका | कृष्णकान्त मिश्र | 97 |
| ६४ | योगशिक्षा | अरुण कुमार: | 98 |
| ६५ | भारतीयसन्दर्भे अनिवार्यपाठ्यक्रमस्य महत्त्वम् | वेविना सेनापति | 102 |
| ६६ | पाठ्यचर्यायाः स्वरूपम् | पुष्पाञ्जली साहु | 103 |
| ६७ | मूल्यशिक्षा | सागरिका प्रधान | 104 |
| ६८ | मूल्याकलने प्रतिपुष्टिः | लिप्सा तनया दाश | 106 |
| ६९ | स्मृतिग्रन्थेषु मूल्यशिक्षा | कुनि भोइ | 107 |
| ७० | शाब्दबोधः | राई किशोरी दास | 110 |
| ७१ | पृथ्वीदिवसः | जयस्मिता बेहेरा | 112 |
| ७२ | अहिंसा परमो धर्मः | स्नेहलता | 114 |
| ७३ | त्रिभाषासूत्रं संस्कृतं च (शिक्षाक्रमे संस्कृतस्य स्थानम्) | रस्मिता परिडा | 115 |
| ७४ | चतुर्थ भावफलाध्याय | सरिता प्रज्ञा बेहेरा | 116 |
| ७५ | कथा कहानी | प्रिया चौहान | 117 |
| ७६ | शिक्षा का महत्व | क्षिरलता किसान | 118 |
| ७७ | मनोविज्ञान में स्मृति | नरेन्द्र कुमार | 119 |
| 78 | Language Skills | Batakrushna Mandal | 119 |
| 79 | LIFE IS A PUZZLE | DEBIKALAPATI | 122 |
| 80 | CONVERSATION BETWEEN PENCIL & ERASER | PADMAYA PATRA | 122 |
| 81 | SELF EVALUATION | SANTOSH KUMAR MOHAPATRA | 123 |
| 82 | IMPACT OF MODERNISATION ON EDUCATION | CHITTA RANJAN PADHAN | 124 |
| 83 | NATIONAL HEALTHCARE | SUNIT KUMAR NAIK | 126 |
| 84 | Memory | BhagyaShree Biswal | 127 |
| 85 | A land of unity in Diversity 'India' | Anusaya Behera | 128 |
| 86 | TEACHER-STUDENT RELATIONSHIP.... | SNEHAMAYEE SWAIN | 130 |
| 87 | WHO IS YOUR LIFE PARTNER? | JAIKISHAN | 131 |
| 88 | Right to Education | SOUROP KUMAR PATTANAYAK | 132 |

| | | | |
|-----|--|--------------------------|-----|
| 89 | ENVIRONMENT IS OUR LIFE | INDRAJIT SAHOO | 133 |
| 90 | THE VALUE OF DISCIPLINE IN LIFE | ASHALATA RANA | 134 |
| 91 | EDUCATION | DEBASMITA SAHOO | 135 |
| 92 | <i>Value of Time</i> | शुभश्री साहु | 137 |
| ९३ | ज्ञान | केशव शर्मा | 138 |
| ९४ | संस्कृतमेव अस्माक जीवनम् | कार्तिकेश्वर मिश्र | 139 |
| ९५ | शैक्षिकचिन्तकः स्वामी दयानन्दसरस्वती | पद्मावती महनी | 140 |
| ९६ | शिक्षायाः स्वरूपम् | निक्सन प्रधानः | 141 |
| ९७ | संस्कृत में संगीत शिक्षा | देबस्मिता मिस्त्री | 143 |
| ९८ | आधुनिकभारते संस्कृतभाषायाः उपहुतयः | योगेश पाण्डेय | 143 |
| ९९ | हो रहा अब उनका सम्मान | सुकेशी प्रियदर्शिनी सामल | 144 |
| १०० | अधिगमस्य स्वरूपम् | शुचिस्मिता बेहेरा | 145 |
| १०१ | हमारे जीवन में सोलह संस्कार | अमित कुमार सिंह | 146 |
| १०२ | शिक्षा | पूर्णमा राय, | 147 |
| १०३ | अनिवार्य तथा निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा | नीलम नाईक | 148 |
| १०४ | संगीत और मनोविज्ञान | पंकज तिवारी | 150 |
| १०५ | भारत में गणतान्त्रिक सफलता के लिए शिक्षा की भूमिका | अर्जुमा अर्पिता पति | 151 |
| १०६ | आचार्य चाणक्य की शिक्षा-नीति | श्रद्धा तिवारी | 153 |
| १०७ | भारतीयशिक्षायां/समाजे संस्कृतशिक्षणस्य भूमिका | विनय सिंह राजपूत | 155 |
| १०८ | शिक्षा पद्धति में भारतीय दर्शन | संजीव कुमार उरमलिया | 156 |
| १०९ | वेदानां महत्त्वम् | वेद कुमार सिंह जादौन | 158 |
| ११० | तैत्तरीयशिक्षावल्यां शिक्षा | सतीश भार्गव | 159 |
| १११ | वास्तविक शिक्षा | गोविन्द शर्मा | 161 |
| ११२ | शिक्षायाम् अनुशासनस्य आवश्यकता | आर्यसुता बेहेरा | 162 |
| ११३ | सामाजिकजीवनस्य आधारः शिक्षा | मालती साहु | 163 |
| ११४ | प्रकृतिवादे शिक्षा | शिल्पी उपाध्याय | 166 |
| ११५ | भारतीय शास्त्रेषु शिक्षायाः तत्त्वानि | सुषमा | 168 |
| ११६ | विवेकानन्दस्य शिक्षादर्शनम् | कृष्णप्रिया साहु | 169 |
| ११७ | शिक्षकत्वम् | जितेन्द्र गौतमः | 170 |
| ११८ | भारतीय शिक्षापद्धतिः | नेत्रानन्द महापात्र | 171 |
| ११९ | मधुरं भाषणम् | प्रभात कुमार नायक | 172 |
| १२० | व्याकरण शिक्षणम् | विकाश कुमार पाण्डेय | 173 |
| १२१ | महाभारते नैतिकशिक्षायाः स्वरूपम् | सत्येन्द्र कुमार शर्मा | 174 |
| १२२ | परोपकारस्य जीवने उपयोगिता | मंगल राम | 177 |
| १२३ | वेदेषु कृषि विज्ञान | मल्लिका महान्त | 179 |
| १२४ | भौतिक पर्यावरणम् | नमिता महान्त | 180 |
| १२५ | वेदेषु सृष्टि विज्ञानम् | इन्द्रजित साहु | 182 |
| १२६ | संस्कृतभाषायाः महत्त्वम् | कादम्बिनी खमारी | 184 |
| १२७ | वेदेषु कृषि विज्ञानम् | प्रभात कुमार नायक | 185 |
| १२८ | विद्यालय एवं समाज | जय किशन कुमार | 186 |
| १२९ | महाभारते वृक्षविज्ञानम् | येषलाल पाण्डेय | 187 |
| १३० | अनुशासनस्य महत्त्वम् | मंगल राम | 189 |
| १३१ | संगणकसहभागाधिगमः ई. अधिगमश्च | सुरेश कुमार पाण्डेय | 190 |
| १३२ | हमारा प्यारा तिरंगा | लक्ष्मीप्रिया सेठी | 191 |
| १३३ | शिक्षा मनुष्य के जन्मगत अधिकार | सुशान्त माझी | 192 |
| १३४ | शिक्षक शिक्षा और छात्र | गणेश्वर बेहेरा | 193 |

छन्दोऽलङ्कारयोः रसानुभूतिः छन्दशास्त्रम्¹

प्रो. प्रभादेवी चौधरी
विभागाध्यक्षा - शिक्षाशास्त्र

संस्कृतसाहित्ये छन्दःशास्त्रं स्वकीयं महत्त्वपूर्णं स्थानं भजते। प्राचीनकाले शास्त्रमेतत् छन्दोविचितीनाम्ना प्रसिद्धमासीत्। 'छन्दोविचितीः' अर्थात् यस्मिन् ग्रन्थे विशेषेण छन्दसां चयनं संग्रहो वा कृतमस्ति तत् शास्त्रम् छन्दःशास्त्रम्। अस्य शब्दस्य निर्देशः पाणिनेः गणपाठे (4/3/73) उपलभ्यते सहैव कौटिल्यस्य अर्थशास्त्रेऽपि (1/3) उपलभ्यते। कालक्रमेण शास्त्रमेतत् छन्दोऽनुशासनं, छन्दोविचितीः, छन्दोमान मित्यादिनाम्नाऽपि ख्यातमभूत्।² व्युत्पत्तिदृष्ट्या छाद्यते अनेनति छन्दः। अत्र छद् धातोः असून् प्रत्यये कृते रूपमिदं सिद्ध्यति। सहैव चन्दयति अनुरञ्जयति चन्दते वा अनेनेति अत्र व्युत्पत्त्या चदि धातोः चन्देरादेश्च छत्वे इत्यौणादिके असुनि चकारस्य छत्वे छन्द इति निष्पन्नः भवति।

छन्दः द्विविधम् - वैदिकं लौकिकञ्चेति। छन्दःशास्त्रस्य ज्ञानं यथा वैदिक मन्त्राणामर्थं परिज्ञानाय आवश्यकमस्ति तथैव लौकिकसाहित्यस्यापि नितान्तमावश्यकमस्ति। आर्षेय ब्राह्मणग्रन्थे (1/10) तथा सर्वानुक्रमण्यां स्पष्टनिर्देशोऽस्ति यत् 'यः खलु मन्त्राणां छन्दऋषिदेवताब्राह्मणादीनां नाम अज्ञात्वैव यज्ञं करोति, कारयति पाठयति वा स पापभागभवति।'³

छन्दः वेदपुरुषस्य पादस्थानीयं वर्तते। अतः यथा पदभ्यामेव देहिनां स्थितिः गतिश्च भवति तथैव वेदाः अपि छन्दोपरि एव अवस्थिताः सन्ति। येन मन्त्रात्मक-वेदस्य वेदता फलाधायकता च वरीवर्ति। यतो हि समस्तः वेदः छन्दोमयविग्रहः अस्ति। उक्तश्चापि पाणिनेः शिक्षाग्रन्थे - 'छन्दः पादौ तु वेदस्य' अर्थात् छन्दः वेदपुरुषस्य पादाङ्गस्वरूपमस्ति। वेदपुरुषस्य पादाङ्गभूतत्वेन अस्य शास्त्रस्येतिहासः तावान् एव प्राचीनोऽस्ति यावान् स्वयं वेदोऽस्ति। तथापि शास्त्रपरम्परया रामानुजाचार्यस्य गुरुणाचार्येणयादवप्रकाशेन विरचितपिङ्गलसूत्रस्य भाष्यान्ते अधोलिखितौ इमौ द्वौ श्लोकौ उपलभ्येते। तद्यथा -

छन्दोज्ञानमिदं भवाद् भगवतो लेभे गुरूणां गुरु-
स्तस्माद् दुश्च्यवनस्ततोऽसुरगुरुर्माण्डव्यनामा ततः।
माण्डव्यादपि सैतवस्ततं ऋषिर्यास्कस्ततः पिङ्गल-
स्तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं प्राप्यास्मदाद्यैः क्रमात् ॥

अस्यां परम्परायामस्य आद्यः प्रवर्तकः शिवोऽस्ति। तदनन्तरं क्रमेण बृहस्पति दुश्च्यवनः (इन्द्रः) शुक्राचार्यः माण्डव्यः सैतवः यास्कः पिङ्गलाचार्याः आसन्। सन्दर्भेऽस्मिन् एषः द्वितीयः श्लोकोऽत्रैव लिखितः वर्तते। तद्यथा -

छन्दःशास्त्रमिदं पुरा त्रियनाल्लेभे गुहोऽनादित,
स्तस्मात् प्रापसन्तकुमारकमुनिस्तस्मात् सुराणां गुरुः ।
स्तस्माद् देवपतिस्ततः फणिपतिस्तस्माच्च सत् पिङ्गल -
स्तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिरथो मह्यां प्रतिष्ठापितम् ॥

अस्यां परम्परायामपि अनादिः शंकरः एव प्रवर्तकोऽस्ति । शंकरात् क्रमेण गुहः सनत्कुमारः सुरगुरुर्ब्रह्मपतिः इन्द्रः शेषनागः पतञ्जलिः पिङ्गलाचार्याः आसन् । यद्य छन्दःशास्त्रस्य पूर्वोक्तेषु आचार्येषु केचन मान्याः आचार्याः अस्यां परम्परायामपि वर्तन् एव तथापि प्रामाणिकदृष्ट्या ऐतिहासिकदृष्ट्या च यादवप्रकाशेन निर्दिष्टा परम्परा एव । माननीया वर्तते ।।

वैदिकं लौकिकञ्चेति छन्दः द्विविधम् । तत्र वैदिकमन्त्रेषु प्रयुक्तानि छन्दांसि वैदिकछन्दो नाम्नाभिधीयन्ते । तथा रामायणमहाभारतादिकाव्यग्रन्थेषु प्रयुक्तानि छन्दारि लौकिकछन्दो नाम्नाख्यातानि सन्ति । तथ्यमिदं विश्वविश्रुतमस्ति यत् अलौकिकत्वात् वेदा न केवलं सकलशास्त्राणामुपजीव्याः सन्ति, प्रत्युत भारतीयधर्मसंस्कृत्यादिसमस्त चिन्तनपरम्पराणामपि नियामकाः सन्ति । अतः लौकिकछन्दसामपि जनकानि वैदिकछन्दांसि एव वर्तन्ते । तथापि प्रयोगदृष्ट्या अनयोर्मध्ये काचिद् भिन्नता दरीदृश्यते । अर्थात् वैदिकछन्दसि स्वरसंगीताश्रयाणि सन्ति, परन्तु लौकिकछन्दांसि वर्णसंगीताश्रयाणि सन्ति । उपर्युक्तैः तथ्यैः सुस्पष्टं भवति यत् अनयोर्मध्ये काचन भिन्नता सत्यपि लौकिक छन्दसा जनकानि वैदिकाछन्दांसि एव वर्तन्ते । परन्तु लौकिकछन्दसा प्रवहन्ती रमणीयैषा धारा वेदात् कदा निस्सृता अभूत् केन प्रकारेण अस्याः विकासोऽभूत् इत्यस्मिन् विषये विदुषां मध्ये मतैक्यं न दृश्यते । कैश्चन विद्वद्भिः महर्षिणा पिङ्गलेन प्रणीतः छन्दशास्त्रं नामधेयः ग्रन्थः छन्दशास्त्रस्य प्रथमो ग्रन्थः वर्तते इति स्वीक्रियते परन्तु शास्त्राणामालोडनेन सुस्पष्टो भवति यत् तथ्यमिदं सन्देहास्पदं वर्तते । यतो हि स्वयमेव महर्षिणा पिङ्गलेन वर्णितेषु लौकिकछन्दो विवरणेषु प्राचीनाचार्याणां मतमतानि दृश्यन्ते । तेषु कानिचन निदर्शनानि संक्षेपेणात्र प्रस्तूयन्ते । तत्र अनुष्टुप्छन्दसः वर्णनप्रसङ्गे (5/18) परमाचार्यसैतवमतस्य स्पष्टः उल्लेखः वर्तते । वसन्ततिलकायाः वर्णनप्रसङ्गे परमाचार्यकाश्यपस्य तथा दण्डकस्य विवरणप्रसङ्गे (7/35) परमाचार्यमाण्डवस्य मतं दरीदृश्यते । सहैव एतादृशानि अनेकानि स्थलानि वर्तन्ते येषु पूर्वाचार्याणां मतं दृग्पथे । अवतरति ।

प्राचीनाचार्याणां मतमतानामुल्लेखेन सुस्पष्टः प्रतीयते यत् लौकिकछन्दसामाविर्भावः महर्षिपिङ्गलात् पूर्वमेवाभूत् । आचार्ययादवप्रकाशविरचितपिङ्गलसूत्रभाष्ये (यादवप्रकाशभाष्ये) अस्य स्पष्ट उल्लेखः वर्तते यत् अमी महान्तः महर्षिमाण्डव्यादनन्तरमभून्, तथापि तथ्यमिदं अकाट्यसत्यं वर्तते यत् लौकिकछन्दसामुद्भवः अवश्यमेव महर्षिपिङ्गलात् पूर्वमेवाभूत्, परन्त्वस्य विकासयात्रायाः श्रीगणेशः आचार्यपिङ्गलस्य करकमलैः एवाभूत् । यतो हि लौकिकछन्दःशास्त्रस्य समुपलब्धसर्वेषु ग्रन्थेषु महर्षिपिङ्गलविरचितपिङ्गलछन्दःशास्त्रं (पिङ्गलछन्दःसूत्रम्) सर्वतः प्राचीनमस्ति । अष्टम अध्यायेषु निबद्धोऽयं ग्रन्थः सूत्रात्मकोऽस्ति । ग्रन्थेऽस्मिन् भट्टहलायुधकृतमृत-सञ्जीवनी वृत्यनुसारेण अष्टाधिकत्रीणि शतानि सूत्राणि वर्तन्ते

यावदप्रकाशभाष्यानुसारं ग्रन्थेऽस्मिन् सूत्राणां संख्या शतत्रयम् वर्तते । आचार्यभास्करेण विरचितपिङ्गलभाष्यराजानुसारं ग्रन्थेऽस्मिन् सूत्राणां संख्या शतत्रयं वर्तते । ग्रन्थोऽयमाकारदृष्ट्या नास्ति

बृहदाकारः परन्तु शास्त्रीयविवेचनदृष्ट्या अतिमहत्त्वपूर्णः अस्ति। एतदतिरिक्तं छन्दःशास्त्रस्योपरि वृत्तरत्नाकरः, छन्दःकौस्तुभं, ज्ञानाश्रयी छन्दोविचितीः, जयदेवछन्दः, रत्नमञ्जूषा, छन्दोऽनुशासनं, वृत्तदर्पणः, वाणिभूषणं, श्रुतबोधः छन्दोमञ्जरीत्यादयः विविधाः ग्रन्थाः समुपलभ्यन्ते।

बीजवितपयोः कथावत् अर्थात् धरण्यां प्रथमं बीजं प्रादुर्भाव अथवा वृक्षः ? यथा प्रश्नः एषः उत्तररहितः वर्तते, तथैव गद्यपद्ययोर्मध्येऽपि स्थितिः वर्तते, अर्थात् प्रथमं गद्य पद्यं वा। विषयेऽस्मिन् मनीषिणां मध्ये मतैक्यं नास्ति। केचन गद्यमनुशंसन्ति केचन पद्यम्। सर्वे स्वस्वमतस्य श्रेष्ठत्वमुपस्थापयन्ति तथा प्रमाणाय विभिन्नान्युदाहरणानि अपि ददति (प्रस्तुवन्ति)। वस्तुतः तथ्येऽस्मिन् न कापि शङ्कायाः समावेशः दृश्यते यत् प्रथमं गद्यस्यैवाभिर्भावोऽभूत् यतो हि कवित्वं दुर्लभं लोके इति उक्त्या सर्वे जन्मनैव कवयः न भवन्ति। अतः विचाराणामादानप्रदानयोर्माध्यमः गद्यमेव भवति। परन्त्वत्र एष प्रश्नः समुदेति यत् साहित्यस्य प्राङ्गणे प्रथमं गद्यस्यागमनमभूत् पद्यस्य वा। पूर्वाग्रह-रहितचिन्तनेन तथ्यमिदं सिद्ध्यति यत् व्यवहारसम्पादने स्वात्मविचारं प्रकटयितुं सर्व-प्रथमं गद्यस्यैव आविर्भावोऽभूत्, परन्तु साहित्यस्य सुललितवाटिकायां गद्यस्यापेक्षया पद्यस्यैवागमनं प्राथम्येनाऽभूत्। प्रमाणभूताः साहित्यिकग्रन्थाः तथ्यमिदं शङ्कनादेनो-द्धोषयन्ति। संस्कृतआङ्गलहिन्दीबंगलातमिलतेलगु-कन्नडमलयादिभाषाणां प्राचीन-साहित्यिकग्रन्थाः पद्येष्वेव मिलन्ति। येन उपर्युक्ततथ्यानां प्रामाणिकता स्वयमेव सिद्ध्यति।

पुराकाले छन्दोबद्धरचनाया एव परम्परासीत्। अनेन कारणेनैव महर्षिभ्यो वाल्मीकिव्यासपाराशरादीनां सर्वाः रचनाः पद्यात्मिकाः काव्यात्मिकाः एव दृश्यन्ते। न केवलमेतेषां महानुभावानां रचनाः प्रत्युत तन्त्रवैद्यकज्यौतिषव्याकरणादिशास्त्राणां ग्रन्थाः अपि पद्ये (श्लोके) एव वर्तन्ते। अतः अर्थव्याप्तिदृष्ट्या काव्यशास्त्रस्ययमभिप्रायः आसीत् विविधविषयाणां समग्रं साहित्यम् अर्थात् पुराकाले काव्यशब्दः साहित्यस्य पर्यायः आसीत्। परन्तु कालक्रमेण विभिन्नविदुषां वैचारिकदृष्ट्या अर्थेऽस्मिन् किञ्चित् भिन्नता दृश्यते। राजशेखरकुन्तकादिमनीषिणः साहित्यशब्दस्य प्रयोगं काव्यस्य व्यापकार्थं कृतवन्तः सन्ति।

आचार्यराजशेखरस्य आभ्यां वाचनाभ्यां (वाङ्मयमुभयथा शास्त्र-काव्यञ्चेति) अपि च शब्दार्थयोर्यथावत्सहभावेन विद्या साहित्यविद्येति) इदं प्रतीयते यत् काव्यस्य व्यापकार्थं अमी महान्तः छन्दोरसभावलालित्ययुक्तं सरससाहित्यमेव स्वीकुर्वन्ति।

सन्दर्भेऽस्मिन् वक्रोक्तिजीवितकाराचार्यकुन्तकस्य 'साहित्यार्थसुधासिन्धोः सारमुन्मीलयाम्यहमित्यनेन' वचनेनापीदं सिद्ध्यति यत् छन्दोभावरसलालित्ययुक्तं सरससाहित्यमेव काव्यकोटौ समागच्छति। एवं वाग्विलासदृष्ट्या साहित्यशब्दस्य काव्यशब्दस्य च परिभाषात्मकव्याख्यायां भामहवामनरुद्रटमम्मटादिसाहित्यमर्मज्ञानां विचारे किञ्चिद् न्यूनाधिकमन्तरं दृक्पथे अवतरति, परन्तु काव्यसर्जनाय छन्दसामावश्यकतामपरिहार्याङ्गत्वेन प्रायः सर्वे स्वीकुर्वन्ति। तथ्यमिदं सत्यं वर्तते यत् छन्दसा विना काव्यं, नहि भवति श्राव्यं न च मनोभाव्यम् यथा तटस्य बन्धनेन युता नद्याः प्रवहमाना धारा सुवेगवती भवति सुरक्षिता च तिष्ठति तथैव छन्दसा युक्तं काव्यमपि भवति। छन्दोविरहिता कविता तटबन्धविरहिता नदी इव गतिहीना भवति। छन्दः काव्ययोर्मध्ये न केवलं घनिष्टः सम्बन्धः वर्तते, अपितु छन्दः काव्यस्यावश्यकमङ्गमस्ति।

छन्दोविहीनकवितायां हृदयग्राहकतायाः अभावो भवति । छन्दोयुक्तकविता स्वर लयरागादिनादसौन्दर्येण आप्लाविता भवति, सा खलु न केवलं श्रवणसुखदा एव भवति अपि तु श्रोतॄणां मनांसि बलात् हरति । उदाहरणार्थं यथा-‘जगन्नाथस्वामी नयनपथगामी भवतु मे’ (श्रीजगन्नाथाष्टकात्) अस्यां छन्दोरागाप्लावितायां पंक्त्यां यादृशं हृदयग्राह्यत्वं वर्तते तादृशं आनन्दजनकत्वं अस्याः गद्यात्मकार्थं नास्त्येव नात्र कश्चन संदेहः । अपि च आधुनिके युगेऽपि चलच्चित्रेण आकाशवाण्या दूरदर्शनेन वा प्रसारितं गीतं जनाः मानसिकश्रान्त्यमपनयार्थं मनोरञ्जनार्थं वा शृण्वन्ति मनोरञ्जनं च कुर्वन्ति । अत्रैकः सामान्यः समुदेति यत् प्रसारितगीतानां स्थाने यदि, तेषां गीतानां गद्यात्मकार्यस्यैव प्रसारणं वेत् तर्हि कोऽपि श्रोष्यति किम् ? यदि कोऽपि पूर्वाग्रही (हठी) वा श्रोष्यत्यपि तदा सः मानन्दनिमग्नः भविष्यति किम् ? नूनमेव नकारात्मकमुत्त-रमेवागमिष्यति । अत्र ध्यातव्यं तथ्यमिदं वर्तते यत् यदा सुरतालरागादिना रञ्जितं गीतं श्रुत्वा कोऽपि आनन्दप्लावितः वति, तदा तस्यैव गीतस्य गद्यात्मकार्थश्रवणेन कथं नहि आनन्दमनुभवति ? गीतस्य मार्मिकभावस्तु गद्यात्मकार्थेऽपि भवति । अत्रापि एकमेवोत्तरमागमिष्यति यत् सुरतालरागादीनामभावः एव आनन्दाभावस्य कारणमस्ति । उदाहरणम् -

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

अथवा - तुम्हीं हो माता पिता तुम्हीं हो
तुम्ही हो बन्धु सखा तुम्हीं हो ।
तुम्हीं हो साथी तुम्हीं सहारे
कोई न अपना सिवा तुम्हारे ॥

उपर्युक्तनिर्दर्शनयोः सन्दर्भं कथनस्य तात्पर्यमिदं वर्तते यत् श्रुतिगोचरानन्तरम् एते छन्दोरागयुक्ते पद्ये यादृशं हृदयं स्पन्द यतः तादृशं स्पन्दनं अनयोः पद्ययोः गद्यात्मकार्थः नैव जनयिष्यति । एतदर्थं तथ्यं सर्वविदितमस्ति यत् श्लोके पद्ये वा यथा रसालङ्कारध्वन्यादिषु आह्लादजनकत्वं भवति तथैव रागातालादिष्वपि भवति । यतिगति आरोहावरोहसुरतालरागादीनां जनकम् छन्दः एवास्ति । अनेन कारणेनैव अस्माकं पूर्वजाः पुराकालीनाः ऋषिमहर्षयः आचार्याश्च एकाक्रियाह्यर्थिका प्रसिद्धेति न्यायेन सर्वेषां विषयाणां विशालज्ञानभाण्डागाराणां संरक्षणाय छन्दसां सर्जनं अकुर्वन् । यैः यथा कण्ठस्थीकरणे सुविधा भवति तथैव श्रवणेन श्रावणेन च आनन्दानुभूतिरपि भवति । संक्षेपेण उपर्युक्तविवेचनानां तात्पर्यमिदं वर्तते यत् भारतीयपरिवेशे छन्दसां सर्जनं घुणारक्षरेण न्यायेन अथवा अनुमानेन नाभूत् प्रत्युत संगीतशास्त्राणां नियमानुसारेणाभूत् येषु न केवलं मनोरञ्जनात्मकं तत्त्वानामेव प्राधान्यमासीदपितु आयुरारोग्यसंवर्द्धकादि जीवनसंरक्षणात्मकतत्त्वानामपि समावेशः आसीत् । इदमेव कारणमस्ति यत् संस्कृतसाहित्यस्य प्रणयनं छन्दोबद्धपद्येन केन वा अभूत् ।

संस्कृतसाहित्यमर्मज्ञास्ते आचार्यमनीषिणः पूर्वाचार्यैः निर्धारितं स्वलक्षणच्युतवृत्तं भिन्नवृत्तं विरसविरामः यतिभ्रष्टमित्यादिछन्दो विषयकम् निरसनपुरस्सरं छन्दसां सर्जनं कुर्वन्ति स्म, तथापि

यदि यदा कदा छन्दसः नियमानामनुपालने काव्यरचनायां छन्दसः भङ्गः भवति स्म, तर्हि ते तस्यामवस्थायां व्याकरणनियमान् अनादृत्य शब्दस्य पदस्य वा मूलरूपे परिवर्तनं कुर्वन्ति स्म, परन्तु छन्दोभङ्गम् कदापि न कुर्वन्ति स्म। उक्तञ्चापि—

अपि माषं मषं कुर्यात् छन्दोभङ्गं न कारयेत्।

एतेन सिद्धान्तानुसारेण अनेक प्रयोगाः दृक्पथे अवतरन्ति, येषु कानिचन निदर्शनानि अत्र प्रस्तूयन्ते। तत्रापि इतरेषां महाकवीनां का कथा? कविकुलकमलोद्भव महाकविकालिदासस्य कुमारसम्भवरघुवंशमहाकाव्यादिषु ग्रन्थेष्वपि एतादृशाः श्रोकाः मिलन्ति येषु छन्दोरक्षायै लौकिकव्याकरणनियमानाम् उपेक्षाऽभूत्। तद्यथा —

स देवदारुद्रमवेदिकायां

शार्दूलचर्मव्यवधानवत्याम्।

आसीनमासन्न शरीरपात

स्त्रियम्बकं संयमिनं ददर्श॥

श्लोकेऽस्मिन् त्रियम्बकमित्यत्र स्थाने व्याकरणनियमानुकूलं त्र्यम्बकं इति भवितव्यं परन्तु छन्दसः रक्षार्थं महाकविना तथा न कृतम्। तथैव श्रीरघुवंशमहाकाव्ये—

तेनाभिघातरभस्य विकृष्यपत्री

वन्यस्य नेत्रविवरे महिषस्य भुक्तः।

निर्मिद्य विग्रमशोणितलिसपुङ्ख

स्तं पातयां प्रथममास पपात पश्चात्॥

अत्रापि पाणिनिनियमानुकूलं शुद्धरूपं ‘पातयामास’ इत्येव भवितव्यं परन्तु छन्दोनियमस्य परिपालनाय महाकविना तथा न कृतम्। एतादृशानि अनेकानि निदर्शनानि विभिन्नमहाकाव्यादिग्रन्थेषु उपलभ्यन्ते। यैः प्रतीयते यत् काव्यरचनायां छन्दः नियमानामनुपालनमावश्यकं भवति एव। यतो हि छन्दोभङ्गदोषेण न केवलं श्लोकस्य अद्यस्य वा स्वरूपं विकृतं भवति प्रत्युत यतिगतिभावरागानुगुणं पठने पाठने प्रवाहभङ्गेन रसापकर्षणमपि भवति। एतदर्थं काव्यसर्जने ‘अपिमाषं मषं कुर्यात् छन्दोभङ्गं न कारयेत्’ ति न्यायेन येन केन प्रकारेण छन्दसां मर्यादापालनं भवेदेव इति पूर्वाचार्यमनीषिणां मतमस्ति।

साहित्यशिक्षणस्य सन्दर्भं रसानुभूतये यावत्पर्यन्तं छन्दसामनुगुणं पठन पाठनं न भविष्यति, तावत्पर्यन्तं यादृश्या रसनिष्पत्त्या भवितव्यम् तादृशी रसनिष्पत्तिः कदापि न भविष्यति। सहैव रसनिष्पत्त्याभावे रसानुभूतेः कल्पनाऽपि न कर्तव्या। अतः साहित्यशिक्षणेन छात्रेषु रसानुभूतिः भवेत् एतदर्थं सर्वप्रथमं पाठ्यांशस्य प्रस्तुतीकरणं प्रति विशेषावधानं दातव्यम्। साम्प्रतं साहित्यशिक्षणस्य ये विधयः निर्धारिताः प्रचलिताः वा सन्ति, अध्यापकाः, तेषां संस्मरणात्मकं संकलनमेव कुर्वन्ति, व्यवहारे नानयन्ति। अतः पाठ्यांशस्य स्वरूपानुगुणं समुचितविधिम्प्रति ध्यानं दातव्यम्। तदनन्तरं केषां भावानामभिव्यक्तये कानि छन्दांसि समुपयुक्तानि सन्ति, सहैव कस्य छन्दसः कीदृशं स्वरूपमस्ति, तस्य यतिगतितालरागादीनामनुसारं विस्तृतविवेचनं छन्दो ग्रन्थेषु समुपलभ्यते। साहित्यकक्षायां तेषां समुचितप्रयोगेण रसनिष्पत्तिः भविष्यत्येव नात्र कश्चन सन्देहः। एतदर्थं प्रथममारम्भिककक्षासु अर्थात्

विद्यालयीयकक्षासु स्तरानुगुणं दत्तावधानेन आगमननिगमनविधिभ्यां छन्दसां ज्ञानं दातव्यम्। इतः परं लक्षणोदाहरणादीनां कठस्थीकरणे बलं दातव्यम्।

तदनन्तरं 'काव्यं सुचिन्तितमथोपरिचिन्तनीयमिति' विश्रुतन्यायेन तेषां लक्षणानामुदाहरणानां पौनःपुन्येन अभ्यासः कारणीयः येन छात्राणां मनसि छन्दो विषयकं ज्ञानं चिरं तिष्ठेत्। अत्र इदमपि तथ्यमवधेयं वर्तते यत् अस्मिन् स्तरे उपर्युक्तानि ज्ञानानि तु दातव्यानि एव, सहैव कक्षायां काव्यपाठमाध्यमेनैव रसस्वादनां सौन्दर्यानुभूतिं च कारयेत्। महाविद्यालयीयस्तरे छात्राः प्रबुद्धाः भवन्ति। अतः अस्मिन्स्तरे उदाहरणमु-पस्थाप्य छन्दसां लक्षणानि ज्ञापनीयानि, अत्रापि आगमननिगमनविध्योः उपयोगः स्वीकर्तव्यः सहैव छन्दसः रसानुभूतये छन्दसि निर्दिष्टानां यतिगत्यारोहावरोहादिनियमा-नामनुपालनपुरस्सरं कक्षायां काव्यपाठः समुपस्थापनीयः येन रसापकर्षणं न भवेत् तथा सम्यग्रूपेण सौन्दर्यानुभूतिः भवेत्

समासेन, उपर्युक्तानि तथ्यानि छन्दसां परिज्ञानाय दिशानिर्देशमात्रमेव वर्तन्ते। यतो हि शिक्षणं हि नाम छात्रछात्रासु अन्तर्निहितशक्तीनां विकासः। अतः साहित्यशिक्षणे येन विधिना छात्राः स्वानुभवेन छन्दसां ज्ञानार्जने रसास्वादाने च सर्वतोभावेन समर्थाः भवेयुः, शिक्षकाः स्वात्मप्रेरणया तेषामुपयोगं कुर्वन्तु। कोऽपि विधिः अध्यापकात् श्रेष्ठतरः न भवति न भविष्यति। यतो हि अध्यापकः स्वयमेव सर्वेषु विधिषु सर्वोत्तमः विधिः वर्तते।

सन्दर्भाः -

1. युधिष्ठिरमीमांसकविरचितछन्दोमीमासायां 35 - 42 पृष्ठे। यतो ह वा अविदितार्षेयच्छन्दोदैवतब्राह्मणेन मन्त्रेण याजयति वाऽध्यापयति वा स्थाणं वति गर्ने वा प्रपद्यते प्र वा मीयते, पापीयान् भवति। यातया
2. मान्यस्यच्छन्दांसि भवन्ति। दुर्गस्य निरुक्तटीकायां सर्वानुक्रमण्याञ्च।।
3. युधिष्ठिरमीमांसकविरचितछन्दोमीमासायां 57-59 पृष्ठे।
4. युधिष्ठिरमीमांसकलिखितछन्दोमीमासायां 57-59 पृष्ठे।
5. पिङ्गलाचार्यरचिते छन्दःशास्त्रे हलायुधः।
मृतसञ्जीवनीं नाम वृत्तिं निर्मितवानिमाम् ॥
6. वाक्यसिन्धुपारोऽपि छन्दःसूत्रशतैस्त्रिभिः। येन बद्धो नमस्तस्मै पिङ्गलाद्भुतशिल्पिने पिङ्गलसूत्रभाष्यराजस्य हस्तलिखिते 1737 (72)
7. कुमारसम्भवमहाकाव्यम् 3/44 रघुवंशमहाकाव्यम् 9 / 61

समावेशी शिक्षा में कक्षाशिक्षक एवं संबलशिक्षक की भूमिका

Role of Class teacher and resource teacher

डॉ. कृष्णकान्त तिवारी

संविदा अध्यापक

समावेशी शिक्षा में कक्षाशिक्षक एवं संबलशिक्षक की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। क्योंकि समावेशी शिक्षा में भिन्न-भिन्न स्तरवाले छात्र होते हैं। अतः कक्षा के सभी छात्रों को एकशिक्षण विधि से शिक्षा प्रदान करना अथवा मूल्याङ्कन करना छात्रों को लाभ पहुँच सकता। इसलिए अध्यापक को कक्षा में छात्रों की सीखने की प्रक्रिया में अत्यधिक लचीलापन लाना चाहिए। जिससे अधिक से अधिक छात्र अध्यापक द्वारा सिखाई जाने वाली क्रियाओं को सीख सकें। अध्यापक को किसी भी विषय को सरल से सरलतम तरीके से बच्चों तक पहुँचाना चाहिए। थॉमस आर्मस्ट्रांग ने भी इसका समर्थन किया है। वह बहुमुखी प्रतिभा के सिद्धान्त को शैक्षिकप्रक्रिया में लायें और उन्होंने यह माना है कि इसके प्रयोग से सीखने वाले बालकों को अधिकाधिक उपायों से शिक्षण प्रदान करके उन्हें लाभ पहुँचाया जा सकता है। अध्यापक ही शैक्षिक प्रणाली में केन्द्रबिन्दु की भूमिका अदा करता है। यदि एक अध्यापक अपने छात्रों के समक्ष सही उदाहरण प्रस्तुत नहीं कर पाता तो वह एक अच्छे समाज का निर्माण नहीं कर सकता है। एक विद्यालय या समाज विना अध्यापक के ऐसे है जैसे आत्मा के विना शरीर हड्डियों व खून के विना एक कंकाल, आकृति के विना एक छाया।

डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार – ‘अध्यापक का समाज में स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक संस्कृतियों और तकनीकी कौशलों को पहुँचाने में मुख्य भूमिका अदा करता है और सभ्यता के दीपक को जलाए रखने में मदद करता है।’

समावेशात्मक शिक्षा प्रणाली में सामान्य, विशिष्ट एवं संसाधन अध्यापकों के बीच सहयोग एवं आपसी समझ होना आवश्यक है। समावेशी कक्षा के अध्यापक को 3R (Right, Role & Responsibilites) अधिकार, भूमिका एवं उत्तरदायित्व की जानकारी होना अत्यावश्यक है। एक समावेशी कक्षा में अध्यापक से अपेक्षा की जाती है कि वह विशिष्ट बच्चों के लिए विद्यालय में इस प्रकार से व्यवस्था करें कि सामान्य बच्चों के साथ समायोजन में उन्हें कोई कठिनाई न हो। चाहे कोई वाणी बाधित श्रवण-बाधित, बाल-अपराधी हो प्रत्येक बालक को अधिगम के समान अवसर मिलने चाहिए। जिस बच्चे को विशिष्ट घोषित कर दिया गया हो, उसे विशिष्ट अनुदेशन देना अध्यापक का उत्तरदायित्व है। विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं वाले बच्चे प्रत्येक अध्यापक की जिम्मेदारी होते हैं क्योंकि समावेशी शिक्षा में शिक्षण एक जटिल कार्य है, इसलिए प्रत्येक अध्यापक को अतिरिक्त समय, प्रशिक्षण संसाधन एवं समुदाय तथा अभिभावकों का सहयोग

मिलना चाहिए।

इसी प्रकार विद्यालय में सम्बल अध्यापक की नियुक्ति सामान्य अध्यापक के सहयोग हेतु की जाती है ताकि समावेशिक परिवेश में बाधित बच्चों की आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायता हो सके। सम्बल अध्यापक ऐसी विधियों का प्रयोग करता है जिससे सामान्य एवं विशिष्ट बालकों को एक साथ बिठाकर सफलतापूर्वक पढ़ाया जा सके।

सेवापूर्वाध्यापकानां जीवनशैल्यां स्वास्थ्यचेतनायाः महत्त्वम्

सुशीलकुमारः

शोधच्छात्रः

जीवनशैली स्वस्थजीवनयापनाय काचिद् नियन्त्रितानुशासिता व्यवहारोपयोगि-कार्यप्रणाल्याः प्रक्रिया वर्तते। यस्यां मानवानां दैनिक दिनचर्यायां कृतकार्याणां परिणामः वर्तते। जीवनशैली मानवजीवनस्यैका कला वर्तते। शिक्षया मानवजीवनस्य जीवनकलायाः। परिचयं भवति। जीवनं कीदृशं स्यात् जीवनस्य शैली कीदृशी स्यात्, जीवनं कथं जीवेम, एतादृशीभावना समस्तप्राणिषु वर्तते। मानवजीवनस्य विकासे जीवनशैलीनां विषये श्रीमद्भगवद्गीतायां श्रीकृष्णेन उक्तं यत् -

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।

न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परागतिम्॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 623)

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यवस्थितौ।

ज्ञात्वाशास्त्रं विधानोक्तं कर्मकर्तुमिहार्हसि॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 623)

अर्थात् यः मनुष्यः शास्त्रविधिं परित्यज्य स्वेच्छया स्वेच्छाचरणं करोति सः न च सिद्धिं प्राप्नोति न च सुखशान्तिं प्राप्नोति न च परं गतिं प्राप्नोति। जीवनशैलीविषये आयुर्वेदशास्त्रं वदति यत् -

‘धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्’

ईश्वरीयनियमपालनेन शरीरं रोगमुक्तं भवितुं शक्नोति। सेवापूर्वाध्यापकानां शैक्षिक क्षेत्रे आदर्शजीवनविकासाय स्वास्थ्यचेतनायाः आवश्यकता महत्वपूर्णा वर्तते। यतो हि कस्यापि राष्ट्रस्य निर्माण अध्यापकस्य हस्तौ वर्तते। यदि राष्ट्राध्यापकानां स्वास्थ्यं समीचीनं नास्ति, तर्हि राष्ट्रस्य भाविभविष्यस्योन्नतिः समीचीनं न भवितुं शक्यते। अतोऽत्र सेवापूर्वाध्यापकानां जीवनशैल्यां स्वास्थ्यचेतनाया वर्तमानशैक्षिकपरिप्रेक्ष्ये परमावश्यकं वर्तते। स्वास्थ्य चेतनायाः कोऽर्थः अस्य प्रश्नस्योत्तरं वर्तते यत् स्वास्थ्यं नाम शारीरिकमानसिकसामाजिकस्थितीनां पूर्णदशा भवति। अतः स्वास्थ्यजीवनस्य सः गुणः वर्तते यः व्यक्तिविशेषं सुखपूर्वकं जीवनार्थं सर्वोत्तमरूपेण योग्यं करोति।

स्वास्थ्यं व्यक्तिगतजीवनार्थमेव आवश्यकता नास्ति अपितु राष्ट्रजीवनस्यावश्यकं वर्तते । अतः देशस्य भाविनागरिकाणां स्वास्थ्यं प्रति जागरूकतायाः ध्यानं दद्यात् । अस्माकं संस्कृतसाहित्य स्वास्थ्यचेतनां प्रति ध्यानमाकर्षणमत्यधिकं दरीदृश्यते । यथा कुमारसम्भवे -

‘शरीरमाद्यंखलुधर्मसाधनम्’

आदौ शरीरं स्वास्थ्यं भवति चेत् अनन्तरं किमपि कर्तुं प्रभावामः । न केवलं शारीरिकविकासः अपितु मानवानां मानसिक-भावात्मक-चरित्रात्मक-सामाजिक-नैतिक विकासः भवितुमर्हति । तदर्थं समाजे प्रथमावश्यकता स्वास्थ्यमेव भवति । स्वास्थ्यविकासाय शारीरिकशिक्षासम्बन्धि केचन बिन्दवः प्रदश्यन्ते ।

1. स्वास्थ्यशिक्षा माध्यमेन प्राथमिकचिकित्सायाः प्रशिक्षणम् ।
2. स्वास्थ्यशिक्षा माध्यमेन व्याधीनां निराकरणम् ।
3. स्वास्थ्यशिक्षा माध्यमेन स्वास्थ्यविज्ञानस्य ज्ञानम् ।
4. स्वास्थ्यशिक्षा शारीरिकविकृतीनां निवारणे सहायिका भवति ।
5. स्वास्थ्यशिक्षा स्वास्थ्यसम्बन्धी उत्तमानां गुणानां निर्माणे सहायिका ।
6. स्वास्थ्यशिक्षया शारीरिक-मानसिक-नैतिक व्यावसायिकयोग्यता विकासः ।
7. सुखमयजीवनयापने सहायिका ।
8. स्वस्थशरीरे स्वस्थ मस्तिष्कनिर्माण सहायकः ।

स्वास्थ्यचेतनाविषये पतञ्जलियोगशास्त्रे अष्टांगयोगस्य स्थानं महत्वपूर्णं वर्तते । तद्यथा- ‘यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान-समाधि’ क्रमेण स्वास्थ्यचेतनाविकासे सहायको भवति । अस्मिन् चित्तवृत्तिनिरोधाय योगशास्त्रे बहूनि आसनानि वर्तन्ते यथा-पद्मासनं, मयूरासनं, शीर्षासनं भुजंगासनमित्यादयः ।

योगमाध्यमेन व्यक्तेः शरीरं, मनः, इन्द्रियादिस्थिरचित्ताः भविष्यन्ति । स्वस्थ्यचेतनायां योगः शारीरिकविकासे मानसिक विकासे नैतिकविकासे च सहायको भवति । उक्तं च यत्

योगेन चित्तस्य पदेन वाचा मलः शरीरस्य च वैद्यकेन ।

योपाकरोतं प्रवरं मुनीनां पतञ्जलिं प्राञ्जलरानतोऽस्मि ।

अतः योगेन सेवापूर्वाध्यापकानां जीवनशैल्यां स्वास्थ्यचेतनायाः विकासक्रमे महत्वपूर्णं योगदानं वर्तते । यदि सेवापूर्वाध्यापकानां आदर्शजीवनशैली वर्तते तर्हि छात्राणां मानसिकशारीरिकनैतिकचारित्रिकविकासः सम्यक्तया सम्भवति ।

सन्दर्भः

1. कुमारसम्भवम् ।
2. भट्टाचार्य, जी.सी. (2003) अध्यापकशिक्षा, आगराविनोद पुस्तक मन्दिर ।
3. शारीरिकशिक्षा ।
4. www.futuresamachar.com
5. <http://dailyhunt.in>

व्यक्तित्व विषये भारतीय स्वरूपं महत्त्वञ्च

विकासकुमारवपाण्डेयः

शिक्षाचार्य द्वितीयवर्षम्

व्यञ्जतेऽनयेति व्यक्तिः तस्याः भावः व्यक्तित्वम् वि उपसर्गपूर्वकं अञ्ज् धातोः क्तिन् प्रत्ययः तदनन्तरं त्व प्रत्यय कृते सति व्यक्तित्वं पदमिति निष्पन्नम्। जीवनस्य सर्वासु परिस्थिति जनानां विशिष्टाचरणस्य व्यवहारकौशल्याश्च प्रदर्शनं दृश्यते। सर्वैजनाः स्वकीयया अन्तःक्रियया कार्यपद्धतिं प्रभावयन्ति। सर्वासु परिस्थितिषु व्यक्तित्वमेकं महत्त्वपूर्णत्वेन निर्वहति। आत्मनः व्यवहारमन्येषां समक्षं उपस्थापयति। एतत् सर्वं तस्य व्यक्तित्वमेव सूचयति। व्यक्तेः चित्तवृत्तिभेदेन व्यक्तित्वस्य अनेकरूपता दरीदृश्यते।

व्यक्तित्वपदमाङ्गलभाषायाः (Personality) इति पदस्य समानार्थकं वर्तते। Personality शब्दः अयं लेटिनभाषायाः (Persona) मूलपदात् निष्पन्नम्। Persona इत्यस्य आङ्गलभाषायां मुखावरणं (Mask) इत्यस्मिन् अर्थे भवति। पुरा नरः स्वगृहीत पात्रानुगुणं मुखावरणं धारयन्ति स्म।

व्यक्तित्वस्य परिभाषा -

व्यक्तित्वम् आत्मानं प्रति इतरान् च प्रति क्रियमाणस्य व्यवहारस्य समग्रं चित्रं वर्तते। एतस्मिन् जनस्य यत्किमपि शारीरिकं मानसिकं संवेगात्मकं सामाजिकमाध्यात्मिकं वा भवति तत्सर्वं समाहितं भवति। एवं व्यक्तित्वपदस्य बाह्याकृते व्यवहाराभिव्यक्तेश्चत्यर्थं धारयति।

Personality is the total quality of on individuals behaviour-Woodworth.

मार्टन प्रिंस महोदयानुसारम् -

‘व्यक्तित्वं व्यक्तेः सर्वविधानां जन्मजातप्रवृत्तीनां, आवेगानां प्रवृत्तीनां, कामनानां मूलप्रवृत्तीनामनुभवेन च अर्जितानां तत्त्वानां योगो वर्तते।

व्यक्तित्वविषये भारतीय चिन्तनम् -

यद्यपि सर्वेऽपि जनाः अद्वितीयमेव भवन्ति एवञ्च सर्वेऽपि परस्परं भिन्नं भवन्ति। सर्वेषां पार्श्वे कश्चन गुण विशेषः अवश्यमेव भवति। कोऽपि मानसिकानि शारीरिकाणि उभयविधकारकाणि संयोजितानि। तेन व्यक्तित्वं हि अन्यान् प्रति विभज्यते। सर्वेषामेव व्यक्तित्वं पृथगेव भवति।

व्यक्तित्वस्वरूपविषये शास्त्रेषु विद्वद्भिः विवेचनं कृतो वर्तते। भारतीय वाङ्मये व्यक्तित्वस्याध्ययने आत्मनः स्वस्य च केन्द्रीय स्थानं वर्तते। दर्शनशास्त्रे आत्मस्वरूपं विवेचनं वर्तते। उपनिषत्सु निरूपिताः अन्नमयादि पञ्चकोषाः शरीरात् आत्मानं प्रति उत्तरोत्तर व्यक्तित्वस्य परिचायकाः वर्तन्ते।

प्रथमोऽन्नमयकोषः शरीरस्य सर्वोपरिकोषो वर्तते मानवस्य स्थूल शरीरमन्नमय कोशः

वर्तते ।

द्वितीयः प्राणमयकोशः जीवनस्य शक्तेर्वासनाभ्यश्चौतप्रोतो वर्तते । पञ्चकर्मन्द्रियाणां विवरणं प्राणमयः कोशः वर्तते । तृतीयः मनोमय कोशः – अस्मिन् आत्मनः मनः स्वरूपं विविच्यते । उक्तं हि यत्–

‘मन एव मनुष्याणां कारणे बन्धन मोक्षयोः’

इतिधिया सर्वाङ्गं पूर्णव्यक्तित्वस्य मनोमय सोपानस्य आधारः मन एव वर्तते । चतुर्थः विज्ञानमयकोशः – अस्मिन् व्यक्तित्वे आध्यात्मिकबुद्धिः उपस्थिता भवति । बुद्धि संयुक्तानि पञ्चसंख्याकानि ज्ञानेन्द्रियाणि विज्ञानमयकोशनाम्ना अभिधीयन्ते । पञ्चमः आनन्दमयकोशः – अत्र भोगानां शान्ते सति बुद्धिः वृत्तिः निद्रायाः रूपे विलीना जायते सैव आनन्दमयकोशः वर्तते । एतस्यार्थो भवति– आनन्द प्राचुर्यम् । व्यक्तित्व विषये श्रीमद्भगवद्गीतायां सत्त्वरजस्तमो गुणभेदेन मानवाः सात्त्विकाः राजसाः तामसाः इति त्रिधा विभाजनं वर्तते ।

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृति सम्भवाः ।

निवध्नन्ति महाबाहो देहे देहिन मव्ययम् ।

त्रयोऽपि गुणाः सत्त्वरजस्तमोगुणाश्च एते प्रकृत्या एव जीवात्मा निवध्नन्ति ।

केचन सत्त्व गुण प्रधानाः भवन्ति । यथा –

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ।

सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञान सङ्गेन चानघम् ।।

केचन रजोगुण प्रधानाः भवन्ति । यथा –

रजोरागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्

तन्निवध्नाति कौन्तेय कर्म सङ्गेन देहिनम् ।।

केचन तमो गुणप्रधाना भवन्ति । यथा –

तमस्वज्ञानहं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।

प्रमादालस्य निद्राभिस्तन्निवध्नाति भारत ।।

इतोऽपि आयुर्वेदशास्त्रे वातपित्तकफरूप धातुत्रय पुरस्कृत्य व्यक्तित्वभेदाः वर्तन्ते । ज्योतिषशास्त्रे जन्मराश्यनुगुणं व्यक्तित्वं द्वादशधा कल्पयन्ति ।

एवं प्रकारेण भारतीयवाङ्मये व्यक्तित्वस्य स्वरूपः तदन्तरर्निहितगुणाश्च वर्तते ।

व्यक्तित्वस्य महत्त्वम् –

संसारेऽस्मिन् व्यक्तेः प्रतिष्ठा तस्य व्यक्तित्वं समाश्रिताः । अनादरे प्रतिष्ठा वा व्यक्तित्वाधारेण भवति । लोकव्यवहारं दृष्ट्वा अवगन्तुं शक्यते । व्यक्तित्वप्रत्यायकाः महत्त्वसाधकाः पञ्चवकारादि शब्दाः –

‘वस्त्रेण वपुषा वाचा विद्यया विनयेन च’

व्यक्ते वस्त्राणि दृष्ट्वा सम्मानं प्राप्नोति क्वचिद् अपमानं । समीचीनं शुभ्रवस्त्राञ्चितः व्यक्तिः क्वचिद् मूर्खोऽपि प्रथमदर्शने आदर एव भवति वस्त्रं व्यक्तेः व्यक्तित्व परिपोषणे आद्यमिति अङ्गीकुर्वन्ति । मनोवैज्ञानिकाः ततः रूप वर्णादियुक्तं शरीरं व्यक्तित्व प्रभावोत्पादकं भवति ।

रूपलावण्यवर्णनानि लोके काव्ये च अस्य महत्त्व प्रत्यायकानि। कृशत्वं, पङ्गुत्वं, अन्धत्वादि दोषैः आत्मनि न प्रत्ययः इति व्यवहारे लज्जात्वादि दोषाः समापतन्ति। क्वचिद् विकृतयः शरीरस्य मानसिकां स्वास्थ्यं जनयति इति लोकव्यवहारे प्रत्यक्षः।

ततः वाचः व्यक्तित्वं परिचायकेषु विशिष्य स्थानं भजते। वाग्मितायाः अभावे सद्यः वस्त्रवपुभ्यां प्रतिष्ठा लाभे शनैः शनैः अनादरभावः समुपजायते। अत एवोक्तं भर्तृहरिणा-

‘विभूषणं मौनमपण्डितानाम्’

भारतीय दर्शनम्

शशिभूषण उपाध्याय

शिक्षाचार्य द्वितीय वर्ष

भारतीय दर्शन हि अतीव पुरातनम् व्यापकं मौलिकञ्च शास्त्रम्, इदं खलु तत्त्व ज्ञानम्, अध्यात्मविद्या, आन्वीक्षिकी ब्रह्मविद्या, मीमांसा सम्यक् दर्शनमित्यादिभिः विविधैरभिधानैरभिधीयते परं सर्वेष्वप्येतेषु अस्य गाम्भीर्यं वैशिष्ट्यञ्च अविच्छिन्नतया संसूचितमित्यत्र नास्ति संशीति लेशः अस्य रहस्यमयस्य निगूढतमस्यपपञ्चस्य समाधानपथप्रदर्शकं शास्त्रमिदं किल दर्शनमित्यभिधीयते तत्र महर्षिणा दिव्यचक्षुषां साक्षात्कृत धर्मणां तपोपूतया धि ष्याऽविर्भूतं सत्याऽसत्य निकषलक्षण सकल पदार्थ जातस्यालोचनपरं ज्ञानमेव दर्शनम्। यदा लौकिक चिन्ता विमुक्तः विचिन्त्या कोऽहं? कुतोऽहम्? कस्मादहम्? कुतस्त्वमायातः? इत्यादीन् गूढ प्रश्नान् एतादृश चिन्तन मनन परिणतिभूतमेवेदं दर्शनशास्त्रम्।

उक्तञ्च - आत्मा वा रे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो, मन्तव्यो निदिध्यासितव्य इति आत्मनो वारे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेदं सर्वं विज्ञातम्भवति।

सम्यक्दर्शन सम्पन्नः कर्मभिर्ननिबध्यते, दर्शनेन विहीनस्तु संसारं प्रतिपाद्यते॥

जीवनस्य चरमोद्देश्यं प्रति संप्रेरणं तत्र च श्रेयः प्रेयसो ज्ञानकर्मणो अध्यात्मभूतयोः आदर्श व्यवहारयोश्चानवद्यं संतुलनं भारतीयदर्शनस्य प्राणभूतम्।

आधिभौतिक आधिदैविक आध्यात्मिक त्रिविधतापेभ्यः सन्तप्यमानानां तनुभूता निरति शयानन्दरूपं भोक्षमार्गं प्रदर्शनमेव भारतीयदर्शनानां परमप्रयोजनम्

तर्हि प्रथमतः दर्शनं नाम किं इति जिज्ञासायां-

- ◆ दृश्यते ज्ञायते विचार्यते अनेन इति दर्शनम्।
- ◆ दृश् धातोः (दृशिरप्रेक्षणे) ल्युट् प्रत्यये सति दर्शन शब्दः निष्पन्नः।
- ◆ दृश्यते अनेन इति दर्शनम्।
- ◆ दृश्यते चाक्षुष प्रत्यक्षं क्रियते अनेनेन्द्रियेण तद् दर्शनम्।
- ◆ दर्शनं शब्दो नेत्र पर्यायः।
- ◆ दृश्यतेऽनेनेति दृशे करणे ल्युटि दर्शनम् नयन् भावे ल्युटि चाक्षुषिज्ञानम् (शब्दकल्पद्रुमे)।
- ◆ दृश्यते यथार्थतत्त्वमनेनेति शास्त्रं दर्शनमिति -(मेदिनी कोशः)।
- ◆ दर्शनञ्च ज्ञानकरणञ्च दृशेज्ञान सामान्यार्थकत्वात्।

- ◆ दृश्यते निश्चीयते यत् तद्दर्शनमिति कर्मणि ल्युट् व्याख्येयः।
- ◆ दर्शन शब्दस्य आंग्लपदं भवति Philosophy इति पदं यूनानी शब्द Philosophi इति पदद्वयात् निष्पन्नम् यस्यार्थः भवति love of wisdom अर्थात् ज्ञानासक्तिः, आस्तिक नास्तिक भेदेन दर्शनं द्विविधं।
- ◆ दर्शनं नाम - आत्मा परमात्मा, जीव-जगत, जन्म-मृत्यु, तथा मोक्षप्रकृति इत्यादिना रहस्यं येन ज्ञायते तद्दर्शनम्।

परिभाषा -

प्लेटो - यः जनः ज्ञानप्राप्तये नूतनवार्ता अन्वेषणे रुचिं प्रकटयति तथा सन्तुष्टः न भवति सः दार्शनिकः।

सुकरात - ज्ञानस्य पिपासवः दार्शनिकाः।

डा. राधाकृष्णन् - दर्शनं नाम अन्वेषणं यत् तर्कपूर्णं यच्च अन्वेषणं यथार्थेन वास्तविकतया सह संबंधः भवति।

जानड्यूवी - ज्ञान प्राप्तीकरणं यत् जीवनस्य मार्गं प्रभावयति।

प्लेटो - पदार्थानां यथार्थ स्वरूपस्य ज्ञानप्राप्तिः दर्शनम्।

अरस्तु - दर्शनमित्थं विज्ञानम् यत् परमतत्त्वस्य यथार्थस्वरूपस्य निरीक्षणपरीक्षणं करोति।

काण्ट - दर्शन-बोध क्रियायां विज्ञानं तथा तस्या लोचना।

फिक्टे - दर्शनं ज्ञानस्य विज्ञानं।

भारतीय दर्शन सम्प्रत्ययः

- ◆ वस्तुतः दुःखनिवृत्तेः उपायाः दर्शने सन्ति।
- ◆ सृष्टि प्रारम्भात् एव दुःखमस्ति तस्य उपायं दर्शने एव अतः इत्थमनुमीयते यत् भारतीयदर्शनानामुत्पत्तिः सृष्टिना सहाभवत्।
- ◆ भारतीय दर्शनस्य एकमात्रं लक्ष्यं दुःखस्य परमनिवृत्तिः अथवा परमानन्दस्य प्राप्तिः
- ◆ भारतीय दर्शनेषु महत्वपूर्णं प्रबल उपकरणः आत्मा अनात्मा, जीव ब्रह्म प्रकृतिः पुरुष, जीवन-मरण, सत्य धर्म मोक्ष तथा मानव जीवनस्य परमोद्देश्यस्य विवेचना वर्तते।

भारतीय दर्शनस्य विशेषता

- ◆ भारतीय दर्शनस्य मूलः अत्यन्तं प्रबलं एवं आन्तरिकं (गहरी) वर्तते यत् पाश्चात्य दर्शनस्य अयं सम्मुखे शून्यं प्रतिभाति।
- ◆ भारतीय दर्शनस्य दृष्टिकोणः व्यवहारिक पक्षः आन्तरिकश्च वर्तते। न केवलं बौद्धिक जिज्ञासायाः तृप्तिः (दूरदृष्टिः, भविष्य दृष्टि, अन्तर्दृष्टि)।
- ◆ आत्मनः अस्तित्वे विश्वासः (चार्वाक, बौद्धो विहाय)।
- ◆ कर्मवादस्योपरि विश्वासः, पुर्जन्मोपरि विश्वासः (चार्वाक बौद्धो विहाय)।
- ◆ भारतीय दर्शनस्य लक्ष्यं मोक्षप्राप्तिः
- ◆ आत्मनियंत्रणे एकाग्र चित्तने ऋतौ विश्वासः, प्रगतिशीलताञ्च।

भारतीय दर्शनस्य भेदः

आस्तिक

1. सांख्य - कपिलः
2. योग - पतंजलिः
3. न्यास - गौतमः
4. वैशेषिक - कणादः
5. पूर्व मीमांसा -
6. उत्तर मीमांसा -

नास्तिक

1. चार्वाक - कणादः
2. बौद्ध - बुद्धः
3. जैन - महावीरः

कालक्रमेण भारतीय दर्शनस्य विकासः - प्राचीन कालात् एव भारतीय जनमानसे दार्शनिक चिन्तनस्य अविच्छिन्नाः धाराः प्रवाहिता जायते स्म। भारतीय दर्शनस्य दृष्टेः अत्यन्त उदार एवं व्यापकीभूता कारणात् भारतीय दर्शनस्य प्रत्येकः शाखा अत्यन्तः व्यापकः समृद्धः चास्ति तर्हि भारतीय दर्शनस्य ऐतिहासिक विकासस्य क्रमं निम्न चरणेषु विभक्तुं कर्तुं शक्यते।

(1) वैदिककालः (Vedic Period) - (1) पूर्व वैदिककालः (2) उत्तर वैदिककालः

(2) महाकाव्यकालः (Epic Period)

(3) सूत्रकालः (Sutra Period)

(4) वर्तमान अथवा समसामयिक काल (Modern and Contemporary Period)

(१) पूर्ववैदिककालः - अयं कालः भारतीय दर्शनस्य आरंभिकः प्राचीनः कालास्ति अस्मिन् काले वेद उपनिषत्सु रचना जाता भारतस्य सम्पूर्ण दर्शनं वेदानां उपनिषदानां विचाराणां बहु प्रभाविता जाता। वेदाः अर्चाणां प्राचीनतमा साक्ष्याणां एव नास्ति अपितु सम्पूर्णभारत एवं यूरोपीय भाषायाः प्राचीनतमम् साहित्य रूपे समादृतम् अस्ति। अयं रचनाकालः मैक्समूलर 1200 वर्ष ई.पू., तिलकः 6000 वर्ष पूर्व, याकोबी 4500 वर्ष ई.पू. स्वीकरोति। मौखिक परम्परया प्राप्तवाकरणेन समस्त वैदिक साहित्यस्य कृते श्रुति शब्दस्य प्रयोगः कृतः।

(२) उत्तरवैदिककालः - अयं वेदविरोधी कालः वर्तते। भारतीय दर्शनेषु- 6 शताब्द्यां पूर्व कालः वस्तुतः वैचारिक क्रान्तेः कालं मन्यन्ते। अस्मिन् समये अनेकाः महापुरुषाः एवं मनीषिणां चिन्तनस्योपदेशं कालं आसीत्। काचित् सामाजिक परिवर्तनानि अपि परिलक्षितानि जातानि। समाजस्य काचित् वर्गाणां स्थितिं एव दयनीयाऽसीत् कष्ट निवारणेः धार्मिक जिज्ञासवः अधिकाः आसन्। अत्रत्य एव धर्म दर्शनस्य उहः प्रारंभः अभवत्। जैन बौद्ध धर्मस्य विचाराणां अभिनव दर्शनेन सह अवैदिक धर्म दर्शन परम्परायाः प्रारम्भः अजायत। अयं यज्ञ कर्मकाण्ड, ईश्वरः, आत्मा वेदस्य विरुद्धः आसीत्। अयं निरीश्वरवादी एवं क्रियावादी विचाराणां परिपोषकाः आसन् अस्य कृते दार्शनिक निष्ठायाः मूल आधारः संसारवादः वा कर्मवादः / पुनर्जन्म सिद्धांताः आसन् अयं कारणे समाजे जनसामान्यै जैन बौद्धानां विचाराणां लोकप्रियता अवर्द्धयन्।

महाकाव्य काल - अस्मिन् काले औपनिषदिक दार्शनिक विचारधारा विभक्ता वैचारिक

साम्प्रदायिक का उपाधाराः स्वरूपः ग्रहणं अकुर्वन् आसीत्, बौद्ध, जैन, शैव, शाकाः विभिन्नाः सम्प्रदाये परिणतः स्व स्व मत पंथानां प्रसार प्रचार कार्यं तत्परा अजायन्ते स्मः अयं समाजाः तत्कालीन दार्शनिक सम्प्रदायाः आमनन्ते एवं समाजस्य कुरीतीनां दूरी करणार्थं समाज सुधारक रूपेण ख्यातवन्तः।

सूत्रकाल - अयं भारतीय दर्शनस्य विकासस्य महत्वपूर्ण कालं आमनन्ते। ई.पू. 400 ई. 150 ई.पू. यावत् मौर्यकाले दार्शनिक सूत्र साहित्यः स्वविकासं शिखरे अप्राप्नुतः। अस्मिन् काले गौतम महर्षेः न्यायसूत्राणां, कणाद महर्षेः वैशेषिक सूत्राणां जैमिनीमहर्षेः मीमांसा सूत्राणां रचनां अकरोत्, कपिल महर्षेः सांख्य सूत्राणां, पतञ्जलेः योग सूत्राणां एवम्प्रकारेण विभिन्न दार्शनिक विचारधारायां रचना अभवत्, बादरायण व्यासः वेदान्त सूत्राणां रचना कृता। अस्मिन् युगे विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायानां अध्यात्म विषयक चिन्तन सूत्ररूपेण निबद्धा जाता।

व्याख्याकाल - भारतीय दर्शनस्य अयं युगः स्वर्णयुगः अकथ्यते। अस्मिन् काले दर्शन ग्रन्थानोपरि अनेकाः भाष्याः, व्याख्या, वार्तिकः एवं टीकानां लिखिता वर्तते। सूत्राः संक्षिप्ताः भवन्ति दुर्बोधाः भविष्यन्ति। अतएव अयं व्याख्या कृत्वा सुबोधं भाष्यं अरचयत् विद्वांसः उक्तञ्च -

सूत्रार्थो वर्ण्यते येन पदैः सूत्रनुसारिभिः।

स्वपदानि च वर्ण्यन्ते भाष्यविदो विदुः॥

350 ई.पू. यावत् व्याख्या काले भारतीय षड् आस्तिक दर्शनानां मूलग्रन्थे सूत्राणां वृत्ति भाष्याः विभिन्न टीकाः लिखिता जाता। यथा कुमारिल भट्टः एवं प्रभाकरेण मीमांसा सूत्रे मीमांसा भाष्यः लिखिता, शंकरः एवं रामानुजेः वेदान्तसूत्रे वेदान्त भाष्य वात्स्यायनः न्याय सूत्रे न्यास भाष्य, प्रशस्तपादः वैशेषिक सूत्रे वैशेषिक भाष्यः एवं विज्ञानभिक्षुः सांख्य सूत्रे सांख्यप्रवचनभाष्यः लिखिता वर्तते। एवंप्रकारेण व्यास महर्षेः योगसूत्रे योगभाष्यः लिखिता। एवं अतिरिच्य बादरायणः वेदान्त सूत्राणां अनेका प्रमाणिकाः भाष्याः शंकराचार्यः, रामानुजः, वल्लभाचार्य, मध्वाचार्य, निम्बार्काचार्य, कुमारिल भट्ट, वाचस्पति मिश्रः, उदयन, जयन्तभट्ट इत्यादि दार्शनिकाः विचारकाः अयं काले अभवत् अयं 250 ई.य. यावत् 1450 ई.स. पर्यन्तं व्याख्या कालः आमनन्ते स्म।

अन्य सम्प्रदायाः

- (1) आचार्य शंकर - सर्वसिद्धान्तसंग्रह - 10 दर्शनानि
 - (2) जिनदन्त सूरि - षडदर्शन समुच्चय - 6 दर्शनानि
 - (3) माधवाचार्य - सर्वदर्शनसंग्रह - 16 दर्शनानि
 - (4) जयन्त भट्ट - 6 आस्तिक, 6 नास्तिक, 12 दर्शनानि
- पाश्चात्य दर्शनानि अनुसरन् भारतीय दार्शनिकाः-
- (1) प्रकृतिवादः - दयानन्द, टैगोर, मालीय, गांधी, अरविन्द
 - (2) आदर्शवादः - विवेकानन्द (न्याय, वैशेषिक)

(3) प्रयोजनवादः – चार्वाक

(4) यथार्थवादः – चार्वाक (व्यवहार, अस्तित्व, भौतिक, समाजवाद, मार्क्स)

संदर्भ ग्रंथाः

1. सर्वदर्शन संग्रह – मध्वाचार्य
2. भारतीय दर्शन – जगदीशचंद्रमिश्र, चौखम्बा सुरभारती
3. भारतीय दर्शन – बलदेव उपाध्याय, विश्वविद्यालय प्रकाशन
4. भारतीय दर्शन – वाचस्पति गौरोला
5. भारतीय दर्शन – ममता मिश्रा, कला प्रकाशन वाराणसी
6. संस्कृत शास्त्रमंजूषा – उदयशंकर झा, चौखम्बा
7. संस्कृत वाङ्मयान्तप्रवेशिका – सोमनाथ दास
8. संस्कृत परम्परागत विषय – शत्रुघ्न त्रिपाठी

ICT मध्ये शिक्षकस्य भूमिका

सुजाताराणी दास

शिक्षाचार्यः, द्वितीयवर्षम्

शिक्षा – शिक्षा समाजस्य एका सतत गत्यात्मकी प्रक्रिया वर्तते। मानवान् उत्तमव्यक्तित्वरूपेण निर्मातुं साहाय्यं करोति शिक्षा। व्यक्तेः अन्तर्निहितक्षमतानां, व्यक्तित्वातुं च विकासाय शिक्षा एका प्रक्रियारूपेण परिचिता। संस्कृतेन 'शिक्ष' धातोः शिक्षाशब्दः निष्पद्यते। अस्यार्थः शिक्षणप्रशिक्षणाधिगमः च। आजीवनं प्रचाल्यमाना प्रक्रिया एव शिक्षा। English Language मध्ये 'Education' इति उच्यते। अस्य शब्दस्य उपरि प्राचीनाः, अर्वाचीनाः, पाश्चात्याश्च बहवः विद्वांसः स्वस्य मतानि प्रतिपादितवन्तः। तन्मध्यतः एका परिभाषा प्रतिपादिता। यथा–

महात्मागान्धीमहोदयः उक्तवान् यत् – शिक्षा बालकानां सर्वाङ्गीणविकासं करोति।”

अर्थात् बालकानां सर्वाङ्गीणविकासं शिक्षा करोति। परन्तु शिक्षायाः संचालनं, प्रचालनं, निर्देशनं, मार्गदर्शनं च शिक्षकः बालकानां कृते शिक्षया करोति। शिक्षकः कथं शिक्षायाः संचालनं करोति इति? शिक्षकः सम्प्रति ICT माध्यमेन शिक्षायाः संचालनं करोति इति।

शिक्षकः – शिक्षाप्रदानं यः करोति स एव शिक्षकः। शिक्षिका शब्दः शिक्षकस्य स्त्रीलिङ्गरूपं भवति। शिक्ष्” धातुतः संस्कृतेन शिक्षकशब्दस्य निर्माणं भवति। शिष्यस्य मनसि शिक्षणार्थं यः इच्छाशक्तिजागरणे साहाय्यं करोति स एव शिक्षकः शिक्षकेण व्यक्तेः भविष्यं निर्मितं भवेत्। व्यक्तीनां गुणेषु सुपरिवर्तनम् आनेतुं शिक्षकः सक्षमः भवति। प्राचीनभारतीयसमाजे शिक्षकस्य स्थानं भगवत्सदृशम् आसीत्। शिक्षकः सदैव स्वस्य छात्राणां मार्गदर्शनं करोति। शिक्षकस्य स्थानं सर्वश्रेष्ठं वर्तते। शिक्षकः ब्रह्मसदृशः भवति। English भाषायां शिक्षकशब्दः "Teacher" इति उच्यते। यथा–

"A teacher is a person who teaches, usually as a job at a school or

similar institution.

T - Terrific / Tolerant / Thoughtful

E - Energetic

A - Able / Awesome / Amazing

C - Chherful / Caring

H - Hardworking / Helper / Helpful

E - Enthusiastic / Excellent / Encouraging

R - Remarkable / Responsible

शिक्षकस्य English भाषायां काश्चित् परिभाषाः प्रतिपादिताः। यथा-

1. A good teacher is a determined person. (Gilbert Highet)
2. Success is not a good teacher, failure makes you humble. (Shah Rukh Khan)
3. Teaching is a very noble profession that shapes the character, Caliber and Future of an individual. If the people remember me as a good teacher, that will be the biggest honour for me. (A.P.J. Abdul Kalam)

शिक्षकशब्दस्य पर्यायवाची शब्दः गुरुः अपि भवति। अस्य संस्कृते एकः श्लोकः प्रसिद्धः। यथा -

दुग्धेन धेतुः कुसुमेन वल्ली
शीलेन भार्या कमलेन तोयम्।
गुरुं विना भाति न चैव शिष्यः
शमेन विद्या नगरी जनेन॥”

ICT (सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी)

ICT पूर्ण नाम वर्तते Information & Communication Technology. हिन्दां सूचना एवं सम्प्रेषणतकनीकी” इत्युच्यते। ICT सम्प्रति शिक्षाजगतः एका क्रान्तिकारि-आधारशिलाप्रक्रिया वर्तते। ICT द्वारा शिक्षणं रोचकं, सक्रियं, जिज्ञासुपूर्णं भवति। दैनंदिनजीवनेऽपि ICT प्रयोगः अधिकाधिकं भवति। ICT प्रयोगः भारते 2004 तमे वर्षे राष्ट्रियमाध्यमिकशिक्षाऽऽभियानद्वारा प्रारम्भो अभवत्।

मनसि उत्पन्नविचाराणाम् आदान-प्रदानप्रक्रिया एव सम्प्रेषणम् इति उच्यते। सम्प्रेषणशब्दस्य उत्पत्तिः लैटिनभाषायाः "Communes" इति शब्दतः अभवत्। मनुष्यः स्वस्य दिनचर्यायाः, विचाराणां, भावानाम् आदानं प्रदानं च सम्प्रेषणेन करोति। अध्यापकः कक्षाशिक्षणे छात्रैः सह अन्तःक्रियां प्रक्रियां सम्प्रेषणेन करोति।

जीस्टमहोदयानुसारेण सम्प्रेषणम् एका सामाजिकप्रक्रिया वर्तते। व्यक्तिः स्वस्य भावानां विचाराणां प्रेषणं प्रतीकरूपेण यथा प्रक्रियया सम्प्रेषितं करोति, सैव प्रक्रिया सम्प्रेषणं इति उच्यते।”

हावलैंडमहोदयानुसारेण - व्यक्तेः विशेषात्मकभावानां विचाराणाम् आदानप्रदानं सम्प्रेषणेन भवति। सम्प्रेषितध्यानाम् आकृतिः प्रकृतिः च शाब्दिकप्रतीकात्मकरूपेण सूच्यते। सा सूचितप्रक्रिया सूचना इति उच्यते।

होलैंडमहादेयानुसारेण - एकस्मिन् समये सर्वेषु क्षेत्रेषु आदानप्रदानार्थं सम्प्रेषणे यदा प्रविधिप्रयोगः भवति। तदा सा प्रक्रिया ICT इत्युच्यते”

ICT प्रक्रिया -

सूचनासम्प्रेषणप्रक्रियायाः कैश्चित् प्रकाराः निम्नवर्णिताः। यथा -

1. स्रोतः
2. सन्देशः
3. Encoding
4. माध्यमः
5. Decoding
6. सन्देशग्रहणकर्ता
7. पृष्ठपोषणम्।

ICT मध्ये शिक्षकस्य भूमिका -

1. शिक्षणप्रक्रियायां शिक्षकस्य भूमिका महत्वपूर्णा वर्तते।
2. ICT उपयोगेन शिक्षणप्रक्रिया रुचिकरी भवति।
3. ICT उपयोगेन शिक्षकः पाठ्ययोजनानिर्माणं कृत्वा अध्ययनं प्रति छात्राणां ध्यानं केन्द्रीकरणं करोति।
4. छात्रान् लक्ष्यप्राप्तये अध्यापकः ICT प्रयोगं कृत्वा अध्ययनप्रक्रियां सरलीकरणं कृत्वा अध्यापयति।
5. ICT द्वारा शिक्षकः स्वस्य अध्यापनं तथा शिक्षणपद्धतिं परिवर्त्य नूतन शिक्षणपद्धतिमाध्यमेन छात्राणां साक्षरताप्राप्तौ सहायतां करोति।
6. शिक्षार्थिनां ज्ञानार्जनहेतुः वातावरणस्य निर्माणे ICT शिक्षकस्य सहायतां करोति।
7. ICT शिक्षणस्य एकम् उपकरणं वर्तते। एतस्य उपकरणस्य माध्यमेन शिक्षकः स्वस्य कक्षाशिक्षणं प्रभाविपूर्णः कर्तुं शक्नोति।
8. शैक्षणिकपद्धतीनां सुदृढीकरणं शिक्षकः ICT उपयोगेन प्रभाविपूर्णं कर्तुं शक्नोति।
9. ICT द्वारा शिक्षकाणां शिक्षणकौशलविकासः भवति।
10. परीक्षणस्य मूल्याङ्कने ICT पद्धतिः शिक्षकस्य सततं साहाय्यं करोति।
11. ICT देशविदेशस्य संगणकसाक्षरतावृद्धिकरणेन सह शिक्षकाणां व्यवसायिकविकासं कर्तुं साहाय्यं करोति।
12. ICT माध्यमेन स्वस्य अधिगमप्रक्रियाविकासेन सह क्षमतायाः, ज्ञानस्य अभिवृद्धिं, कौशलानां विकासम् अध्यापकः करोति।
13. प्रशासनिककार्यनिर्धारणे, प्रस्तुतीकरणे च ICT मध्ये शिक्षकस्य भूमिका महत्वपूर्णा वर्तते।
14. शिक्षकः ICT प्रक्रियया संगणकस्याधारेण सूचनानां सम्प्रेषणं झटिति एव कर्तुं शक्नोति।
15. व्यवसायिकविकासः तथा शिक्षकस्य आत्मविश्वासस्य विकासः सम्प्रतिः ICT द्वारा वर्द्धते।
16. शिक्षकाणां विषयज्ञानं ICT उपयोगेन प्रभावितं भवति।

17. ICT द्वारा शिक्षकस्य व्यवसायिकविकासः भवति।

18. छात्राणां क्षमताविकासे अध्यापकः ICT प्रक्रियायाः उपयोगं कक्षायां करोति।

निष्कर्षः -

शिक्षायाः विकासः शिक्षकस्य प्रयोगात्मककार्यकौशलानां माध्यमेन भवति। सम्प्रति छात्राणां क्षमतानां, योग्यतानां, कौशलात्मकज्ञानानां विकासाय शिक्षकः सततं प्रचेष्टितो भवति। अतः शिक्षायाः, शिक्षार्थिनां, शिक्षणपद्धतीनां, प्रशासनिककार्यकौशलानां विकासाय शिक्षकः विद्यालयीयस्तरे, महाविद्यालयीयस्तरे, विश्वविद्यालयीयस्तरे तथा सम्पूर्णशिक्षास्तरे ICT प्रक्रियायाः प्रयोगं करोति। ICT माध्यमेन शिक्षकः शिक्षायाः गतिं नवाचारं च प्रति अग्रेसर्तुं साहाय्यं करोति।

नेतृत्वम्

कुमारी पूनम

शिक्षाचार्य द्वितीयवर्षम्

मानवेषु एतादृशो जनो नूनमेव भवत्येवयस्य मनश्शारीरिकं स्वास्थ्यं सामान्यजनेभ्यः अत्युत्तमं भवति। समानवानां समूहस्य समुदायस्य वा नेतृत्वं स्वीकरोति। नेता तु मानवसमुदायस्य सामाजिकदृष्ट्या सर्वाधिकी व्यवस्थितो भवति। सोऽवगच्छति यत् केन सह व्यवहारः करणीय” इति। नेतृत्वं मनोवैज्ञानिकैः अन्तर्दृष्टिरूपेण स्वीक्रियते। नेतुः शारीरिकं स्वास्थ्यमपि अत्युत्तमं भवति। कस्मिंश्चित्कार्ये स सिद्धहस्तो भवति। सर्वेषां कृते नेतुः व्यवहारो मैत्रीयुतो भवति। सामाजिककार्ये तस्य महती रुचिर्भवति। परेषां हितचिन्तने संलग्नः स भवति। अनवरतं कर्मण्येवरतः स तिष्ठति। प्रायः तस्य सामाजिकस्तरः उच्चतमो भवति। बहिर्मुखिव्यक्तित्वं स धारयति। सामाजिकव्यवस्थायां नेतुः तु नेतुः कार्यक्षमतायाः बोधकं पदं वर्तते। प्रचलित भाषायां कस्यापि राजनैतिकदलस्य सक्रियकार्यकर्ता ‘नेता’ इति मन्यते। यस्य प्रभावः अन्येषां जनानाम् अपेक्षया अत्यधिको भवति। अन्येषां कृते तस्य व्यवहारः आदर्शभूतो भवति।

नेतृत्वपरिभाषाः

अतीवव्यापकं वर्तते नेतृत्वपदम्। नेतृत्वपदं व्याख्यातुमनेके विद्वांसः प्रयासं कृतवन्तः। तेषां प्रयासाः नेतृत्वपरिभाषासु संरक्षिताः वर्तन्ते तद्यथा-

पिगर्समहोदयानुसारम् -

नेतृत्वं तादृशी अवधारणा वर्तते, या व्यक्तित्वस्य तथा च पर्यावरणस्य सन्दर्भे प्रयुज्यते। अनया तस्य स्थितेः वर्णनं कर्तुं शक्यते। यस्यां व्यक्तित्वेन समानमुद्देश्यमाप्तुम् अन्येषां नियन्त्रणं निर्देशनञ्च क्रियते” इति।

लेपियर-फ्रांसवर्थ इत्यनयोः मतानुसारम् -

नेतृत्वमेतादृशो व्यवहारो वर्तते, येऽन्येषाम् अपेक्षया निजस्य व्यवहारम् अधिकाधिकं प्रभावयति इति।

ब्रिटमहोदयस्य नेतृत्व सन्दर्भे अभिमतम् -

नेतृत्वं परस्परोत्तेजना एका प्रक्रिया वर्तते या कस्यचित् सामान्योद्देश्यस्य अन्वेषणे संलग्ना

जनशक्तिं नियन्त्रयति” इति।

नेतृत्वलक्षणानि

नेतृत्वलक्षणानि विविधैः मनोविद्भिः निरूपितानि वर्तन्ते। कैश्चन विद्वद्भिः दशलक्षणानि, अष्टादश, अष्टाविंशति वा लक्षणानि निरूपितानि। एतेषु लक्षणेषु विद्वत्सु साम्यमपि वर्तते। तद्यथा-

1. प्रज्ञा -

नेतृणां प्रज्ञापरीक्षणेन ज्ञायते यत् नेतुः बुद्धिलब्धिः तस्य अनुयायिजनानां बुद्धिलब्धिभ्यः अत्यधिका भवति। नेता तु स्वस्यानुयायिभ्यः पटुः निपुणश्च भवति। व्यवहारेऽपि नेतुः प्रज्ञागुणः स्फुट एव दृश्यते।

2. शारीरिकलक्षणम् -

नेतुरुच्छ्रायः आकृतिः भारश्च सामान्येभ्यो जनेभ्यः अधिकं भवति। एतल्लक्षणस्य अपवादः अपि व्यवहारे दृश्यते। यतोहि सङ्गीतज्ञाः नेतारश्च स्वप्रतिभया एव स्वसमूहस्य नेतृत्वमङ्गी कुर्वन्ति। तेषां भारदिलक्षणं नापेक्षितं भवति। तस्य स्वास्थ्यं तु अत्युत्तमं भवति।

3. सामाजिकता -

सामाजिकतायाः नेतृत्वस्य च घनिष्ठः सम्बन्धो भवति। अनेनैव गुणेन नेतारः स्वायुयायिजनानां व्यवहारान् मनोभावान् विचारान् प्रतिक्रियाः कार्याणि च शीघ्रमवगच्छन्ति। तदनुरूपं व्यवहारं ते प्रदर्शयन्ति। सामाजिकता तु नेतृत्वस्य मूलं वर्तते यत्र नेतृत्वस्य आधारशिला तिष्ठति।

4. आत्मविश्वासः -

नेता यस्य कार्यस्य आरम्भं करोति तस्य पूर्तये आश्वस्तो भवति। एतद् वर्तते नेतुः महत्त्वयुतं लक्षणम् स्वस्थेन दृढेन च आत्मविश्वासेन स जनेषु विश्वासमुत्पादयति। अनेनैव कारणेन जनास्तस्यानुगमनं कुर्वन्ति।

5. अन्तर्दृष्टिः -

नेतुरन्तर्दृष्टिः सुविकसिता भवति स जानाति यत् कस्मिन् दृष्टिपूर्णरूपेण साफल्यं कस्मिञ्च ईषद् साफल्यं भविष्यतीति। अन्तर्दृष्टिमाध्यमेन कार्याणां रूपरेखायाः निर्माणं कर्तुं प्रभुः भवति। अनेनैव स विविधाः समस्याः परीक्षयति, तासां गुणदोषान् च विवेचयति।

6. नमनीयत्वम् -

परिवर्तनं हि प्रकृतेः नियमः। समस्यासु प्रवाहेण समस्यासु परिवर्तनं जायत एव। नेतुर्व्यवहारः परिवर्तनकारणात् नमनीयः स्यात्। परिवर्तनमेतत् समयानुरूपमपेक्षितं भवति, न तु सर्वदा। नमनीयतानां अभावे स्वानुयायिनां विश्वासमाप्तुं न भवति प्रभुः।

7. परिश्रमी दृढप्रतिश्च -

नूनमेव परिश्रमी भवति नेता। यो नेता स्वानुयायिभिः सह कठोरं परिश्रमं करोति। स सर्वाधिको लोकप्रियो भवति। स एव अन्यान् परिश्रमाय प्रेरयितुं शक्तो भवति। नेता दृढप्रतिज्ञोऽपि भवति। स्वसिद्धान्तानां दृढतया परिपालनं कर्तुं ससर्वदा उद्यतो भवति। न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः” इति सिद्धान्तं परिपालयति।

वस्तुतः ये गुणाः भवन्ति व्यक्तित्वस्य, तान् सर्वानेव यो विभति। स एव नेतृरूपेण स्वीक्रियते। एते गुणाः नेतृत्वे सहायक भूताः वर्तन्ते। नेतुः मौलिकाः विशेषताः भवन्ति। याभिः अनुगामिजनाः समये-समये प्रभाविताः भवन्ति।

शिक्षकस्य नेतृत्वप्रारूपम्

शिक्षकः छात्राणां समूहस्य स्वीकृतो नेता वर्तते। स स्वस्य ज्ञानेन, योग्यतया, शक्त्या बुद्ध्या च छात्राणां नेतृत्वरूपेण स्वीक्रियते। तस्य अनुगामिनां छात्राणां कृते व्यवहार आदर्शभूतो भवति। अनेनैव कारणेन नेतृरूपेण स सुस्थापितो भवति कक्षायाम्। स्वायुयायिनश्छात्रान् प्रति समर्पणभावनया परिपूरितः स भवति, यया छात्राः अपि स्वनेतारं शिक्षकं प्रति सर्वदा समर्पिताः भवन्ति। शिक्षकः नेतृत्वप्रशिक्षणार्थं स्वकीयं व्यवहारं उपस्थापयति आदर्शभूतम्।

शिक्षकः कस्यापि बटनायाः कृते सर्वदा सन्नद्धो भवति येन असावधानतया कापि विषमा परिस्थितिरुत्पन्ना न जायेत्। उत्पन्ने सति विषमायां परिस्थितौ स मनोवैज्ञानिक दृष्ट्या तस्या समाधानस्य प्रयासं करोति। समयेऽस्मिन् स न भवत्याकुलितः असन्तुष्टश्च। परिस्थितेः प्रत्यक्षीकरणे सोऽतीव दक्षो भवति। अध्यापको बालकेभ्यः साहाय्यं सर्वदा स्वीकरोति। सः छात्रेभ्यः साहचर्यं प्रकटयन्नापि अनुशासितान् प्रति कठोरो भवति।

ये छात्राः नेतृत्वगुण सम्पन्नाः वर्तन्ते, तेषां कृते एतदर्थम् अवसराः अध्यापकेन प्रदेयाः। अवसरानुरूपं शिक्षको अनुयायिरूपणापि व्यवहरति कक्षायाम्। नेतृत्वक्षमतायाः हस्तान्तरणं शिक्षकेण करणीयं भवति।

नूतनकार्यसन्दर्भे छात्राणां प्रस्तावाः शिक्षकेण स्वीकार्याः, तासां संस्तुतीनां स्वागतं कुर्यात् शिक्षकः। ये प्रस्तावाः शैक्षणिको देश्यपूर्तये लाभप्रदाः वर्तन्ते तदनुरूपं शिक्षकस्य व्यवहारोऽपि भवेत्।

छात्राणां सहभागप्रवृत्तीनां विकासाय शिक्षकोऽवसायन् दद्यात् कक्षायाम्। येषां शिक्षणेतरक्रियायां रुचिः दक्षत्वं च वर्तते, तेषां कृते तदनुरूपान् नेतृत्वावसरान् उत्पादयेत् शिक्षकः। नेतृत्वं तु तदैव सफलं भवति यत्र अनुगामिजनाः भवन्ति। अतः सहभागप्रवृत्तेः विकासेन नेतृत्व शक्तेः विकासाय उद्यमः अपेक्ष्यते। कक्ष्यायाः सर्वाः क्रियाः सामूहिकरूपेण सम्पादनीयाः शिक्षकेन।

नेतृत्वे जनानां पारस्परिकाः सम्बन्धाः वर्तन्ते निहिताः। सम्बन्धानां प्रत्येकं स्थितिर्भवति अद्वितीया। शिक्षकः कदापि इदं नावगच्छेत् यत्, य एव वर्तते नेता कक्ष्यायाः, न कोऽप्यन्यः नेता भवितुमर्हति। अनेन छात्राः भवन्त्यात्मकेन्द्रिता शिक्षकास्तु नूनमेव कक्ष्यायां पारस्परिकसम्बन्धान् स्थापयेयुः।

पाठ्यचर्या

केशव नाथ झा

शिक्षाचार्य द्वितीयवर्षम्

पाठ्यचर्या विद्यालयस्य शिक्षाव्यवस्थायाश्च केन्द्रविन्दुरस्ति। विद्यालये उपलब्धानि संसाधनानि पाठ्यचर्यायामेवागच्छन्ति। यथा विद्यालयभवनम्, उपकरणानि, पुस्तकालयस्य पुस्तकानि तथा च अन्यशिक्षणसामग्रीषामेकमात्रमुद्देश्यं यत् पाठ्यचर्यायाः क्रियान्वयने सहयोगप्रदानम्।¹

कक्षायाः सर्वाः क्रियाः, पाठ्यसहगामिकार्यकलापं तथा मूल्याङ्कनस्य सर्वाः प्रक्रियाः विद्यालयपाठ्यचर्यायाः परिणामस्वरूपेणैव नियोजिताः भवन्ति।

प्रत्येकं सभ्यसमाजः स्वस्य यूनां समाजीकरणाय एकस्य निश्चितस्य शैक्षिककार्यक्रमस्य नियोजनं करोति। यस्य क्रियान्वयनं विद्यालयमाध्यमेन क्रियते। अस्यां प्रक्रियायां कस्याः वार्तायाः समावेशो भवेत्। तथा तेषां शैक्षिकव्यवहारः क्रियायाः स्वरूपे केन प्रकारेण परिवर्तितं भवितुमर्हति। इत्यस्मिन् विषये बहु मतान्तरमस्ति।

प्रसिद्धाः दार्शनिकाः अरस्तुमहोदयाः उक्तवन्तः – याः स्थित्यः सन्ति, मानवसमाजः एतेषां शिक्षणं प्रति न हि मतैक्यमस्ति। न हि शिक्षणाय स्वीकृतं यत् साधनं तं प्रति एव।

पाठ्यचर्या (Curriculum) इति शब्दस्य प्रयोगः नैकेषु रूपेषु कृतवन्तः। सामान्यरूपेणास्य आशयोऽयं यत्–

- विद्यालये अध्ययनाय निर्दिष्टं पाठ्यक्रमम् एवं अन्यसहायकग्रन्थाः ।
- छात्रान् पाठनाय विषयसामग्रयः।
- कस्यापि विद्यालये निर्दिष्टस्य विषयस्य पाठ्यक्रमः।
- विद्यालये छात्रान् दीयमानं नियोजितम् अधिगमम् अनुभवानां सम्मिलितरूपम्।

जॉनसनमहोदयानुसारम् (1967) अस्याः परिभाषायाः अनुसारं पाठ्यचर्यायाम् अधिगमस्य परिणामः महत्त्वपूर्णो न तु अधिगमस्य अनुभवः। एते परिणामाः उद्देश्येन सम्बन्धितं भवति॥

पाठ्यचर्या एकः एतादृशः प्रयासः अस्ति। येन शैक्षिकसङ्कल्पनायाः आवश्यकसिद्धान्तं तथा लक्षणं येन प्रकारेण सम्प्रेषितं क्रियते यत् तस्य उपयुक्ता समालोचनं कुर्वन् तस्य प्रभावशालीरूपेण कार्यरूपे परिणतं कर्तुं शक्यते।

पाठ्यचर्यायाः विशेषताः (Featuring Curriculum) पाठ्यचर्यायाः सङ्कल्पना इत्यस्य प्रमुखपक्षाणां तथा विशेषतानां सम्यक्तया अवबोधम् आवश्यकं भवति। यत् निम्नलिखितम् अस्ति॥

पाठ्यचर्या सदैव नियोजितं भवति। अस्यां निहितक्रियायाम् आवश्यकतानुसारं तत्क्षणं विकसितं नैव कर्तुं शक्यते।

पाठ्यचर्यायाः चत्वारः मुख्याधाराः –

(1) सामाजिकशक्त्यः।

-
- (2) मानवीयकविकासानां ज्ञानम्।
 - (3) अधिगमस्य स्वरूपम्।
 - (4) ज्ञानस्य सज्ञानस्य च स्वरूपम्।

पाठ्यचर्यायाः लक्ष्यं/प्रयोजनं तेन सह सम्बन्धितं शैक्षिकोद्देश्येन निर्दिष्टं भवति। उद्देश्यमेव साध्यमस्ति। पादाचर्या अध्यापकस्य अनुदेशनं नियोजितकरणे सहायकं भवति।

पाठ्यचर्यायाः आधारः (based curriculum) पाठ्यचर्यायाः चत्वारः मुख्यधाराः सन्तिः मानवविकासस्य स्थितिः।

सामाजिकशक्त्यः (Social powers) कस्मिन्नपि समाजे सामाजिकशक्त्यः विद्यालयस्य कार्यकलापं प्रत्यक्षरूपेणायवा अप्रत्यक्षरूपेण प्रभावितं करोति। एताः शक्त्यः सामाजिकलक्ष्यं, सांस्कृतिकैकता, विभेदः, सामाजिकप्रभावः, सामाजिकपरिवर्तनम्, भविष्ययोजना, तथा संस्कृतेः सङ्कल्पनारूपेण दर्शनं ददाति। अस्माकं देशः अनेकानां संस्कृतिनां समागमोऽस्ति, तथा च अस्य प्राचीनेतिहासोऽस्ति। अस्मिन् सामाजिकशक्त्यः अत्यन्तं जटिलं विविधरूपे दर्शनं ददाति। एताः सामाजिकशक्त्यः एव शिक्षायाः सामाजिककार्यकलापस्य निर्धारणं करोति।

‘मानवविकासः’ (human development) बालकस्य वृद्धेः तथा विकासस्य विविधपक्षाणां पूर्तौ समाजेन सह एव विद्यालये निर्धारितपाठ्यचर्यायाः अपि योगदानं भवति। विंशतिशताब्द्यां विकासस्य अध्ययनं तथा तत्सम्बन्धिशोधेन बालानां विकासस्य स्थिताः। तस्य चिन्तनप्रक्रिया, आवश्यकतानाम् अभिरूचनां प्रति नवीनशैल्या चिन्तनस्य शक्तिः अमिलत्। बालाः उन्नतः अथवा दीर्घः रूपं न भवति। ते प्रौढापेक्षया नैकप्रकारकैः भिन्नाः भवन्ति। विकासात्मकावस्थायां अन्तरं केवलं मात्रात्मकम् एव न गुणात्मकमपि भवति। अस्य अन्तरस्य अनेके मनोवैज्ञानिकाः विस्तारपूर्वकं अवबोधितवान्। मानवविकासस्य ज्ञानं पाठ्यचर्याविकासः अध्यापकस्य सहाय्यं करोति। अनेन प्रकारेण विकसितपाठ्यचर्या प्रत्येकभ्योः बालानां विकासात्मकावस्थानुसारं तस्य विशेषतां ध्यानं दत्त्वा निर्माणं भवति।

अधिगमस्य स्वरूपम् (the nature of learning)

विंशतिशताब्द्याः प्रारम्भात् एव मानवः अधिगमस्य प्रक्रियायां विचारः करोति। अस्मिन् क्षेत्रे नौके शोधाः अपि भवन्तः सन्ति। अनया दृष्ट्या अधिगमस्य केचन सिद्धान्तः विकसितं कृतवान्। यस्मिन् प्रमुखाः सन्ति - व्यवहारवादीसिद्धान्तः तथा सज्ञानात्मकसिद्धान्तः। अधिगमसिद्धान्तस्य पाठ्यचर्यायाः नियोजनस्य कार्यं विभिन्नदृष्टिकोणेन सम्पादितं भवति।

ज्ञानसंज्ञानयोः स्वरूपम् (the nature of knowledge cognizance)

पाठ्यचर्यायाः एकः अन्यः आधारः - ज्ञानस्य तथा संज्ञानास्य स्वरूपम्।

सूचनायां ज्ञानं च किमन्तरम्, बालकः सूचनां ज्ञाने केन प्रकारेण परिवर्तनम्, किं ज्ञानमधिकमुपादेयं वर्तते।

विचारः प्रक्रियायाः किं स्वरूपम्।

विविधविचारप्रक्रियाः संज्ञानात्मकप्रक्रियायाः कौशलं परस्परं केन प्रकारेण सम्बन्धितं भवति।

एतेषां प्रश्नानामुत्तरं ज्ञानानां संघटितकरणे सहायकं भवितुमर्हति। अत्र एतत् सिद्धं यत् प्रत्येकं छात्रः स्वविशिष्टाधिगमशैलि तथा युक्तानां प्रयोगं करोति।

पाठ्यचर्या-विकासयो उपागमः (Approach to curriculum development)

विषयकेन्द्रितः उपागमः (topics centered approach)

विषयकेन्द्रितोपागमः अनुभवानां संघटनाय अधिकतमः यः प्रयोगः भवति। तेषु एकः उपागमः।

अस्मिन् उपागमे विषयवस्तु परितः अधिगमस्य अनुभवानां संघटनं क्रियते।

शैक्षिकोद्देश्यानां प्राप्तये विषयवस्तुनि प्रवीणता एव मूलाधारोऽस्ति।

- ◆ विषयकेन्द्रितपाठ्यचर्यायां पाठ्यचर्या योजनकारस्य मुख्यदायित्वमस्ति यत् ते विद्यालयेन स्वीकृतानां विषयाणां निर्धारणं क्रीयेत् तथा च निर्णयं कुर्वन्तु यत् प्रत्येकस्य वस्तोः अन्तर्गते किं किम् आगमिष्यति।
 - ◆ उदाहरणाय तानि विषयवस्तुनि वा पाठ्यसामग्रीम् अध्ययनस्य विभिन्नानि क्षेत्राणि - यथा - हिन्दी, आङ्ग्लम्, विज्ञानम्, सामाजिकविज्ञानम्” गणितम् इत्यादयः।
 - ◆ पाठ्यचर्या योजनायां सन्नद्धाः ये जनाः सन्ति तेषां दायित्वमस्ति यत् ते छात्राणां विषयगतयोग्यतापरीक्षणाय औपचारिकपरीक्षणेन समस्यासमाधानपरिस्थित्या मूल्याङ्कनस्य युक्तिं प्रदर्शयेत्।
 - ◆ विस्तृतक्षेत्रोपागमः” (wide area approach)
 - ◆ विस्तृतक्षेत्रोपागमः पारम्परिकविषयस्य अभिप्रायस्य (डिजायन) परिवर्तनं रूपम्।
 - ◆ एषः उपागमः अध्ययनस्य सम्पूर्णक्षेत्रेण सम्बद्धं ज्ञानं बोधं एकः व्यापकः विषयवस्तुसङ्घटने आनयनस्य प्रयासं करोति।
 - ◆ अस्मिन् उपागमे सामान्यविषयानां विषयवस्तूनां समाकलितं करणस्य प्रयासः क्रियते। उदाहरणाय जीवविज्ञानस्य विस्तृतं क्षेत्रम् उपागमे सामान्यविषयाणां विषयवस्तु समाकलितकरणस्य प्रयासः क्रियते।
 - ◆ सामाजिक-समस्या-उपागमः (social problem approach)
 - ◆ अस्य उपागमस्य समर्थकाः स्वीक्रीयन्ते यत् व्यक्तेः अधिगमः अनुभवश्च तस्य संस्कृतेः वातावरणस्य क्रियाकलापोपरि आधारितं भवेत्। यस्मिन् सः तिष्ठति।
 - ◆ अनेन छात्रेषु सामाजिकस्य पक्षाणां समस्यानां सम्बन्धे चेतना आगच्छति। तथा च तस्य प्रभावीरूपेण समाधानस्य योग्यता उत्पन्नो भवति।
 - ◆ सामाजिकसमस्या-उपागममाध्यमेन समस्यायाः अथवा पक्षाणां विश्लेषणस्य पश्चात् अधिगमोद्देश्यानि निर्धार्यते। समस्याया सम्बद्धं कस्यापि स्रोतेन विषयवस्तु नेतुं शक्नुमः।
 - ◆ अध्येता केन्द्रितोपागमः (student centered approach)
- अधिगमः एका एतादृशी प्रक्रिया अस्ति। यस्मिन् वयं अनुभवेन स्वव्यवहारे परिवर्तनं क्रियते। वयं सर्वस्मात् तीव्रः तेन परिस्थित्या अवबोध्यते। येन वयं समस्या समाधाने सहायता मेलिष्यति। येन स्वेच्छायाः प्रपूर्यति। येन वयं स्व रुचिं अपेक्षां प्रपूर्यति।
- पाठ्यचर्याविकासस्य एतस्मिन् उपागमे विद्यालयानुभवेन छात्रान् एतादृशीं विधिं अवबोधनस्य

प्रयासः क्रियते। यत् एकः प्रभावीनागरिकसमस्यासमाधानं स्वरुचिं प्रपूत्यर्थं उपयोगे आनयति। एतस्य प्रकारस्य पाठ्यचर्यायोजना छात्राणां वर्तमानजीवनस्य आवश्यकतायामाधारितं भविष्यति।

श्रोतसन्दर्भग्रन्थसूची -

- (1) यूनियनपीडियन संचार ॥अथवेव विश्वकोष॥
- (2) विकीपिडीया
- (3) अरिहन्त के बुक
- (4) एजुकेशन मिरर

अधिगमानुभवानां चयने अवधेयांशाः

सोनिया साहु

शिक्षाचार्य

अधिगमानुभवस्यार्थः -

छात्रः शैक्षणिकपरिस्थित्यां स्व प्रतिक्रियया अनुभवं प्राप्नोति। अनुभवेन अधिगमः जायते। अर्थात् नियन्त्रितपरिस्थित्या छात्रः स्वयम् अनुक्रिया कृत्वा अन्तः क्रियया यत् प्राप्नोति तदेव अधिगमानुभवः। अधिगमानुभवेन छात्राणां व्यवहारपरिवर्तनं भवति। अस्मिन् व्यवहारपरिवर्तने ज्ञानात्मकक्षः, भावनात्मकपक्षः, क्रियात्मकपक्षाश्च सम्मिलितानि भवन्ति।

अधिगमानुभवस्य त्रीणि अङ्गानि -

- (1) चयनिताधिगमपरिस्थितिः।
- (2) अधिगमगतिविधयः।
- (3) अन्तःक्रिया।

अधिगमानुभवानां सृजनम्-

अधिगमानुभवानां सृजनमुपलब्धसाधनानुगुणं क्रियते। किन्तु साधनानां व्यवस्थायां रूपरेखा शिक्षकस्य योग्यतां उपरि निर्भर करोति।

अधिगमानुभवानां सृजने बालकान् उद्देश्यप्राप्तौ सहाय्य मिलति।

शैक्षिकोद्देश्येन पाठ्यवस्तुना च अधिगमानुभवः नियन्त्रितं भवति।

उपयुक्ताधिगमानुभवेन शिक्षणं प्रभावशाली भवति।

छात्राणां स्वस्य क्रियाः अधिगमाय क्रियाणां अधिकोपयोगी भवति।

शिक्षकण प्रभावात्मकं शिक्षणाधिगमाय सोद्देश्यक्रियाणां व्यवस्था करणीया।

उपयुक्ताधिगमानुभवानां सृजनम्-

उपयुक्ताधिगमानुभवः निर्धारितोद्देश्यानां प्राप्तौ सहाय्यं भवेत्, अतः निम्नलिखितगुणाः अधिगमानुभवे भवेयुः यथा-

- (1) सार्थकम्।
- (2) सतत-अन्तःक्रिया आधारितम्।
- (3) समन्वितञ्च।

अधिगमानुभवानां चयनस्य सिद्धान्तौ-

(1) एकमेवाधिगमानुभवेन नैकाः अनुभवः प्रदातुं शक्यते।

(2) भावात्मकपक्षः ज्ञानात्मकपक्षेण नियन्त्रितं भवति।

अधिगमानुभवचयनसम्बद्धावश्यकाः निर्देशाः -

(1) प्रत्यक्षेषु परोक्षेषु च प्राप्तानुभवासरेषु सन्तुलनं स्थापनम्।

(2) प्रत्यक्ष-परोक्षञ्चोभयविधाधिगमानुभवानां समालोचनात्मकाय विश्लेषणाय उपयुक्तावरणामुपलब्धिः।

(3) विभिन्नोद्देश्यानां पूर्तये विभिन्नामधिगमानुभवानां चयने समुचितनिर्णयः।

(4) भावात्मकविकासाय अधिगमानुभवानां चयनं करणीयम्।

(5) अधिगमानुभवेन एकस्मिन्नेव समये नैकानामुद्देश्यानां प्राप्तिः भवेत्।

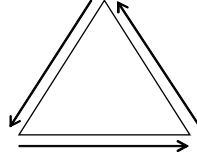
(6) अधिगमानुभवः उद्देश्येन सह सम्बद्धः स्यात्।

(7) अधिगमानुभवः विद्यार्थिनां कृते सार्थकं सन्तोषप्रदञ्च स्यात्।

(8) अधिगमानुभवः छात्राणां परिपक्वतानुगुणं स्यात्।

ब्लुममहोदयस्य शिक्षा प्रक्रिया -

(1) शैक्षिकोद्देश्यानां निर्धारणम्



(2) अधिगमानुभवः

(3) व्यवहारपरिवर्तनम्

अधिगमानुभवानां चयनस्य मानदण्डाः -

बर्तनमहोदयेन प्रस्तावितषट्मानदण्डाः -

(1) विद्यार्थीदृष्ट्या सोद्देश्यं भवेत्।

(2) शिक्षकदृष्ट्या वाञ्छनीय सामाजिकोद्देश्यानां प्राप्तये सक्षमः भवेत्।

(3) अधिगमानुभवः परिपक्वतानुगुणं भवेत्।

(4) विद्यार्थीनां सन्तुलितविकासाय विभिन्नक्रियाणां समावेशः भवेत्।

(5) अधिगमानुभवानामायोजनं विद्यालये समाजे च उपलब्धं सौविध्यनुगुणं करणीयम्।

(6) अधिगमानुभवे व्यक्तिगतभिन्नता दृष्ट्या विविधता स्यात्। अर्थात् कक्षायाः, उत्तमः, मध्यमः, निम्नः प्रत्येकस्य स्तरस्य छात्रेभ्यः उपयोगि स्यात्।

सारांशः -

शैक्षिकप्रक्रियायामुद्देश्यानां निर्धारणानन्तरं द्वितीयसोपाने अधिगमानुभवानां चयनमागच्छति। येन छात्राणां व्यवहारे परिवर्तनं क्रियते। छात्रः अनुभवेन अधिगच्छति। अतः अधिगमानुभवः शैक्षिकोद्देश्यानां प्राप्तेः साधनं वर्तते।

सन्दर्भः -

- (1) शर्मा, आर.ए. 2013, पाठ्यक्रम विकास एवं अनुदेशन; मेरठ: आर. लाला बुक् डिपो।
- (2) यादव, सियाराम, पाठ्यक्रम विकास; आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।
- (3) पाल हंसराज, पाल राजेन्द्र; 2009, पाठ्यचर्या कल आज और कल; दिल्ली: शिक्षाप्रकाशन।
- (4) पाठक, आर.पी., पाण्डेय भारद्वाज, अमिता; 2012, पाठ्यचर्या निर्देशन एवं तुलनात्मकशिक्षा का आधार; नई दिल्ली: कनिष्क पब्लिशर्स।

शिक्षायां मूल्याङ्कनम्

शिवनारायण त्रिपाठी
शिक्षाचार्य प्रथमवर्षम्

मूल्याङ्कनं मापनं च -

एकः छात्रः आंग्लभाषायां पञ्चाशदधिकद्विशतपदानि जानाति तस्य पदस्वाधीन मापनीयं चेत् तेन सह बहूनि कार्याणि अपि ज्ञातव्यानि भवन्ति।

तस्मिन् छात्रः स्तरानुगुणं वयानुगुणं कियत् पदानि जानाति यदि छात्रः अस्मिन् समये चतुश्शतं पदानि पठनीयानि सन्ति उद्देश्यानुगुणम् इति चेत् पूर्वोक्तपदसंख्या तृप्तकरी न भवति।

कारणं तु उद्देश्यप्राप्तिः सम्पूर्णत्वेन न जानाति। पदानां संख्या तु उद्देश्यमेव एकमेव भवति।

किन्तु वयानुगुणं यदि पञ्चाशदधिकद्विशत पदानि एव पठनीयानि इति उद्देश्यं अभविष्यत् चेत् तर्हि तस्य उद्देश्या प्राप्तिरपि शतप्रतिशतं इति वक्तुं शक्यते।

तदन्तरा एकैकस्य पदस्य प्रत्येक-प्रत्येक पठनोद्देश्यमपि गणनीयम्।

मूल्याङ्कनस्य अर्थः निर्वचनञ्च -

शोधकम् (TEST) मापनं (Measurement) मूल्यनिर्णयः इत्यादीनि पदानि परस्परपूरकत्वरूपेण उपयुज्यते। किन्तु एतानि सर्वाणि अर्थः व्याप्तौ भेदः। एतेषां समेषां पदानाम् अर्थव्याप्तौ अपि समानताः भवन्ति च।

शोधकम् (TEST) एकस्य व्यवहारस्य मापनाय उपयुज्यमानं उपकरणं वर्तते शोधकम् इति ग्रोण्लण्ट (1985) (Gronlert) महाशयः अभिप्रैति।

उत्तर्ममाणाः प्रश्नावल्यः एव भवति शोधकम्।

अनेन एकस्य प्रत्येकं व्यक्तेः व्यवहारमेव मापयितुं शक्यते। मापनमूल्यनिर्णयोः अपेक्षया व्यापितः अतीव न्यूना भवति शोधाकस्य।

मापनम् (Measurement) - एकस्य वस्तुनः परिमाण्यमाग भवति प्रक्रिया भवति मापनम्। एकस्य प्रत्येकस्य व्यवहारपरिवर्तनस्य परिमाणं संख्यारूपेण प्रतिनिधानमेव अनेन उद्दिश्यते।

शोधकमपेक्षया बृहत्सङ्कल्पमेव मापनम्। बहूनां उपकरणानां सहाय्येन मापनं कर्तुं शक्यते। मापनाय उपयुज्यमानं एकं उपकरणं भवति शोधकम्।

मूल्याङ्कनम् - मापनात् अपेक्षया कक्ष्याप्रवर्तनमूल्यनिर्णयस्य अत्यधिकं योगदानं वरीवर्ति। विद्याभ्यासमापनस्य सविशेषताः इत्यस्मिन् पुस्तके एवम् फीस्बी 1986 एवं अभिप्रेति शोधकं मापनस्य एकमुपघटत्वेन तथा मापनं मूल्यनिर्णयस्य प्रस्तावनात्वेन स्वीकर्तुं शक्यते।

शैक्षिकलक्ष्याणां पूर्तीकरणं कियत्परं सम्भूतमिति अवगन्तुमेकमुपकरणं भवति।

Ralt Tailor (1950) अभिप्रेति Stopil Beam (1927) मतानुसारं मूल्यनिर्णयः एकमुपकरणं भवति यत् शैक्षिकलक्ष्याणां तथा पठनानुभवानां फलप्राप्तिनिर्णयाय। (मूल्यनिर्णयः शिक्षायां (1963))

मापनमूल्याङ्कनयोः सविशेषता - शिक्षायाः ऊर्ध्वगतेः परिणामः मापनप्रक्रियायाः आधारेणैव सम्भवति। शैक्षिक घटकाः पठितारः, अध्यापकः, रक्षितारः, भरणकर्तारः, एतेषां सर्वेषां कृते उपयोगप्रदमेव भवति मूल्यनिर्णयः।

मूल्यनिर्णयस्याधारेणैव अध्यापकः पाठासूत्रणं सज्जीकरोति।

छात्राणांपूर्वज्ञानं व्यक्तिभेदं परिगणत्य, पठनानुभवस्य चयनमपि मूल्यनिर्णयस्याधारेण भवति।

मूल्यनिर्णयस्याधारेण बोधनप्रक्रियायां परिणामं आनयति प्रचाल्यमानशैक्षिकसम्प्रदानस्य फलप्राप्तिं ज्ञात्वा तदनुगुणं शैक्षिकसम्प्रदाये कालानुगुणं परिवर्तमानेतुं भरणकर्तृणां कृते सहायकोपकरणं भवति।

मूल्यनिर्णयः छात्राणां पठनप्रतिपुष्टेः प्राप्त्यर्थं तथा रक्षककर्तृणां कृते छात्राणां भाविनिकालस्य निर्णयाय च मूल्यनिर्णयः एकमुपाधिः भवति।

मूल्याङ्कनस्य विशेषता -

- ◆ विद्याभ्यासस्य विविधघट्टेजायमानस्य गुणवत्तां निर्णयति।
- ◆ अनुस्यूताप्रक्रिया भवति इयम्।
- ◆ पठितुः अपेक्षा तथा व्यक्तिभेदः च परिगण्यते।
- ◆ अस्मिन् तु शिक्षायाः विविधमेघलां अन्तर्भवति।
- ◆ शिक्षायाः फलप्राप्तेः प्रगत्यर्थम् काश्चन् उपाधिः भवति।
- ◆ Bendremin S bloom - महाशयस्यामतानुसारं मूल्यनिर्णयः तावत् अधः दीयते-
- ◆ छात्राणां दक्षता तथा बलहीनता च ज्ञातुं एकोत्तमोपाय भवति अयम्।
- ◆ शैक्षिकमण्डले उत्तममार्गस्य स्वीकरणाय।
- ◆ पठनप्रवर्तनस्य लक्ष्यान् मापनेन सह बध्नातुम्।

शैक्षिकानुसन्धानम्

नीलेश शर्मा

शिक्षाचार्य प्रथमवर्षम्

शैक्षिकानुसन्धानस्य इतिहासः - भारते शैक्षिकानुसन्धानं न प्राचीनम्। इदानीमपि भारते शैक्षिकानुसन्धानं बाल्यावस्थायमिव विद्यते। एतादृशः विचारः शिक्षाऽऽयोगेन 1964 तमे वर्षे प्रकटितः। परन्तु इदानीं भारतेऽपि शैक्षिकम् अनुसन्धानं शैशवावस्थायां नास्ति। स्वतंत्रतायाः पञ्चादशवर्षेषु अस्मिन् क्षेत्रेऽपि महती प्रगतिः जाता। देशस्थशैक्षिकानुसन्धानस्य विकासः शिक्षाऽऽयोगेन (1964-66) निम्नलिखितः मन्तव्याः प्रकटिता - यदि साम्प्रतिक- शैक्षिकव्यवस्थासु परिवर्तनमपेक्षितज्येत् शैक्षिकानुसन्धानस्य विकासाय प्रयासः करणीयः तथा शैक्षिक-नीति- निर्धारणे शिक्षायाः परिष्काराय च अस्य प्रयोगः कर्तव्यः” इति।

शैक्षिकानुसन्धानस्य परिभाषाः -

गुड्समहोदयानुसारेण - शैक्षिकानुसन्धानम् नाम शिक्षाक्षेत्रे शैक्षिकसमस्याम् आश्रित्य क्रियमाण अध्ययनम् अन्वेषणञ्चेति।”

हेमनुजनियर महोदयानुसारम् - शैक्षिकानुसन्धानं नाम व्यवहारविज्ञानस्य एकम् अङ्गम् इति। अनेन मानवीयव्यवहारस्य ज्ञानं तस्य व्याख्या एवम् ऊहनं च क्रियते क्वचित्तु इदं तस्य नियन्त्रणमपि करोति।”

J.W. Best महोदयानुसारम् - अनुसन्धानप्रक्रियायां सम्बद्ध साहित्यस्याध्ययनं प्रथमसोपानत्वने स्वीकर्तुं शक्यते। समस्यायाः निर्देशने सम्बद्धसाहित्यस्याध्ययनं महदुपकरोति इति” एतेषां महाभागानां अभिप्रायः।

शैक्षिकानुसन्धानस्योद्देश्यानिः -

शैक्षिकानुसन्धानस्य समस्यायां विविधता परिदृश्यते। अतः अस्य प्रमुखानि चत्वारि उद्देश्यानि सन्ति तानि -

1. **सैद्धान्तिकम्** - शैक्षिकानुसन्धाने शोधकार्यैः नूतनसिद्धान्तानां नियनामानां च प्रतिपादनं भवति। शोधकार्यं व्याख्यात्मकं भवति। अस्यान्तर्गते सहसम्बन्धानां व्याख्या क्रियते। येन शिक्षा प्रक्रिया प्रभावशालिनी भवितुमर्हति।
2. **तथ्यात्मकम्** - शिक्षायाम् ऐतिहासिक-शोधकार्येण नूतनतथ्यानामन्वेषणं क्रियते। एतदाधारेण वर्तमानम् अवगन्तुं सहायता मिलति। एतादृशानाम् उद्देश्यानां प्रकृतिः वर्णनात्मिका भवति। यतोहि तथ्यानि अन्विष्य घटनानां वर्णनम् क्रियते।
3. **सत्यात्मकम्** - दार्शनिक-शोधकार्येण नवीन सत्यप्रतिस्थापनं क्रियते। दार्शनिक शोध कार्यद्वारा शिक्षायाः उद्देश्यानां, सिद्धान्तानां, शिक्षणविधीनां, पाठ्यक्रमाणां च रचना क्रियते। उद्देश्ये अस्मिन् अनुभवानां चिन्तनम् बौद्धिकस्तरे क्रियते। येन नवीनतथ्यानां मूल्यानाञ्च प्रतिस्थापनं जायते।

4. **व्यावहारिकोद्देश्यम्** - शैक्षिकानुसंधानस्य निष्कर्षाणां व्यावहारिक प्रयोगो भवेत्तम्। परन्तु केषुचित् शोधकार्येषु केवलम् उपयोगितायाः उपरि महत्त्वं प्रदीयते। तेन ज्ञानस्य क्षेत्रात् योगदानं न लभते। इदं विकासात्मकम् अनुसन्धानम् इत्यपि कथ्यते। क्रियात्मकानुसंधानेन शिक्षा प्रक्रियायां संशोधनं विकासश्च क्रियेते। अतः अस्योद्देश्यं व्यावहारिकं भवति।

शैक्षिकानुसंधानस्य प्रकाराः -

1. मौलिकानुसंधानम्
2. व्यावहारिकानुसंधानम्
3. क्रियात्मकानुसंधानम्

शैक्षिकानुसंधानस्य सोपानानि -

शैक्षिकानुसन्धानप्रक्रियायां षट्सोपानानि स्वीकृतानि तानि यथा -

1. समस्यायाः चयनम्।
2. प्राक्कल्पनायाः प्रतिपादनम्।
3. शोधस्य रूपरेखानिर्माणम्।
4. प्रदत्तानां सङ्कलनम्।
5. प्रदत्तानां विश्लेषणम्।
6. सामान्यीकरणं तथा निष्कर्षप्रतिपादनम्।

संस्कृतं राष्ट्रभाषा स्यात्

भास्कर पाणिग्राही

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

कस्याऽपि भाषायाः महत्त्वं तद्भाषाभाषिणां संख्यामाश्रित्य एव तिष्ठति। एतत् सत्यं यत् साम्प्रतिकं भारतवर्षं तदेव पुरातनं आर्यावर्तः वर्तते। अत्र निवासिनः आर्याः, येषाम् आद्या संस्कृतिः वैदिकसंस्कृतिः आसीत्, यतोहि तदानीन्तनाः जनाः संस्कृतभाषाभाषिणः आसन्। तदानीं ब्राह्मणक्षत्रियादीनां भाषा संस्कृतभाषा एव आसीत्। पण्डिताः स्त्रीयः अपि संस्कृतज्ञाः भवन्ति स्म। परं अकुलीनाः जनाः असंस्कृतज्ञाः मुर्खाः। अतएव तेषां भाषा अपभ्रंशवहुला प्राकृतेति आसीत्।

यदा वयं संस्कृतभाषायाः महत्वविषये विवेचयामः यावन्तो हि विषयाः सन्ति सम्बन्धिष्यन्ति च तावन्तः सर्वेऽपि गद्यपद्यरूपे संस्कृतसाहित्ये चिराद्विराजन्ते। तेषां विपुलः संग्रहो यदि कुत्रापि सुलभोऽस्ति सः संस्कृतं एव। उदाहरणरूपेण - चत्वारो वेदाः संस्कृतमयाः। तथा षट्वेदाङ्गानि यथा- शिक्षा- कल्प- व्याकरणं- निरुक्तं- छन्दः- ज्योतिषम्। पुनः अष्टादशपुराणानि। अस्मात् सूच्यते संस्कृतभाषाया महत्वम् साहित्यभण्डारस्य च निःसीमता।

अस्मिन् स्वतन्त्र-भारते बह्व्यः समस्याः सन्ति। विविधसमस्यानां मध्ये एकताविधयिन्याः भाषायाः आवश्यकता अधुना अनुभूयते। परं बहुवाद-विवादान्तरमिदमेव समीचीनं

प्रविभाति यत् हिन्दी संस्कृतञ्च विहाय नास्ति काचिदन्या भाषा या भारतस्य राष्ट्रभाषात्वप्राप्तये योग्या भवेत्। यतोहि मन्याः याः भाषाः सन्ति ताः सर्वाः अपूर्णाः एकदेशीयाः अल्पभाषियाश्च सन्ति। संस्कृतभाषा एव राष्ट्रभाषा भवितुं योग्या। यतोहि यस्याः भाषायाः साहित्यं विशालं व्यापकं तथा या संस्कृता परिमार्जिता नानालंकार विमण्डिता वर्तते।

पुनः विश्वस्य सकलासु भाषासु प्राचीनतमा इयं संस्कृतभाषा। इयं भाषा सर्वासां भाषाणां जननी अस्ति। संसारंऽस्मिन् सर्वमपि प्राचीनं साहित्यं संस्कृतभाषायामेव प्राप्यते।

एभिः कारणैः यदि संस्कृतभाषा देशस्यास्य राष्ट्रभाषा समुद्घोषिता चेत् तर्हि महान् लाभो भवेत्। यदि अस्य भारतस्य प्राचीनसंस्कृतेः, धर्मस्य आर्याणां पूर्वजानां च गौरवस्य रक्षा आवश्यकी, तर्हि संस्कृतस्य प्रचारः आवश्यकः। अधुना केवलमेव इयं संस्कृतभाषा एव भारतस्योन्नतिं कर्तुं समर्था दृश्यते।

जयतु संस्कृतम्, जयतु भारतम्॥”

समावेशी शिक्षा के सिद्धान्त

दिवाकर मिश्र

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

समावेशी शिक्षा को मुख्यतः निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित किया गया है -

(1) **व्यक्तिगत रूप से भिन्नता** - (Individual Difference) व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक व्यक्तियों में भिन्नता पायी जाती है। यह भिन्नता रंग रूप तथा व्यक्तित्व इत्यादि में पायी जाती है। विशिष्ट बालकों को उनके व्यक्तित्व इत्यादि के अनुसार ही शिक्षित किया जाता है। प्रतिभावान छात्रों को अधिक विस्तारपूर्वक पढ़ाया जाता है तथा मन्दबुद्धि बालकों को प्रत्येक कार्य धीरे-धीरे सिखाया जाता है। कुछ ऐसे बालक होते हैं जो बिलकुल रुचिपूर्ण तरीकों से पढ़ाई नहीं करते, उनको शिक्षा के प्रति जागृत करना समावेशी शिक्षा का मुख्य सिद्धान्त है। अतः व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार ही छात्रों को समावेशी शिक्षा प्रदान की जा सकती है।

(2) **माता-पिता द्वारा सहयोग प्रदान करना** - (Provide cooperation by parent) समावेशी शिक्षा के अन्तर्गत माता-पिता का सहयोग होना अति आवश्यक है। यदि माता-पिता पूर्णतः सहयोग देंगे तभी विशिष्ट छात्रों को उचित प्रकार से समावेशी शिक्षा प्रदान की जा सकती है।

(3) **भेदभाव रहित शिक्षा** - (Non-Discriminatory Education) भेदभाव रहित शिक्षा हेतु सर्वप्रथम छात्रों की पहचान की जानी अति आवश्यक है क्योंकि इसके आधार पर ही छात्रों को वर्गीकृत किया जा सकता है।

(4) **विशिष्ट कार्यक्रमों द्वारा शिक्षा** - (Education through special programme) विशिष्ट शिक्षा हेतु कई विशिष्ट कार्यक्रमों को लागू किया जाता है। शारीरिक रूप से बाधित छात्रों की शिक्षा हेतु उनके माता-पिता को विद्यालय का पूर्ण सर्व

करने का अधिकार प्राप्त होता है।

यदि माता-पिता शिक्षण संस्था की कार्य-प्रणाली से सन्तुष्ट नहीं होते हैं तो वे इच्छानुसार बालकों को शिक्षण संस्थाओं से निकालकर किसी अन्य शिक्षण संस्था में भेज सकते हैं। अतः विशिष्ट बालकों को विशिष्ट कार्यक्रमों के द्वारा ही उचित शिक्षा प्रदान की जा सकती है।

(5) वातावरण नियन्त्रणपूर्ण होना - (Restrictive Environment) जहाँ तक उचित हो प्रत्येक बाधित बालकों को निःशुल्क उपयुक्त शिक्षा मिलनी चाहिए। सामान्यतः शिक्षा और संस्थाओं में किसी बालक को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने का विकल्प किसी विद्यालय की व्यवस्था में नहीं है।

प्रायोगिकमनोविज्ञानस्यौचित्यम्

संजय कुमार तिवारी

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

प्रास्ताविकङ्कितम् - यथा प्रतिभात्युपर्युक्ताच्छीर्षकाद्यत् सत्स्वपि मनोविज्ञानस्यानेकविध शाखासु अस्तीत्यं अन्यतमा विशिष्टतमा चेत्यं शाखा। न च मनोविज्ञानमपि प्रायोगिकं व्यावहारस्यविज्ञानमिति व्युत्पत्त्यादिति वाच्यम्। यतोहि अत्र यन्त्राद्यासाहाय्येन छात्राणां प्रायोगिकक्रियया परिमार्जितत्वात्।

प्रायोगिक मनोविज्ञानस्यौचित्यमस्ति न वेति चेत् तर्हि यथा लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणमिति वत् सैद्धान्तिक प्रायोगिकयोः प्रायोगिकस्यैव वलीयस्त्वमिति स्वीकारादस्ति मनोविज्ञानस्यावश्यमौचित्यम्। एवञ्च शिक्षणाधिगमप्रक्रियायान्तु अनितरासाधारणावश्यकता तयुद्देश्यावाप्तये।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यम् - मनोविज्ञानस्योपत्तिः तावत् दर्शनशास्त्रेण अथ च शारीरिकविज्ञानेन वा सम्पृक्तत्वाज्जाता। यद्यत्यासीद्मनोविज्ञानमिदं मनोविज्ञानस्याभिन्नाङ्गत्वेन तथापि भवसप्तत्यधिकअष्टादशततमे” वर्षे महोदयेन श्री वुण्टमहोदयेन ‘लिपजिग’ विश्वविद्यालये समारब्धादिमेयं प्रयोगशाला। एवञ्चास्मिन् प्रारम्भे शैथिल्यं पुनश्च कालान्तरे तीव्रगत्या विकासः सम्प्राप्तः। आगतं एवञ्च प्रो. बेवर फेकलर एविंगहॉसादयः नैके समर्थकाः स्वीयसमर्थनं प्रदत्तं येन स्वतन्त्रशाखात्वं भजते। प्रायोगिकमनोविज्ञानस्यास्याशयः निरूप्यतेतद्धि ध्वयते शीर्षकेण यत् मनसः विज्ञानं मनोविज्ञानम् एवञ्च प्रयोग सम्बन्धिनं यन्मनोविज्ञानं तत्प्रायोगिक मनोविज्ञानमिति।

सर्ववादी अयं पक्षः यत् प्रायोगिक सैद्धान्तिकयोः प्रायोगिकस्य स्वीकरेणमिति। तेन प्रयोगस्य प्राधान्यं सर्वतोभावेन स्वीकार्योऽस्ति। शिक्षणेऽपि तथैव प्रायोगिक विधीनां प्रयोगः मुक्तकण्ठेन प्रतिपादिताः शिक्षाशास्त्रिभिः।

यद्यपि प्राचीन शिक्षापद्धतौ सैद्धान्तिक ज्ञानस्योपरि अधिकं बलं दीयते स्म। यथा श्रौत परम्परादयः। तथापि साम्प्रतिक च काले प्रायोगिकज्ञाने स्वीयानुमतिः प्रददति। यथा - किण्डरगार्डेन कृत्वाधिगमादयः। आशयोऽयं यच्छात्राः सैद्धान्तिकज्ञानापेक्षया प्रायोगिकज्ञाने

आञ्जस्येनाहमिकताया च स्वरुचिं यच्छति। अवबोधे तेषामवधानं कृत्वाधिगमे दत्तचित्त रूपेण भवति।

अतः अवधान-परीक्षणाय उत वा अवधानेऽपेक्षित परिवर्तनाय च प्रायोगिकमनोविज्ञानस्यास्ति अशेषावश्यकता। एवञ्च प्रायोगिक मनोविज्ञानमिदं वैशिष्ट्येनाधिगमस्थानान्तरणेऽपि अतीवाश्यकत्वं भजते।

निष्कर्षोपसंहारो वा -

नैष्कर्षोऽयं यदस्मिन् छात्राणां प्रभावाधिगमः एवञ्च अधिगमस्थानान्तरणे सशक्तता अवधानता कुशलता च सम्पादनाय समायोज्यते। आनुभाविकज्ञानं सैद्धान्तिक ज्ञानपेक्षया वैशिष्ट्यं विदधाति इति कृत्वा सैद्धान्तिक ज्ञानेन सह प्रायोगिकज्ञानं देयं येन शिक्षणाधिगमप्रक्रियोद्देश्यानां पूर्तिः भवेदिति।

वसुधैवकुटुम्बकम्

ममतासाहुः

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

परिवर्तनशीलोऽयं संसारः। इदं जगत् सुखदुःखात्मकम्। सुखानन्तरं दुःखं, दुःखानन्तरं च सुखम्। सुखदुःखयोः परिवृत्त्या एतत् संसारं विपद्यते। संसारे नहि कश्चन दुःखम् इत्यत्वेन काम्यते। दुःखनिरोधश्चस्य एक एव उपायः विश्वे शान्तेः सद्धर्मस्य च संस्थापना वर्तते।

भारतस्य महान् सम्राट् अशोकः विश्वजनानाम् अभ्युदयाय भगवतः बुद्धस्य सत्य-अहिंसयोः प्रचारार्थं चीनश्रीलंकादयेषु विदेशेषु स्वपुत्रं प्रेषितवान्, तैः महर्षिभिः सततम् एव उदीरितं यत् सर्व-भूत-हित-साधनम्। एतदेव यज्ञप्रक्रियायां स्वाहा (स्वआहा स्वार्थस्य सर्वथा त्यागः) इदं न मम इत्यादिभिः पदैः निर्दिश्यते।

संस्कृतभाषायां वसुधैवकुटुम्बकम् इति भावनासम्बद्धाः नैके श्लोकाः वर्तन्ते। यथा हितोपदेशे-

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।

उदार चरितानां तु वसुधैवकुटुम्बकम्॥

श्लोकेऽस्मिन् मानवसंस्कृतेः सर्वोत्तमः सिद्धान्तः प्रतिपादितः। मनोजेतराः जन्तवस्तु प्रायशः स्वकुटुम्बमेव संसार इति मन्यन्ते। यथा ते सन्ति कूपमण्डूकाः मानवस्तु सकलं जगत् द्रष्टुमिच्छति। तथा हि कश्चिज्जनाः पद्मवटकुटुम्बे सुखमनुभवन्ति। इमे जनाः मम सहायकाः ते कुशलिनस्ते निरामयाः भवन्तु तेषां सुखेन अहमपि सुखी इति भावना तस्य मनसि वर्तते।

वस्तुतः लोके द्विविधा जनाः भवन्ति। उदारचरिताः लघुचेतसश्च। उदारचेतजनाः सर्वान् जनान् सुखीकर्तुमेव स्वजीवनस्य परमोद्देश्यं स्वकर्तव्यं मन्यन्ते। लघुचेतजनाः सर्वदा स्वमुखस्येव चिन्तनं कुर्वन्ति। यथा - वृक्षः सर्वेषां कृते उदारभावना समभावेन उद्घाटयति। छायाप्रदानं करोति, फलं ददाति एतादृशः उदारचेतसः यथा उपकारिषु सदयं भवन्ति तथैवानुकर्यात्।

पक्षिणामादर्शस्तु प्रसङ्गेऽस्मिन् समुदेति। असंख्यास्ते विहगाः उत्तलतरंगमयान- महासागरमपि अहर्निशमङ्गीय प्रतरन्ति। ततश्च विविधान् देशान् देशान्तराणि च कुटुम्बीकृत्य सार्वलौकिकं सुखमनुभवन्ति भावयन्ति च।

विश्वे विद्यमानाः सर्वे सुखिनः स्युः, सर्वे निरोगिनः भवन्तु, कोऽपि दुःखं न प्राप्नुयात् यथा-

ॐ सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभागभवेत्॥

विश्वस्य सर्वेऽपि प्राणिनः एकस्यैव परमपितः परमेश्वरस्य पुत्राः सन्ति। देशीया विदेशीया वा ते सर्वे एकस्यैव परिवारस्य सदस्या इव वर्तन्ते। तत्र किं कारणं यद् भेददृष्टिः प्रवर्तते। अत एव अनन्तसुखप्राप्त्यर्थं वसुधैवकुटुम्बकम् इति भावना जगति इति सर्वैः मनुष्यैः अंगीकर्तव्या। विश्ववन्धुत्वं मानवं देवत्वं प्रापयति। अतः सर्वैः सह विश्ववन्धुत्वं वसुधैवकुटुम्बकम् इति भावनया व्यवहारः कर्तव्यं यैः उदारैः मानवैः स्वार्थभावनाः समुन्नार्थं वसुधानां सर्वेषु यथोचितं पितृ-मातृ-वन्धुभगिनीप्रभृतिभावना मन्यते।

यतः कोऽपि कदापि कस्मैचन न क्रुध्यात्, ईर्ष्येद् वा इत्यादयः भवन्ति वसुधैवकुटुम्बकम् इति।

नारीशिक्षा

मधुस्मिता नन्दी

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

अस्माकं समाजः न केवलं पुरुषाणां, किन्तु नारीणामपि अस्ति। अतः सुसंस्कृते समाजे पुरुषाणां शिक्षा आवश्यकी अस्ति तथा स्त्रीणामपि समाजे स्थानं समानरूपेणास्ति। समाज रथस्य द्वे चक्रे स्तः। यथा एकेन चक्रेण रथस्य गति असम्भवा, तथा जीवनस्य गति नारिणा विना असम्भवा। अशिक्षिता नारी संसाररथं कथं चालयति। अतः स्त्रीशिक्षा अतीवावश्यकी।

प्राचीनकालेऽपि स्त्रीशिक्षा अनिवार्या आसीत्। वैदिककाले नार्यः अधिकशिक्षिताः आसन्। गार्गी, मैत्रेयी-आद्यः विदुष्यः वेदशास्त्रार्थनिपुणाः आसन्। कालिदासस्य पत्नी विद्योत्तमा महती विदुषी आसीत्। आधुनिककाले स्त्रियः शिक्षणमनिवार्यम्। यदि माता सुशिक्षिता भवेत् तर्हि सा स्वपुत्राणां पालनं शिक्षणं च सुचारुरूपेण कर्तुं शक्नोति। यदि सा अशिक्षिता, तर्हि तस्याः सन्ततिरपि विद्याहीना-संस्कारहीना च भविष्यति। शिक्षिता नारी अधिकयोग्या गृहकार्यसंचालने समर्था च भवति।

अद्य एकमपि क्षेत्रं नास्ति, यत्र नार्याः प्रभावो नास्ति। विद्यालयेषु, महाविद्यालयेषु कार्यालयेषु सर्वत्र नार्यः कार्यरताः सन्ति। किंबहुना अनेकाः नार्यः संसदसदस्याः सन्ति। नगरपालिकासु, विधानसभासु, लोकसभासु अपि सदस्याः सन्ति, ताः सुचारुरूपेण कार्यं कुर्वन्ति च। श्रीमती इन्दिरागान्धीमहोदया अस्माकं देशस्य प्रधानमन्त्रिपदम् अलंकृतवती। श्रीमती सोनियागान्धीमहोदया अपि राजनीतौ कार्यरता अस्ति।

कुलस्य तथा समाजस्य उत्थत्यर्थं स्त्रीशिक्षा अनिवार्या खलु। यतः शिक्षिता नारी न केवलं स्वजीवनं सफलं करोति, किन्तु सा परिवारस्य राष्ट्रस्यापि अभ्युदयं करोति। सुशिक्षिता नारी सर्वत्र पूज्यते। अतः कथितं -

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।

समयस्य महत्त्वम्

पङ्कज उपाध्यायः

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

समयस्य समुचितरूपेण उपयोगः एव समयस्य सदुपयोगः कथ्यते। समयस्य सदुपयोगः मानवजीवनस्य हितसाधकेषु साधनेषु साधनं वर्तते। संसारे बहूनि वस्तूनि बहुमूल्यानि सन्ति परं तेषु सर्वापेक्षया बहुमूल्यं वस्तु समयः एव वर्तते। यतः अन्यानि वस्तूनि विनष्टानि अपि पुनः लब्धुं शक्यन्ते परन्तु व्यतीत समयः केनापि उपायेन पुनः लब्धुं न शक्यते। विद्या विनष्टा पुनः अभ्यासेन लब्धुं शक्यते, धनं विनष्टं पुनः उपार्जनेन लब्धुं शक्यते, यशः विनष्टं पुनः सत्कर्मणा उपार्जयितुं शक्यते परं विनष्टः समयः सहस्रैः अपि प्रयत्नैः दुर्लभः एव।

अतएव समयः सर्वाधिकं बहुमूल्यं वस्तु मन्यते। अस्माकं भारतीयानां कृते अयं राष्ट्रनिर्माणस्य कालः वर्तते। अस्माकं स्कन्धेषु राष्ट्रनिर्माणस्य महान् भारः वर्तते। अस्मिन् समये तु विशेषरूपेण अस्माभिः समयस्य सदुपयोगे ध्यानं दातव्यं, येन शीघ्रतया राष्ट्रस्य समुन्नतिः स्यात्। अस्मिन् विषये छात्रैः विशेषरूपेण ध्यानं देयम्। यतः ते एव भारतस्य भाविनः कर्णधाराः तथा भाग्यविधातारः सन्ति।

शिक्षाक्षेत्रे मनोविज्ञानस्य योगदानम्

संध्या मेहरा

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

मनोविज्ञानशास्त्रं हि नूतनं नाम, व्यवहारस्य अध्ययनकारणात् मनोविज्ञानसिद्धान्तान् शिक्षा स्वकीय क्षेत्रे योजयति। यदा प्रभृति मनोविज्ञानस्य शिक्षाक्षेत्रे समावेशो जातः तदा प्रभृत्येव शिक्षायाः क्षेत्रे अनेकानि परिवर्तनानि जातानि सन्ति। वस्तुतः मनोविज्ञानेन शिक्षायाः अर्थपरिमार्जनमेव कृतं वर्तते। प्राचीनयुगे शिक्षा धर्मानुप्राणिताऽसीत् प्रमुखं शिक्षायाः उद्देश्यमपि मोक्षप्राप्तिरेवासीत्। साम्प्रतिके युगे मनोविज्ञानस्य हेतोः शिक्षायाः उद्देश्यं वर्तमानजीवनं सुखयुक्तं समृद्धियुक्तं करणीयमेव भवति। इयमेव शिक्षा जनेषु व्यवसायिक-सामाजिक-शारीरिक-सम्बन्धानां निपुणतां वर्धयति एव। शिक्षायाः उद्देश्यपरिवर्तनामिदं मनोविज्ञानस्य प्रवेशकारणादेव सम्भवं जातम्। शिक्षणप्रक्रियायां शिक्षकः पाठ्यचर्या, छात्रश्च त्रयो ध्रुवाः भवन्ति। प्राचीनयुगे एतेषु शिक्षकः प्राधान्येनासीत् स्वीकृतः। तदा शिक्षा शिक्षककेन्द्रिता, अध्यापककेन्द्रिता वा आसीत्। इदानीम् तु शिक्षेयं बालकेन्द्रिता सज्जाता। शिक्षायाः पाठ्यक्रमस्यापि निर्धारणं छात्राणां रुचेः, अभिरुचेः, अभिवृत्तेश्च ध्यानं विधाय क्रियते। एतस्मिन् परिवर्तनेऽपि मनोविज्ञानमेव हेतुरूपेण वर्तते।

प्राचीनयुगे शिक्षा एकाङ्गिणी एवाभवत्। शिक्षया केवलं बौद्धिकविकास एव अपेक्षित आसीत् परा। सम्प्रति तु छात्राणां सर्वाङ्गीणविकासे बलं दीयते। इदानीं शारीरिकविकासोऽपि

तथा महत्त्वं धारयति। यथा बौद्धिकविकासः। वस्तुतः स्वस्थे शरीरे एवं स्वस्थमस्तिष्कं भवति इति स्वीक्रियतेऽद्य। सर्वे एव विकासाः परस्पराश्रिताः वर्तन्ते। शारीरिकविकासस्य, मानसिकविकासस्य, सामाजिकविकासस्य, संवेगात्मकविकासस्य इत्येतेषु कस्याध्येयस्य कृते विशिष्टं बलं न दीयते अद्य।

आरम्भिककाले अध्यापक एव केन्द्रभूत आसीत् शिक्षणप्रक्रियायाम्। अध्यापनकाले सः एव सक्रियो भवति स्म। छात्राः तु कक्ष्यायां श्रवणरताः भूत्वा निष्क्रिया एव तिष्ठन्ति स्म। कक्षायाः नियन्त्रणं कर्तुं सः विशिष्टं प्रयासं विदधाति स्म। शिक्षाक्षेत्रे मनोविज्ञानस्य प्रवेशेन साम्प्रतं छात्राः कक्षायां सक्रियाः भवन्ति। छात्रान् सक्रियान् कर्तुं शिक्षको दृश्यश्रव्योपकरणानां प्रयोगाद्युपायानाचरति कक्षायाम्। छात्राणाम् अधिकाधिकं सहयोगमाप्तुं शिक्षको युत्नशीलो भवति सर्वमिदं मनोविज्ञानाध्ययनेन सम्भवति।

एतेन छात्राणां ज्ञानस्य सम्यक् मापनं कर्तुं शक्यते। इदमेव मनोविज्ञानस्यैव शिक्षाक्षेत्रे प्रभावो वर्तते। अस्य मूल्याङ्कनस्य सम्प्रत्ययोऽपि मनोवैज्ञानिकपरीक्षणनैव परिष्कृतो वर्तते। इदं मूल्याङ्कनं केवलं ज्ञानात्मकमेव न भवति, प्रत्युत क्रियात्मकमपि भवति। एतेन या क्षमता छात्राणां विषयाध्ययनस्य कार्यसम्पादनस्य कौशलसम्पादनस्य वा भवति। तस्याः विकासो यथाऽवसरं कर्तुं शक्यते। अतः शिक्षायाः साफल्यं मनोविज्ञानस्य साहाय्येनैव प्राप्तुं शक्यते।

शिक्षामनोविज्ञानस्य क्षेत्रम् -

1. बालकस्य विशेषयोग्यतानाम् अध्ययनम्।
2. बालकस्य रुचीनाम् अरुचीनाञ्च अध्ययनम्।
3. बालकस्य वंशानुक्रमस्य वातावरणस्य च अध्ययनम्।
4. बालकस्य प्रेरणानां मूलप्रवृत्तीनाञ्च अध्ययनम्।
5. बालकस्य विकासस्य अवस्थानाम् अध्ययनम्।
6. बालकस्य शारीरिक-मानसिक-संवेगात्मक क्रियाणाम् अध्ययनम्।
7. बालकस्य शारीरिक-मानसिक-चारित्रिक-सामाजिक-संवेगात्मक-सौन्दर्यात्मक- विकासस्य अध्ययनम्।
8. बालकस्य व्यक्तिगतविभिन्नतानाम् अध्ययनम्।

शिक्षा मनोविज्ञानस्य क्षेत्रे तत्सर्वं ज्ञानं विषयश्च सम्मिलिताः भवन्ति, यत्तु अधिगम प्रक्रियायाः सम्यग्ज्ञानाय कुशलनिर्देशनाय चावश्यकं भवति” इति।

शिक्षा मनोविज्ञानस्योद्देश्यानि -

शिक्षा मनोविज्ञानस्योद्देश्यानि सन्ति व्यवहारस्य ज्ञानं भविष्यकथनं नियन्त्रणञ्चेति, एतस्मिन् सन्दर्भे केलीमहोदयस्य अभिमतमन्यतमं वर्तते - स तु शिक्षामनोविज्ञानस्य नवसंख्यकान्युद्देश्यानि प्रतिपादयति।

1. बालकस्य स्वभावज्ञानम्।
2. बालकस्य बुद्धेर्विकासस्य च ज्ञानम्।
3. बालकेभ्यः वातावरणेन सह सामाज्यस्य स्थापयितुं सहयोगप्रदानम्।

4. शिक्षायाः स्वरूपेण, उद्देश्येन च सह परिचयप्रदानम्।
5. अधिगमस्य विविधैः सिद्धान्तैः, विधिभिश्च सह परिचयस्थापनम्।
6. संवेगानां नियन्त्रणं तेषां शैक्षणिकमहत्त्वस्य चाध्ययनम्।
7. चरित्रनिर्माणस्य विविधसिद्धान्तैः सह परिचयः।
8. विद्यालयीयानाम् विषयाणां ज्ञानस्य मापनविधीनां प्रशिक्षणम्।
9. शिक्षामनोविज्ञानस्य सिद्धान्तानां ज्ञानाय प्रयुक्तानां विधीनां ज्ञानप्रदानम्।

अभिप्रेरणम्

गीताञ्जली

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

व्यवहारेऽस्माभिः अवलोक्यते यत् कोऽपि जनः किमपि विशिष्टकार्यं सम्पादयितुं संलग्नो भवति। तत्कर्मणः प्रत्याकर्षणं प्रवर्तनञ्च नितान्तं दुष्करं भवति। प्रयोजनमनुदिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते”। इति न्यायोक्तिरपि प्रसिद्धा वर्तते विद्वत्सु। एतस्मिन्नेव सन्दर्भे बुभुक्षितः प्रचलितो वर्तते। एतेन सिद्धमिदं भवति यत् प्राणिनामाभ्यन्तरे तेषां परिवेशे वा केचन अभिप्रेरका आकर्षणशक्तयो वा वर्तमानाः भवन्ति ये तस्य तद्विशिष्टं व्यवहारं जनयन्ति। एतेनैव कारणेन एकस्यामेव परिस्थितौ लोकाः भिन्नव्यवहारं प्रदर्शयन्ति।

अभिप्रेरणस्य स्वरूपम् -

‘अभिप्रेरणम्’ इति पदम् आङ्गभाषायाः ‘मोटीवेशन’ (Motivation) इति शब्दस्य रूपान्तरणं वर्तते। आङ्गलभाषायाः ‘मोटीवेशन’ (Motivation) इति पदस्योत्पत्तिः लेटिनभाषायाः ‘मोटम् (Motum) इति धातोः जाता वर्तते। एतस्यार्थो वर्तते ‘मूव’ (Move) ‘मोटर’ (Motor) प्रगत्यात्मकम् इति वा। प्रेरणायाः व्युत्पत्तिजन्योऽर्थो भवति ‘गतिसञ्चालनम्’ इति।

जनानां क्रियासन्दर्भे पक्षत्रयं भवति। तत्र प्रथमो भवति सः किं करोति? इति, द्वितीयस्तु ‘स केन प्रकारेण करोति?’ इति, तृतीयो भवति यत् ‘स किमर्थं करोति?’ इति। एवमेव यदा शिक्षायाः सन्दर्भे अवलोकयामः तदा विचार्यते यत् (1) बालकः किम्पठति? (2) सः कथं पठति? (3) बालकः किमर्थं पठति? इति। अत्र प्रदत्तेषूदाहरणेषु तृतीयस्य प्रश्नस्य सम्बन्धः ‘किमर्थम्’ इत्यनेन वर्तते। एतस्यैव प्रश्नस्य सम्बन्धः ‘प्रेरणाया सह’ वर्तते। एतस्मिन् सन्दर्भे केचक्रचफील्डमहोदयैः प्रतिपादितवन्तौ यत् ‘प्रेरणायाः प्रश्नः किमर्थमित्यनेन वर्तते’ इति।

अभिप्रेरणस्य परिभाषा -

(1) मेक्डूगलमहोदयमते - प्रेरकं नाम प्राणिनः ताः दैहिक्यो मनोवैज्ञानिक्यश्च दशाः वर्तन्ते याः तं किमपि कार्यं विशिष्टरीत्या सम्पादयितुं योजयति’ इति।

(2) बुडवर्थमहोदयानुसारम् - प्रेरकस्तु व्यक्तेः सा मनोदशा वर्तते या कस्यचिन्निश्चित-तस्योद्देश्यस्य प्रत्यक्षं तं निश्चितव्यवहारार्थं विवशं करोति’ इति।

(3) गुडमहोदयानुसारम् - कस्यचित्कार्यारम्भस्य, प्रवर्तनस्य नियमितीकरणस्य वा प्रक्रियैव 'प्रेरणा' इत्यभिधीयते' इति।

(4) मैक्डोनाल्ड महोदयानुसारम् - प्रेरणा व्यक्तेराभ्यन्तरे जायमाने तच्छक्तिपरिवर्तनं वर्तते यस्मिन् भावात्मकोत्तेजनायाः लक्ष्यं प्रति क्रियायाश्च गुणो विद्यमानो भवति इति।

अभिप्रेरणायाः स्रोतांसि -

मानवानां प्रवृत्तिः कार्यार्थं किमर्थं भवनीति? सन्दर्भे पर्याप्तः विचारः प्रचलति। कस्यचित्कार्यस्य कृते मानवो विविधैर्विचारैः प्रभावितो भवति। मानवे प्रेरणायाः अस्तित्वं तु नूनमेव भवति। अभिप्रेरणायाः सन्दर्भे विविधाः धारणाः व्यवहारे प्रचलिताः विद्यन्ते।

विविधासु धारणाष्वन्यतमा वर्तते ईश्वरीयशक्तिविषयणी धारणा। मानवो हि सृष्टिकर्तुः रचना मन्यते। अत एव सर्वमपि तस्य दैवाधीनमेव भवति। ईश्वरो यत्कारयिष्यति तदैव कर्तुं शक्तो भवति मानवः।

मानवस्तु केवलं हेतुभूतौ भवति कर्मणि मानवानां प्रवृत्तिरपि देवाधीना भवति। प्राणिषु मानवः श्रेष्ठो भवति। यस्मात् कारणादयं भवति श्रेष्ठः, तेषु कारणेषु तस्य तर्कशक्तिः प्रमुखा वर्तते। मानवस्तु कार्यस्यौचित्यमनौचित्यं वा तर्कणैव निर्धारितं करोति। मानवस्य मस्तिष्कस्य तर्कः एव मानवमन्येभ्यः श्रेष्ठत्वम् अभिसूचयति। मानवस्य व्यवहारस्तस्य मस्तिष्कस्य क्रियाशीलतायां निर्भरो भवति। मानवो जीवनस्य प्रतिक्षेत्रं सामाजिकं प्रभावैः कार्यार्थम् अभिप्रेरितो भवति।

निष्कर्षः -

एवं प्रकारेण अभिप्रेरणां बिना अस्माकं काऽपि क्रिया न भवति। प्रत्येकं कार्यस्य कृते अभिप्रेरणा आवश्यकी भवति। शिक्षणे अध्ययने उत कस्मिंश्चिदपि कार्ये यदि वयं अभिप्रेरिता भवामः तर्हि कार्यं साधुतया सिद्धं भवति। इति।

पाठयोजनायाः आवश्यकतत्त्वानि

कान्हू पधान

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

वस्तुतः या पाठयोजना अध्यापकेभ्यः स्वोद्देश्यप्राप्तये साफल्यं प्रयच्छति सा एव उत्तमा पाठयोजना इति स्वीकुर्वन्ति शिक्षाशास्त्रिणः। प्रायः एवं भवितुमर्हति यदेका योजना अपरेषामध्यापकानां कृते अन्यथा भवेत्। अतः पाठयोजनायाः कृते न किमपि नियमं प्रतिपादयितुं शक्नुमः। फलतः अत्र केवलं केषाञ्चन तत्त्वानां वैशिष्ट्यानि एव प्रतिपाद्यन्ते। यथा -

- (1) पाठयोजनायाः स्वरूपं लिखितं स्यात्।
- (2) अस्यां सम्पूर्णपाठस्य प्रारूपं सारांशश्च स्यात्।
- (3) पाठयोजनायां प्रत्येकं सोपानस्य अवधिः निश्चितः स्यात्।
- (4) पाठयोजनायां नूतनज्ञानं छात्राणां पूर्वज्ञानेषु आधारितं स्यात्।
- (5) पाठयोजनायां छात्राणामर्जितज्ञानस्य सम्बन्धः नूतन ज्ञानेन सह संस्थापनीयम्।

-
- (6) अस्यां प्रयुज्यमानानां उपयुक्तशिक्षणविधीनां प्रयोगस्योल्लेखः कर्तव्यः।
 - (7) अस्यां छात्रेभ्यः प्रदीयमानानां प्रमुखविधीनामुल्लेखः भवेत्।
 - (8) पाठयोजनायां छात्रेभ्यः क्रियमाणानां विविध प्रश्नानामुल्लेखः भवति।
 - (9) अस्यां छात्रेभ्यः कक्षागृहादिकार्यप्रदानस्य व्यवस्था भवति।
 - (10) अस्यां छात्रैः अधीयमानानां क्रियाणामुल्लेखः वर्णनं वा भवेत्।
 - (11) पाठयोजनायां वैयक्तिकभिन्नतायाः आधारे शिक्षणव्यवस्था भवेत्।
 - (12) पाठयोजनायां पाठस्य सारांशः सरलभाषया भवेत्।
 - (13) पाठयोजनायाम् अक्षराणी सम्यक् रूपेण लेखितव्यानि।
 - (14) अस्यां सामान्यविशिष्टोद्देश्यानाम् उल्लेखः स्पष्टरूपेण स्यात्।

योहम्-राव-सिम्पसनमहोदयानुसारेण -

या पाठयोजना प्रत्यक्षरूपेण स्थित्यनुकूला नास्ति, तस्याः प्रयोगः एव भ्रमात्मकः भवति।
शिक्षकाः कक्षायाः स्थित्यनुगुणं पाठयोजनायां परिवर्तनं कुर्युरिति।

समावेशात्मकशिक्षा

राजेशरञ्जनः त्रिपाठी

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

समावेशात्मक शिक्षा- समावेशात्मकशिक्षायाः तात्पर्यं वर्तते यत् विशिष्टशैक्षणिक- आवश्यकतानां पूर्त्यर्थं सामान्यविशिष्टबालकानां कृते समानावसरः भवेत्। पूर्वम् अस्या शिक्षायाः परिकल्पना विशिष्टछात्राणां कृते एव कृतासीत् परम् आधुनिकसमये द्वयोः सामान्यविशिष्टबालकयोः शिक्षणस्य समानावसरः भवेदिति अर्थे समन्वित समावेशीशिक्षा विशिष्टक्षमता बालकाः, यथा- मन्दबुद्धिः, दृष्टिबाधितः, श्रवणबाधितः, गतिबाधित तथा प्रतिभाशाली एवं सर्वप्रकारकबालकाः च अन्तर्भवन्ति। समावेशीशिक्षाद्वारा सर्वप्रथमं छात्राणां बौद्धिकस्तरं विज्ञाय तेषां शिक्षास्तरस्य निर्धारणं क्रियते।

समावेशात्मकशिक्षायाः परिभाषाः -

स्टेफन तथा लेकहर्टमहोदययोः अनुसारम् समावेशात्मकशिक्षायाः तात्पर्यं भवति वाधितानां (पूर्णतया अपङ्गानां) सामान्यकक्षया सह व्यवस्थीकरणम्। एषः समानावसरः मनोवैज्ञानिकशोधोपरि आधारितः अस्ति, यत् व्यक्तिगतयोजनया सामाजिकमानकीकरणं तथा अधिगमं वर्धयति।

शिक्षाशास्त्रानुसारं समावेशीशिक्षया एव योग्यतालिंगजातिभाषाचिन्तास्तर-सामाजिक- आर्थिकस्तरादयः वर्धते।

समावेशीशिक्षा स्वतः प्रक्रिया नास्ति अपितु मनुष्याणां कृते मनुष्यैः निर्मितः एकः आधुनिकप्रयासः अस्ति।

सम्प्रत्ययः - अस्याः शिक्षायाः ऐतिहासिकपक्षाः विकासश्च कनाडा-अमेरिका देशयोः लभ्यन्ते, वस्तुतः समावेशात्मकशिक्षा भूमण्डलीकरणस्य स्वरूपं वर्तते। अस्याः शिक्षायाः आरम्भः

अष्टादशशताब्द्याम् अभवत्। अस्य जनकः प्लेटोमहोदयः वर्तते।

- ◆ इयं शिक्षा समावेशस्य सिद्धान्तस्योपरि आश्रिता अस्ति।
- ◆ अस्यां शिक्षायां सर्वप्रकारकबालकाः समाविशन्ति।
- ◆ बालकाः स्वकीयविद्यालयस्य सामान्यकक्षासु विशिष्टतायाः भावं विना अध्ययनं कुर्वन्ति पठन्ति च।
- ◆ सर्वेषु विद्यालयेषु विशिष्टबालकानां कृते अपङ्गबालकानां शिक्षायै प्राथमिकव्यवस्था स्यात्।
- ◆ विद्यालयस्य शैक्षिक-शारीरिक-सामाजिक-भावात्मक-व्यवसायिककार्यक्रमेषु सर्वेषां कृते समानावसराः भवेयुः।
- ◆ इयं शिक्षा अपङ्गबालकानां कृते विशिष्टशिक्षणविधीनां विशिष्टानां कृते पृथक् व्यवस्था क्रियते।

आवश्यकता -

- ◆ सामान्यमानसिकविकासः सम्भवः भवति।
- ◆ सामाजिक-एकीकरणं सुनिश्चितं करोति।
- ◆ समावेशीशिक्षा अल्पव्यययुक्ता भवति - अपङ्गबालकानां सामान्यकक्षासु अल्पव्ययः भवति।
- ◆ समावेशीशिक्षाया एकीकरणं सम्भवम्।
- ◆ समावेशीशिक्षाया शैक्षिकैकीकरणं सम्भवं भवति।
- ◆ समानतासिद्धान्तस्य अनुपालनम् अत्र भवति।

महत्त्वम् -

- इयं शिक्षा व्यक्तिगतविभिन्नतायाः उपरि वलं ददाति।
- मातृपितृभ्यः सहयोगप्रदानं करोति।
- भेदभावरहितशिक्षणोपरि वलं ददाति।
- सामान्यछात्राणां कृते विशिष्टछात्राणां च समानशिक्षाव्यवस्था।
- विशिष्टकार्यक्रमैः शिक्षाप्रदानम्।
- निशुल्कम् (6-14 वर्ष पर्यन्तम्) शिक्षा एवम् अनिवार्यशिक्षाव्यवस्था।
- बालकबालिकानां समन्वयनं सहपठनं च।
- सहयोगपूर्णवातावरणं च भवति।

उद्देश्यानि -

- ◆ सर्वेभ्यः समानशिक्षावसरः।
- ◆ सहायक-अनुकूलरचना, पर्यावरणेन सह स्थित्वा समायोजनम्।
- ◆ आत्मनिर्भरतायाः पृष्ठपोषणम्।
- ◆ अत्र सर्वेभ्यः समानमहत्त्वं दीयते।
- ◆ अस्योद्देश्यं विशिष्टशिक्षणविधिना सामान्यशिक्षणविधेः एकीकरणस्वरूपमेव।

सत्यमेव जयते नानृतम्

अभय देहुरी
शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

सदयं हृदयं यस्य भाषितं सत्यभूषितम्।

कायः परहिते यस्य कलिस्तस्य करोति किम्॥

सते अर्थात् कल्याणाय हितं सत्यं भवति। यद् वस्तु यथा विद्यते तस्य तेनैव रूपेण कथनं प्रकाशनं लेखनं वा सत्यमिति अभिधीयते। परमेश्वरेण जिह्वा सदुपयोगार्थं दत्ता, अतः - जिह्वायाः सदुपयोगः सत्यभाषणेन कर्तव्यः।

जगति सत्यस्य यादृशी आवश्यकता विद्यते, न तादृशी अन्यस्य कस्यचिद् वस्तुनः। सत्येनैव समाजस्य स्थितिः वर्तते। यदि सर्वेऽसत्यवादिनो भवेयुस्तर्हि न लोकस्य स्थितिः क्षणमात्रमपि भवितुं शक्नोति। सत्यस्य एव एष महिमा यद् वयं समाजे मनुष्येषु विश्वासं कुर्मः। अतः सिध्यति यत् सत्यं लोकस्याधारोऽस्ति। अत एवोच्यते-

गोभिर्विपश्च वेदैश्च, सतिभिः सत्यवादिभिः।

अलुब्धैर्दानशूरेश्च, सप्तभिर्धार्यते मही॥

एवं च -

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः।

सत्येन वायवो वान्ति सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्॥

सत्यभाषणेन मनुष्यो निर्भीको भवति। सत्यभाषणेन तस्य तेजः यशः कीर्तिः विद्या गौरवं च वर्धन्ते। यः सत्यं वदति, स सर्वेभ्यः पापेभ्योऽपि निवृत्तो भवति। यदा स कस्मिंश्चित् पापे प्रवर्तते, तदा स चिन्तयति यद् अहं सत्यमेव वदिष्यामि, अतः सर्वेषां दृष्टिषु हीनो भविष्यामि, एवं स पापाद् विरमति। सत्यभाषणं वस्तुतो जीवने सर्वोत्तमं तपो वर्तते। उच्यते यत् -

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।

नासत्यं च प्रियं ब्रूयात् एस धर्मः सनातनः॥

सत्यस्य प्रतिष्ठयैव संसारस्य कल्याणम्, अभ्युदयः उन्नतिश्च भवन्ति। यः कश्चित् सत्यम् आश्रयति, तस्य जीवनं सफलं भवति। अतः उच्यते- सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्”। ये सत्यं पालयन्ति, ते सर्वोत्तमं धर्मं कुर्वन्ति। ये च सत्यं परित्यज्य असत्यं भजन्ते, ते महापातकं कुर्वन्ति। समाजस्य देशस्य लोकस्य च मिथ्याभाषणेन नाशो भवति। अत एवोच्यते - नहि सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्।

सत्यस्थ पालनार्थमेव महाराजो दशरथः प्रियं पुत्रं रामं वनं प्रेषितवान्। राजा हरिश्चन्द्रः सत्यपालनार्थमेव सर्वाणि दुःखानि असहत्। युधिष्ठिरः सत्यभाषणस्य प्रभावादेव विजयमलभत्।

महात्मा गान्धिमहोदयः। सत्यस्यैव सदा शिक्षामदात्। भारतस्य राष्ट्रियचिह्ने अपि 'सत्यमेव जयते' इत्याऽधारेण उल्लिख्यते।

अतः सर्वेऽपि लौकिकपारलौकिकाभ्युदयाय सत्यमेव सदा भाषणीयम्।

आधुनिकयुगे संस्कृतशिक्षाकाय शैक्षिकप्रविधेः उपयोगिता

भास्करपाणिग्राही

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

साम्प्रतिकयुगे विश्वस्मिन् विश्वे सर्वत्र विज्ञानस्य प्रादुर्भावः परितृश्यते। वैज्ञानिकाविष्कारेण अस्माकं देशे नूतनक्रान्तिः समागता, ज्ञानस्य विस्फोटः सञ्जातः। वैज्ञानिक-ज्ञानस्य कौशलस्य च प्रयोगः विविधेषु क्षेत्रेषु दरीदृश्यते। शिक्षाक्षेत्रे अपि वैज्ञानिकज्ञानस्य प्रयोगः शैक्षिकप्रविधि माध्यमेन क्रियते।

वयं वक्तुं शक्नुमः स्वीयविचारान् अन्यैः सह आदानप्रदानार्थम् अभिव्यक्तिः अपेक्षिता। सा च अभिव्यक्तिः किञ्चित् साधनोपेक्षिता। साधनं नाम भाषा। भाषाज्ञानात् परं प्राप्य वस्तुनः ज्ञानसम्प्रेषणाय कश्चिद् विधिः उपयुज्यते। विधीनां ज्ञानप्रदानं तु भवति, किन्तु रुच्युत्पादनार्थं, ज्ञानस्य सम्यक् सम्प्रसारणार्थं तथा प्रशिक्षणकार्यक्रमे प्रभावशालिशिक्षकस्य निर्माणार्थं शैक्षिकप्रविधिः दिशां निर्दिशति।

शैक्षिकप्रविधिः -

'शैक्षिकप्रविधिः' इत्यत्र 'शिक्षा' 'प्रविधिः' चेति पदद्वयं वर्तते। शिक्षा शब्दस्य उत्पत्तिः 'शिक्ष्' विद्योपार्जनम् इत्यर्थे सञ्जाता। प्रविधिः प्रविधिविज्ञानञ्च इति पदद्वयम् आङ्ग्लभाषायां (Technology) इति शब्दस्य पर्यायपदम्। प्रविधिः इत्युक्ते दैनन्दिनजीवने वैज्ञानिकज्ञानस्य प्रयोगविधिः।

ई. एम. बुटर महोदयानुसारम् - ज्ञानस्य व्यवहारे विनियोगप्रक्रिया एव शैक्षिकप्रविधिः।"

Rebert A. Con - "Educational Technology is the application of Scientific process to man's learning conditions."

सर्वादौ 1926 तमे वर्षे अमेरिकादेशीयेन सिडनी-प्रेसीमहोदयेन ओहियो-विश्वविद्यालये शिक्षकयन्त्राणां निर्माणे शिक्षणप्रविधेः उपयोगः कृतः। तेन एतत् यन्त्रं शिक्षणयुक्तिरूपेण परीक्षणार्थं निर्मितमासीत्।

शैक्षिकप्रविधेः उद्देश्यानि -

शैक्षिकप्रविधिः शिक्षायाः उद्देश्यानि न निर्धारयति अपितु शिक्षणोद्देश्यानि व्यवहारिकरूपेण परिभाषते। शिक्षाक्षेत्रे यन्त्राणाम् उपयोगेन मुख्यतः ईदृशोद्देश्यपूर्तिः भवितुमर्हति। यथा-

(1) ज्ञानस्य सञ्चयः (2) ज्ञानस्य प्रसारः (3) ज्ञानस्य विकासः

शैक्षिकप्रविधेः क्षेत्राणि -

शैक्षिकप्रविधेः क्षेत्रन्तु बहुविस्तृतमस्ति। कार्यानुसारेण उपयोगानुसारेण च यथा -

(1) व्यवहारप्रविधिः (2) शिक्षणप्रविधिः (3) अनुदेशनप्रविधिः

(4) अनुदेशनप्रारूपप्रविधि:

शैक्षिकप्रविधि: उपयोगिता -

वैज्ञानिकेऽस्मिन् युगे नवीनतमाविष्काराणां पदार्पणेन जगति ज्ञानस्य तीव्रगत्या प्रसारः प्रचारः जातः। साम्प्रतं प्रविधिं विना शिक्षायाः विषये कल्पनाऽपि अतिदुर्लभा प्रतीयते। अतः शैक्षिकप्रविधिः महत्त्वविषये इत्थं वक्तुं शक्यते यथा -

- (1) शिक्षकाय उपयोगिता
- (2) अधिगमक्षेत्रे उपयोगिता
- (3) समाजार्थम् उपयोगिता
- (4) शैक्षिकप्रशासने सहायकः
- (5) विषयाणां सम्बन्धस्थापने सहायकः
- (6) अनौपचारिकशिक्षायां सहायकः
- (7) प्रशिक्षणे उपयोगी

संस्कृतशिक्षकाय शैक्षिकप्रविधि: उपयोगिता -

शैक्षिकप्रविधौ प्रवीणः शिक्षकः छात्राणां व्यवहारान् अधीत्य तत्र वाञ्छितं परिवर्तनम् आनेतुं शक्नोति। विषयज्ञः स्यात्, अपि तु व्यवहाराध्यनकुशलः स्यात्। शैक्षिकप्रविधिः एतस्मिन् क्षेत्रे शिक्षकं समर्थं निर्माति। कस्मिन् समये किं प्रकरणं केन विधिना, कैः दृश्यश्रव्यसाधनैः पाठनीयमिति मार्गदर्शनं करोति। दूरदर्शनम्, आकाशवाणी सङ्गणकम् इत्यादिसाधनानि उपयुज्य कथं तेषां प्रसारणार्थं प्रयोगः कर्तव्यः इति प्रविधिः निर्दिशति।

आधुनिकयुगे संस्कृतशिक्षकाय शिक्षणप्रविधिज्ञानं नितान्तमपेक्षते। मानवाधिगमस्य सम्पूर्णप्रक्रियायाः संशोधनार्थम् एषः प्रयुज्यते। शैक्षिकप्रविधिः ज्ञानस्य तादृशी काचित् शाखा भवति या विभिन्नप्रविधीनां यान्त्रिकं प्राकृतिकविज्ञानं व्यवहारिकविज्ञानं च प्रयुज्य शैक्षिकप्रक्रियां सुदृढां कर्तुं प्रयतते।

‘संस्कृतम्’ नाम न केवलं भाषामात्रम् अपि तु अस्माकं जीवनमूल्यानाम् आधारस्थली वर्तते। सा सर्वव्यापिनी, विकासपरा, सुमधुरा, सुललिता, नितरां नमनशीला, जीवनसम्पन्ना सूक्ष्मा बोधक्षमा च। एतादृश्याः विशिष्टसंस्कृतभाषायाः शिक्षकशिक्षायाः व्यवस्था कीदृशी भवेत्? संस्कृतशिक्षणं कथं रुचिकरं सुग्राह्यं च भवेत्? एतेषां प्रश्नानां सन्दर्भे नवचिन्तनस्य आवश्यकता अस्ति।

शिक्षकशिक्षायाः उद्देश्यानि समयस्य परिस्थितौ नामनुगुणञ्च परिवर्तमानानि सन्ति, अतः संस्कृतशिक्षाशिक्षायाः उद्देश्येषु अपि परिवर्तनम् अपेक्षितम् यतोहि परिवर्तितोद्देश्यानुसारेण शिक्षाव्यवस्थायामपि परिवर्तनं भवति। पारम्परिकशिक्षणद्वारा छात्रेषु रुचिः न उत्पद्यते। एतदर्थं आधुनिककाले विषयं, सरलं रुचिकरं च कर्तुं शिक्षकेण कश्चन् विशिष्टप्रयोगः कृतः वर्तते येन कक्षासम्प्रेषणं प्रभावपूर्णं भवति। नूतनविधीनां प्रविधीनां प्रयोगेण छात्राः अभिप्रेरिताः भविष्यन्ति।

लेखनशिक्षणम्

प्रकाश पाणिग्राही

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

भाषायाः रूपद्वयमस्ति मौखिकं, लिखितञ्चेति। वर्णात्मकशब्दैः भावानामभिव्यक्तिः मौखिकं रूपं भवति। एतेषां वर्णानाम् लेखात्मकसङ्केतैः, लिखितरूपेण निबन्धनं भाषायाः लिखितं रूपं भवति। मौखिकं रूपं तात्कालिकं भवति। लिखितन्तु स्थायी भवति। मौखिकन्तु प्रत्यक्षं विद्यमानान् जनान् एव बोधयति। लिखितन्तु देशान्तरे, कालान्तरे च नियमान् अपि जनान् बोधयति। अतः स्पष्ट-सुन्दर-अक्षराणां लेखनं भाषाध्ययनस्य प्रमुखमङ्गं भवति।

लेखनशिक्षणस्य विषये पण्डितानां मतभेदो दृश्यते। प्रसिद्धः शिक्षादार्शनिकः फ्रोबेलमहोदयः एवमभिप्रैति यत् बालकाः प्रथमं वाचने शिक्षिताः भवेयुः। यदा बालकाः अक्षराणां प्रत्यभिज्ञाने समर्थाः भवन्ति, तदा लेखनशिक्षणमारब्धव्यमिति। मारियामाण्टेसारीमहोदयायाः आशयः एतद् विपरीत एव वर्तते। प्रथमं बालकेभ्यः लेखनशिक्षा दातव्या। तेन शारीरिकक्रियायां मांसपेशीनां नियन्त्रणं सिध्यति। ततः परं बालकाः पूर्वपरिचितानां लिखिताक्षराणां वाचने रुचिमादधति। एवं बालकाः पाठ्यविषयाणां सरलतया वाचने समर्थाः भवन्ति।

अन्ये केचित् तृतीयं मतमुपस्थापयन्ति वाचनस्य लेखनस्य च शिक्षणं युगपदेव स्यादिति। अत्रैतदेव मतं युक्तं प्रतीयते यतः दर्शनं, श्रवणं, वाचनम् लेखनमिति विभिन्नाः व्यापाराः परस्परम् उपकारकाः भवन्ति। सूक्ष्मेक्षिकया वीक्षणेन देवनागरीलिपिशिक्षणे वाचनलेखनयोः युगपत् शिक्षणं लाभदायकं भवति। यतः देवनागरीलिप्याम् उच्चार्यमाणानां वर्णानां सङ्केताः निश्चिताः सन्ति। तथा च वाचने लेखने च वर्णानां समानरूपता वर्तते। आङ्ग्लभाषायान्तु तद् विपरीतं भवति।

सुन्दरलेखनस्य उपायाः - लेखनसौन्दर्यस्य सम्पादनाया निम्नोक्ताः विषयाः भवन्ति।

- (1) उपवेशनस्य, लेखनीग्रहणस्य च रीतिः।
- (2) लेखनसामग्री।
- (3) अक्षराणां रचना।
- (4) अध्यापकस्यादर्शः।
- (5) अभ्यासः।
- (6) सुलेखप्रतियोजिता।
- (7) आकर्षकमुदाहरणम्।
- (8) रूपरेखानुकरणविधिः।

विद्यालये पुस्तकालयस्य महत्त्वम्

बिरेन्द्रबढेई

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

ध्यानपूर्वकं विचारणमभ्यसनं पठनं च अध्ययनं भवति। अध्ययनेन कार्यसम्पादनशक्तिः उदेति, ज्ञानञ्च वर्द्धते। जीवनस्य सफलतायाः कृते अत्यन्तम् आवश्यकम् अस्ति अस्य। अत एवाध्ययनं मानवहिताय परमावश्यकम्।

अध्ययनस्य सम्बन्धो विद्यया साकं भवति। यद्यपि विद्यालयेषु गुरुकुलेषु अध्यापकात् शिक्षकात् वा विद्याप्राप्तिः अध्ययनं भवति। तथापि स्वतः अनुभवेन शास्त्रलोचनेन वा ज्ञानप्राप्तिः अध्ययनस्य मूल-प्रकृतिः। सामान्यतः विद्यालयेषु शिक्षकेभ्यः छात्राः विद्यां प्राप्नुवन्ति प्रमाणपत्राणि च लभ्यन्ते। परं स्वतः यदा ज्ञानार्थं तत्परो भवति मनुष्यः, तदैव तेन ज्ञानं प्राप्यते। अध्ययनाय समुचितवातावरणं पुस्तकालये एव भवति इति। किमर्थम् इत्युक्ते तत्र स्वच्छ-शान्त-प्रकाशयुक्तवातावरणस्य व्यवस्था भवति।

विद्यालये पुस्तकालयस्य महत्त्वपूर्णं स्थानं भवति। वस्तुतः प्रधानाध्यापकः विद्यालयस्य मस्तिष्कं, शिक्षकः स्नायुतन्त्रं, पुस्तकालयश्च तस्य हृदयं भवति।

पुस्तकालयस्य अर्थः -

पुस्तकालयः इति शब्दस्य आङ्ग्लभाषायां LIBRARY इति पर्यायः भवति। अस्य LIBRARY इति शब्दस्य निष्पत्तिः लाटिन् भाषायाः LIBERA इति शब्दाज्जाता। अयं लाटिन्भाषायाः शब्दः 'पुस्तक' शब्दस्य बाचकः अस्ति।

अतः LIBRARY इति शब्दस्य तात्पर्यं भवति तत्स्थलं यत्र पुस्तकेषु सञ्चिताः अनुभवाः विचाराः भावाश्च पाठकेभ्यः सरलतया दातुं शक्यन्ते।

पुस्तकालयः इत्यस्मिन् पदे पदद्वयं वर्तते। प्रथमं पदं 'पुस्तकम्' अपरं पदं च आलयः इति। सामान्यरूपेण एतस्य पदस्य अर्थः पुस्तकानां समूहः यत्र भवति तदेव पुस्तकालयः इति।

महत्त्वम् -

अथ पुस्तकालयः विद्यालयकुटुम्बस्य बौद्धिकाभिवृद्धिस्थानं भवति। छात्राः पुस्तकालये विभिन्नविषयाणां, भाषाणां, ग्रन्थानां, महापुरुषाणाञ्च ज्ञानं सम्पादयन्ति। एवं छात्राणां प्रारम्भिकसंज्ञानात्मकविकासः यथा सूचनानां प्राप्तिः तथा च अध्ययनप्रवृत्तीनां सर्वाङ्गीणविकासः भवति। पुस्तकालयः ज्ञानस्य भण्डारः भवति। भवता यथा भगवतां पूजां कर्तुं (भणितुं) देवालये उत्सुकाः भवन्ति तद्वत् छात्राः पुस्तकालये पुस्तकानाम् एवं समाचारपत्रिकादीनां पठनेन नितरां स्वाध्याये उत्सुकाः भवन्ति।

विद्यालये पुस्तकालयः नितान्तम् आवश्यकं वर्तते। किमर्थम् इत्युक्ते यदा कक्षा रिक्ता भवति तस्मिन् समये छात्राः पुस्तकालयं गत्वा विभिन्नानि पुस्तकानि, पत्राणि च पठित्वा समयस्य सदुपयोगं कर्तुं शक्नुवन्ति। विद्यालये विभिन्नाभिरुचीनां विकासाय पुस्तकालयस्य

साहाय्यम् आवश्यकं भवति। निर्धनच्छात्राः उपकृताः भवन्ति। सांस्कृतिक-बौद्धिक-शारीरिक-रचनात्मक-सर्जनात्मकविकासाः, लेखनकौशलं, मौनवाचनकौशलं मानसिकविकासः एवं साहित्यादिविषये विकासः भवति। ज्ञानार्जनेन अध्यापनसमये छात्राणां न केवलं पाठ्यविषये एव अध्ययनाध्यापनं भवति अपितु पाठ्येतरविषयानमपि अधीत्य ज्ञानं सम्पादयन्ति। विद्यालयपुस्तकालयः न केवलं छात्राणामेव उपयोगाय एवं लाभाय भवति, अपितु अध्यापकानामपि उपयोगाय भवति। अध्यापकानां बौद्धिकविकासाय एवं विषयज्ञानाय च उपकरोति। अनेन विभिन्नविषयाणां ज्ञानार्जनं सम्भवति। शिक्षकाः वदन्ति यत् पाठ्यपुस्तकाध्ययनेन बालकानां सम्पूर्णज्ञानं न भवितुमर्हति। तत्सम्पूर्तिः पुस्तकानामेव समाचारपत्रिकादीनाम् अध्ययनेन कर्तुं शक्यते। पुस्तकालयः विद्यालयस्य बौद्धिकप्रयोगशालारूपेण स्वीकृतः अस्ति। यत्र छात्रेषु अध्ययनं प्रति रुच्युत्पादने वैयक्तिकसामूहिकयोजनानां, साहित्यिकक्रियाणां, विनोदव्यापाराणां पाठ्यसहगामिक्रियाणाञ्च साहाय्यं प्राप्यते।

पुस्तकालये प्रसिद्धलेखकानां पुस्तकं भवति। महापुरुषाणां जीवनचरितम् इत्यादिभिः सम्बन्धितमहत्वपूर्णकथायाः ज्ञानं भवति। महापुरुषाणां जीवनचरितं पठित्वा छात्राः अभिप्रेरतो भूत्वा देशहिताय किमपि कर्तुं शक्नुवन्ति। पुस्तकं छात्राणां मित्रं भवति। तस्य रक्षणाय पुस्तकालयस्यावश्यकता विद्यालये भवति। पुस्तकमाध्यमेन एव ज्ञानस्य संचयः प्रचारः प्रसारश्च भवति। अद्यतनयुगं ज्ञानविज्ञानस्य युगं भवति। अतः छात्राणाम् अधिकज्ञानार्जनाय विद्यालये पुस्तकालयस्य महत्वम् अत्यावश्यकं भवति।

निष्कर्षः -

अस्माकं जीवनस्य सर्वासामपि समस्यानां समाधानार्थं विद्यमानः पथप्रदर्शकः राजपथ- एव शिक्षा। बालकाः शिक्षाग्रहणार्थं विद्यालयं प्रति आगच्छन्ति। छात्राणां सर्वाङ्गीणविकासः विद्यालये एव भवति। विद्यालयस्य हृदयं भवति पुस्तकालयः, यत्र विविधानि पुस्तकानि पठनार्थं संगृहीतानि भवन्ति। मानवानां ज्ञानविस्ताराय अत्यन्तमुपयोगी भवति अयं पुस्तकालयः। छात्राणाम् अध्यापकानाम् च ज्ञानवर्द्धनाय विद्यालयीयः पुस्तकालयः भवति। अत्र शैक्षणिकानि पुस्तकानि संगृहीतानि भवन्ति। निर्धनच्छात्राणां कृते विद्यालयीयः पुस्तकालयः अत्युपयोगी भवति। पुस्तकालयसम्पर्कात् शनैः-शनैः विद्यारुचिः जागर्ति। छात्राः स्वरुच्यनुगुणं पुस्तकं पठित्वा ज्ञानार्जनं कुर्वन्ति। नवीनज्ञानस्य प्राप्तिः अत्रैव भवति। शिक्षकाः वदन्ति यत् सम्पूर्णज्ञानं पाठ्यपुस्तके न भवति तदतिरिच्य अन्योपयोगिग्रन्थाः अपि सम्पूर्णज्ञानप्राप्त्यर्थं सहायकाः भवन्ति। अतः अधिकाधिक ज्ञानसम्पादनार्थं विद्यालये पुस्तकालयस्य अत्यावश्यकता भवति। किमर्थम् इत्युक्ते पुस्तकालयः एव ज्ञानस्य भाण्डारः भवति। अतः वक्तुं शक्यते यत् प्रत्येकस्मिन् विद्यालये उत्तमपुस्तकालयस्य व्यवस्था भवेत् इति।

परीक्षाप्रबन्धनम्

चैतन्यप्रसादमाझी

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

परीक्षायाः सामान्योद्देश्यानां प्राप्तये निश्चितावश्यकतानां पूर्तये च मानवानां भौतिकसंसाधनानां च नियोजनं, संघटनं, मूल्याङ्कनं च परीक्षाप्रबन्धनमिति।

प्रत्येकमपि प्रबन्धने अंशत्रयस्य मूल्याङ्कनम्? POSDCQRB माध्यमेन परीक्षायाः प्रबन्धनं सरलं भवितुमर्हति।

परीक्षायः योजनानिर्माणम् -

क्रियमाण कार्यकरणस्य पूर्वानुमानं योजना इति। अत्र परीक्षायाः कृते योजनायाः निर्माणस्य चर्चा भवति। अर्थात् परीक्षायाः स्वरूपं लिखित-मौखिकं वा, वार्षिकं अर्द्धवार्षिकं वा, एकघण्टात्मकं त्रिघण्टात्मकं वा, प्राथमिक-माध्यमिक-उच्चस्तरीयं वा भवेत्। यथा-

1. प्रश्नपत्राणां ब्लूप्रिन्टनिर्माणम्।
2. प्रश्नानां काठिन्यस्तरनिर्धारणम्।
3. परीक्षायाः उद्देश्यनिर्धारणम्।
4. भौतिक-मानवसंसाधनानां संघटनम्।
5. परीक्षायै आवश्यकसूचनानां संकलनम्।
6. मूल्याङ्कनपरिषदः निर्माणम्।

परीक्षायाः क्रियान्वयनम् -

परीक्षायाः कानिचन विशेषकार्याणि भवन्ति। यथा - छात्राणाम् अर्जितज्ञानस्तरस्य परीक्षणम् शिक्षणविधेः सफलतायाः ज्ञानम् शिक्षणोद्देश्यसफलतायाः ज्ञानम्, छात्राणां स्तरनिर्धारणस्य चयनस्य च व्यवस्था छात्रेषु प्रतियोगिताभावनाजागरणम् इत्यादीनि परीक्षायाः क्रियान्वयनक्षेत्राणि प्रवर्तितानि। विशिष्टपरीक्षा यथा -

1. परीक्षानिरीक्षकाणामध्यापकानां नियुक्तिः।
2. परीक्षानियन्त्रकस्य नियुक्तिः।
3. मूल्याङ्कनपरिषदः नियुक्तिः।
4. छात्रेभ्यः प्रश्नपत्रं परीक्षायाः यथा समये प्रदानम्।

परीक्षायाः मूल्याङ्कनम् -

अत्र छात्रैः प्रदत्तप्रश्नोत्तराणां यथोचितरूपेण विश्लेषणं कृत्वा मूल्याङ्कनप्रदानमेव इव मूल्याङ्कनाय एकस्या मूल्याङ्कनपरिषदः निर्माणं कर्तव्यं यत्र प्रशिक्षितमूल्याङ्कनकर्तारः स्युः।

1. उत्तरपुस्तिकानां मूल्याङ्कनाय एतादृगजनस्य नियुक्तिः स्यात् यस्य शिक्षणानुभवः पर्याप्तः स्यात्।
2. अङ्कनविधेः" सार्वजनिकरूपेण स्पष्टनिर्देशः स्यात्। मूल्याङ्कनपरिषदः प्रश्नपत्रनिर्मात्रा

सहेव उत्तरपुस्तिकायाः मूल्याङ्कनं कुर्यात्।

3. फलाङ्कप्रदानसमये अशुद्धिकृताङ्काः न्यूनीकरणीयाः इत्येतस्य निर्धारणमपि पूर्वतः एव भवतु।
4. मूल्याङ्कने वास्तविकतामानेतुं विद्यार्थिनः नामाङ्कनं वर्ज्यं भवेत्।

परीक्षायां ICT इत्यस्य भूमिका -

ICT इत्युक्ते सूचनासम्प्रेषणप्रविधिः। अस्य पूर्णनाम भवति (Information and Communication Technology) संचारक्षेत्रे वैज्ञानिकैः स्वप्रगल्भ्याधारेण वर्तमानिकसमयः सूचनाक्रान्तियुगरूपेण स्वकृतः। व्यवसाय उद्योग-वाणिज्य-शैक्षिक- आदिसंचारप्रगतौ च अस्य सूचनासम्प्रेषणप्रविधेः सहयोगदानं वर्तते। यथा-यथा शैक्षिकजगतः विकासः जायते। जनानाम् आवश्यकताः अभिवर्द्धन्ते। तथा संचारमाध्यमानां नवीनस्वरूपाण्यपि भवन्ति। वर्तमानसमये व्यवसायविकासः तथा संचारविकासः उभावपि परस्परपरिपूरकौ स्तः।

परीक्षाप्रणाल्यां संगणकस्योपयोगः -

1. संगणकमाध्यमेन परीक्षणपदानां निर्माणम् प्रश्नपत्रनिर्माणं च क्रियते।
2. संगणकं प्रश्नानां संग्रहणं कृत्वा चिरस्थायीकरोति।
3. परीक्षाप्रणाल्याः सम्बन्धितप्रतिकृतिः प्रतिलेखः, अङ्कपत्रम् इत्यादीनां निर्माणम् अनेनेवमाध्यमेन त्रुटिरहितरूपेण क्रियते।
4. संगणक प्रयोगेण परीक्षायाः आवेदनपत्रं (Online) पूरयितुं शक्यते।
5. संगणकस्य (In.NET) मध्ये (Online) प्रवेशपरीक्षा परीक्षाः च भवति।
6. उत्तरपुस्तिकायां मूल्याङ्कनं संगणक माध्यमेन शीघ्रतया भवति।

परीक्षाक्षेत्रे (ICT) इत्यस्य लाभाः -

1. सहजरूपेण परीक्षादिकार्याणां सम्पादनम्।
2. स्वल्पे समये अधिककार्यसम्पादनम्।
3. कार्येषु प्रामाणिकता भवति।
4. ICT माध्यमेन परीक्षाकार्येषु पारदर्शिता भवति।
5. स्वल्पव्ययता।

हानिः -

1. कदाचित् (डाटा) सूचनाया लोपः भवति। यदि प्रक्रिया सम्यक् न भवति चेत्।
2. सूचनायाः (डाटा) इत्यस्य चौर्यं कृत्वा अपरे जनाः दुष्प्रयोगं कुर्वन्ति।
3. वैद्युतिकक्षेत्रे समस्या यदि विद्युत् भवति। तर्हि कार्यं सम्पादने क्लेशः।

न्यायदर्शने शैक्षिकचिन्तनम्

सस्मितानाथः

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

न्यायः आत्मदर्शनस्यैकोपायः। अतः व्याकरणदृष्ट्यापि विचार्यते इण्” प्रापणे धातोः घञ्” प्रत्यये आय् आदेशे नानयन्ति प्रापयन्ति तर्काः ऊहाः अनेनेति न्यायः। तर्कप्रमाणयोश्च प्रस्तुतेः न्यायः एका विद्या वर्तते। न्यायसूत्रभाष्यकरणे भाष्यकारेण वात्स्यायनोक्तं यत् प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः।” न्यायः कस्यचिद्वस्तुनः यथार्थगणनाय, प्रतिपादनाय, प्रतिपाद्यविषयस्य संसिद्धये समीक्षणाय चालयनाय च एका युक्तिः। भारतीयास्तिकषड्दर्शनेषु न्यायदर्शनम् अन्यतमम्। न्यायदर्शनस्य प्रणेताः सन्ति अक्षपादगौतममुनयः। आस्तिकनास्तिकदर्शने जीवनस्य व्यावहारिकाध्यात्मिकयोः उभयोः पक्षयोः वर्णनं प्राप्यते। भौतिकाध्यात्मिकसमस्यानां समाधानाय चिन्तनम्, ज्ञानलोके जीवनस्य सम्यक् सञ्चालनञ्च भारतीयदर्शनस्य प्रमुखोद्देश्यम्। भारतीयदर्शनं न केवलं मानसिकव्यायामः अपितु अस्य व्यावहारिकपक्षः सैद्धान्तिकपक्षानामपेक्षया सवलः वर्तते।

न्यायदर्शने शैक्षिकोद्देश्यानि -

- (1) न्यायदर्शनस्य मुख्योद्देश्यं भवति मोक्षप्राप्तिः।
- (2) न्यायदर्शने प्रमाण-प्रमेयादिषोडशपदार्थाः निरूपिताः सन्ति।
- (3) मोक्षस्वरूपस्य वर्णनसमये महर्षिगौतमेनोक्तं यत् दुःखध्वंस एव मोक्षः। मोक्षप्राप्त्यर्थं पदार्थानां ज्ञानं, कर्तव्यस्य च ज्ञानं केन माध्यमेन भवेत् अस्य कृते प्रमाणचतुष्टयं वर्णनम्। तदर्थं षोडशपदार्थानां ज्ञानमपि कर्तव्यम्। ते च षोडशपदार्थाः प्रमाण- प्रमेय- संशय- प्रयोजन-दृष्टान्त सिद्धान्त- अवयव- तर्क- निर्णय- वाद- जल्प- वितण्डा- छल- जाति- निग्रहस्थानानि। एतेषां पदार्थानां तत्त्वज्ञानेन छात्राणां मानसिकोन्नतिर्भविष्यति। अस्माकं जगति कानि-कानि तत्त्वानि सन्ति; केनोपायेन जीवनमूल्यबोधः जायते इति विषये अवगमिष्यन्ति। न्यायदर्शनस्यापरनाम वर्तते आन्वीक्षिकी।

न्यायदर्शने पाठ्यचर्या -

न्यायदर्शने पाठ्यचर्याविषये स्पष्टनिर्देशः यद्यपि नास्ति परञ्च षोडशपदार्थानां सम्यक्ज्ञानं तदा एव भविष्यति यदा बालकेषु तार्किकक्षमता तथा चित्तवृत्तिनिरोधः कथं भवेदित्यस्य ज्ञानं भवेत् अत एव न्यायदर्शनशिक्षणेन सह पाठ्यक्रमे गणित-विज्ञान-योगशास्त्र- शारीरिकशिक्षादिविषयाणां समावेशः कर्तव्यः।

न्यायदर्शने शिक्षणविधयः -

- (1) प्रत्यक्षविधिः - इन्द्रियार्थसन्निकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम्।
- (2) दृष्टान्तविधिः - दृष्टान्तविधेः अपरनाम उदाहरणविधिः वर्तते। उच्चकक्षायां

वादविधिः समस्यासमाधानाय महत्वपूर्णः।

(3) अनुमानविधिः – महर्षिगौतमेनोक्तं, तत्पूर्वतर्कमनुमानम्”। पाश्चात्यदार्शनिकैः मन्यते यत् ज्ञातस्याधारेण अज्ञातस्य निर्वचनमेव अनुमानम्।

(4) तर्कविधिः – व्याप्यस्याधारे व्यापकस्य प्रमाणीकरणं नाम तर्कः।

(5) अवयवविधिः–विषयं लघुपदे विभज्य प्रत्येकं पदस्थ तर्कणोपस्थापनमेव अवयवविधिः।

न्यायदर्शने अनुशासनम् –

न्यायदर्शने अनुशासनस्य महत्त्वं वर्तते। न्यायदर्शने आध्यात्मिकलौकिकज्जोभयोः अनुशासनयोः महत्वमस्ति। योग-प्राणायामादिद्वारा आन्तरिकानुशासनं प्राप्यते। न्यायदार्शनिकैः मन्यते तत्त्वज्ञानाय समाधेः आवश्यकता, न्यायसूत्रे वर्णितमस्ति–

समाधिविशेषाभ्यासात्”

छात्राणां शृङ्खलितबुद्धिनिर्मितं तेषां मानसिकस्वास्थ्यसमुत्थापनाय समाधिः सहायकः भवति। योगमाध्यमेन इन्द्रियाणां संयमाभिवर्धनं भवति।

छात्राध्यापकयोर्मध्ये सम्बन्धः –

न्यायदर्शनमपि अत्यादर्शनानुकूलशिक्षासाधने महत्त्वं ददाति अत्र छात्राः साधकाः, स्वसंशयान् गुरुभिः साकं सप्रमाणेन दूरीकुर्वन्ति। छात्राः गुरुणा सह वाद-विवादद्वारा उत्तमविचारान् प्राप्नुवन्ति। उक्तम् अस्ति .

ज्ञानग्रहणाभ्यासस्तद्विधैश्च सह संवादः।

तं शिष्यगुरुसब्रह्मचारिविशिष्टश्रेयोऽर्थिभिरनुसूयिभिरभ्युपेयाम्”

विद्याध्ययनम् अभ्यासश्च विषयमर्मज्ञैः सह कर्तव्यः।

न्यायदर्शनं न केवलं छात्रेभ्यः आवश्यकम्। अपितु मानसिक-तार्किकक्षमताभि- वर्धनाय सर्वेषां कृते हितकारि भवति। गुरुकुलशिक्षापद्धत्याम् अध्यापनोद्देश्यं छात्रेभ्यः न्यायिकशिक्षया सह तार्किकक्षमताभिवर्धनमपि वर्तते।

शिक्षायाः स्वरूपम्

संयुक्तादासः

शिक्षाशास्त्री, द्वितीयवर्षम्

शिक्षायाः अर्थः – शिक्षा-विद्योपादाने इत्यस्माद् धातोः गुरोश्चहलः इति पाणिनीयसूत्रेण ‘अ’ प्रत्यये इति। अजाद्यतष्टाप्” इति टापि शिक्षा इति शब्दः निष्पद्यते। शिक्षाशब्देन प्रमुखतया ‘विद्याग्रहणं’ मन्यन्ते।

आङ्ग्लभाषायां शिक्षाशब्दः Education नाम्नाभिधीयते। Education इति शब्दः लेटिन् भाषायाः Educare, Educere, Educatum इति पदत्रयस्याधारेण उत्पन्न इति शिक्षाशास्त्रिणाभिमतम्।

Educare - To bring up परिपालनम्।

Educere - To lead out परिप्रकाशनम्।

Educatum 'kCns E + Duco शब्दद्वयं विद्यते।

DUCO - बहिरानयनम्।

पुनः शिक्षापदस्य निर्देशः (Instruction) शिक्षणम् (Teaching), प्रशिक्षणम् (Training), अनुशासनम् (Discipline), पालनपोषणम् (Breeding), संस्कृतिः (Culture) इत्याद्यर्थः प्रतीयन्ते।

शिक्षायाः व्यापकार्थः- शिक्षा नाम आजीवनं प्रचाल्यमाना काचित् गतिशीला प्रक्रिया” इति स्वीकर्तव्यः।

प्रो. डम् विल वदति यत् - शिक्षायाः व्यापकार्थे ते सर्वे प्रभावा अन्तर्भवन्ति, ये हि व्यक्तिं जन्मतः आरभ्य मृत्युपर्यन्तं प्रभावयन्ति” इति।

शिक्षायाः संकुचितार्थः - विद्यालये प्रदीयमाना शिक्षा” इति अवधेयम्। Education is the fourth will in the class-room. अस्यायमभिप्रायः यत् बालकः निश्चितयोजनानुसारं निश्चितपाठ्यक्रमानुसारं निश्चितविधिमाश्रित्य निश्चितोद्देश्यमाधारीकृत्य च शिक्षां प्राप्नोति।

शिक्षायाः प्रक्रियाः -

यदारभ्य मानवस्य ज्ञाननेत्रे उद्घटिते तदारभ्य अद्यावधि शिक्षाशब्दः विद्याग्रहणे प्रसिद्धः। भगवता मनुनोक्तम्-

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥इति॥

शिक्षानामाजीवनप्रचाल्यमाना काचित् प्रक्रियेति। शिक्षा तादृशी प्रक्रिया वर्तते, यथा प्रक्रियया मनुष्यस्य जन्मजातशक्तीनां स्वाभाविक-सामञ्जस्यपूर्णो विकासो भवति। एडम्समहोदयेन शिक्षा द्विमुखीप्रक्रियारूपेण मन्यते। एवं गुरुशिष्यौ च प्रमुखत्वेनाङ्गीकरोति। एवञ्च शिक्षा तादृशी प्रक्रिया अस्ति यस्यां व्यक्तिः अपरव्यक्तये ज्ञानं प्रदाय तस्याः प्रकृतिं विकासयति संवर्धयति परिवर्तयति च। रॉसमहोदयोऽपि वदति- चुम्बकस्य यथा ध्रुवद्वयं भवति तथा शिक्षायामपि ध्रुवद्वयस्य आवश्यकता भवति। तदध्रुवद्वयं भवति शिक्षकः छात्रश्च। अमेरिकादेशीयः प्रसिद्धशिक्षाशास्त्री डिविमहोदयः शिक्षनाम विमुखी प्रक्रिया इति। शिक्षकः-छात्रः-पाठ्यक्रमश्च। डिवि वदति मानवः सामाजिकप्राणी अतस्तस्य विकासः समाजे समाजेनैव वा भवितुमर्हति।

आधुनिकशिक्षाशास्त्रिणः शिक्षायाः बहुमुखप्रक्रियां स्वीकुर्वन्ति। साम्प्रतं प्रत्येकं ज्ञानक्षेत्रे निरन्तरविकासत्वात् सर्वत्र दृष्टिः प्रसारयितुं न शक्यते। तदनुगुणम् अन्येनैव श्रमेण अल्पीयसि काले वहून् विषयान् ज्ञातुं सम्प्रयतते मानवः। न केवलं ज्ञानप्राप्तिक्षेत्रे अपितु शिक्षणस्य प्रत्येकं प्रक्रियायाम् अधिगमोत्पादनं कर्तुं प्रयतते। एतत् सर्वं मनसि निधाय आधुनिकाः वदन्ति यत् - न केवलं शिक्षाप्रक्रियायां छात्रः अध्यापकः पाठ्यक्रमः अपितु तदतिरिच्य अन्यदपि सहायकतत्त्वम् अस्ति इति। तद्यथा -

छात्रः - विद्यालयः

शिक्षाप्रक्रिया - पाठ्यक्रमः

समाजः-समूहः - शिक्षकः।

बालकेन्द्रितशिक्षा

रविन्द्र कुमार

शिक्षाशास्त्री

प्राचीनकाले शिक्षायाः उद्देश्यं बालकानां मस्तिष्के केवलं ज्ञानारोपणं भवति स्म, किन्तु आधुनिकशिक्षाशास्त्रे बालकानां सर्वाङ्गीणविकासोपरि बलं दत्तम् अस्ति। येन कारणेन बालमनोविज्ञानस्य भूमिका सर्वाधिकमहत्त्वपूर्णा वर्तते।

वर्तमानयुगे बालकानां सर्वाङ्गीणविकासे शिक्षकाणां कृते बालमनोविज्ञानस्य ज्ञानम् आवश्यकं भवति। अस्य ज्ञानस्य अभावे न तु शिक्षकाः शिक्षां अधिकाधिकम् आकर्षिकं एवञ्च सरलीरूपा कर्तुं शक्नुवन्ति। अथ च नैव ते बालकानां विभिन्नानां प्रकाराणां समस्यानां समाधानं कर्तुं शक्नुवन्ति।

- ◆ बालकेन्द्रितशिक्षायान्तर्गते हस्ताधारितगतिविधीनामुपरि बलं दत्तमस्ति।
- ◆ भारतीयशिक्षाविद्-गिजूभाईमहोदयस्य बालकेन्द्रितशिक्षायाः क्षेत्रे विशिष्टयोगदानं प्राप्तम्। बालकेन्द्रितशिक्षायाः विषये महोदयस्य बहूनि पुस्तकानि सन्ति। तस्य साहित्यं बालमनोविज्ञानशिक्षाशास्त्रकिशोरसाहित्यैः सह सम्बन्धितं वर्तते।
- ◆ John D.V. महोदयेन बालकेन्द्रितशिक्षायाः समर्थनं कृतम्। तेन समर्थितः 'लैब-विद्यालयः' प्रगतिशीलविद्यालयस्य उदाहरणमस्ति।
- ◆ John D.V. महोदयानुसारेण 'शिक्षा एका त्रिध्रुवीयप्रक्रियाऽस्ति' यस्य अन्तर्गते शिक्षकबालकपाठ्यक्रमाश्च आगच्छन्ति।
- ◆ अधुनातनशिक्षापद्धतिः बालकेन्द्रिता अस्ति। अस्मिन् अस्यां बालक प्रति पृथक्तया ध्यानं दत्तम् अस्ति। वञ्चितमन्दबुद्धिप्रतिभाशालिनां कृते शिक्षायाः विशेषः पाठ्यक्रमः दातुं प्रयासः कृतः अस्ति। बालकानां प्रवृत्तिः रुचयः एवञ्च क्षमतादीनां विषये शिक्षकस्य ज्ञानं अनिवार्यम्।
- ◆ व्यावहारिकमनोविज्ञानेन व्यक्तीनां परस्परविगिन्नतानामुपरि ध्यानं दत्तम् अस्ति। येन माध्यमेन शिक्षकः प्रत्येकं विद्यार्थिनाम् उपरि ध्यानं विशेषतानां ज्ञानं तथा च तस्य कृते प्रबन्धनमपि कर्तुम् पूर्णतया सन्नद्धः भवति।

अधुनातनसमये शिक्षकस्य कृते शिक्षाशिक्षापद्धतिविषये ज्ञानं पर्याप्तं न अपितु शिक्षार्थिनामपि विषये ज्ञानम् आवश्यकम् अस्ति। यतोऽहि आधुनिकशिक्षा विषयप्रधाना उत शिक्षकप्रधाना न भूत्वा बालकेन्द्रिता अस्ति। अस्याम् अस्य महत्त्वं नास्ति यत् शिक्षकः ज्ञानयुक्तः आकर्षकः गुणयुक्तश्च अस्ति न वा अपितु अस्य महत्त्वम् अस्ति यत् सः बालकस्य व्यक्तित्वस्य विकासं कियत्स्तरे कर्तुं शक्नोति।

बालकेन्द्रितशिक्षायाः विशेषताः - बालकेन्द्रितशिक्षा आधुनिकशिक्षाप्रक्रियायाः अभिन्नमङ्गलं वर्तते।

मनोवैज्ञानिकैः अस्मिन् सन्दर्भे अनेकाः विशेषताः उक्त्वन्ताः। याः अधोलिखिताः -

1. बालकानां ज्ञानम् 2. शिक्षणविधयः 3. मूल्याङ्कनं परीक्षणश्च 4. पाठ्यक्रमः 5. व्यवस्थापनं तथा च अनुशासनम् 6. प्रयोगः एवञ्च अनुसन्धानम् 6. कक्ष्यायां समस्यानां निदानं निराकरणञ्च

बालकेन्द्रितशिक्षणस्य सिद्धान्ताः - बालकेन्द्रितशिक्षणस्य प्रमुखाः सिद्धान्ताः निम्नलिखिताः वर्तन्ते -1. प्रेरणायाः सिद्धान्तः 2. व्यक्तिगताभिरुचेः सिद्धान्तः 3. लोकतान्त्रिकसिद्धान्तः 4. सर्वाङ्गीणविकासस्य सिद्धान्तः 5. चयनस्य सिद्धान्तः ।

कर्मणि एव अधिकारः

दिप्तीमयी महापात्र

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

भगवतः श्रीकृष्णस्य एव उपदेशः व्यवहारदृष्ट्या अपि सार्वत्रिकः सार्वजनीनश्च अस्ति। यो हि मानवः यादृक् कर्मणा संलग्नो भवति, अद्य श्वः वा सः नूनं तस्य फलभाग् भवति भविता वा तदर्थं श्रीकृष्णेनोक्तम्-

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः

लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमहसि॥”

अस्मात् ज्ञायते यत् कर्मणः शास्त्रीयलौकिकसमाधिकारः वर्तते। गीतानुसारं त्यागो भवति त्रिविधः सात्त्विकराजसतामसभेदैः। तेषु संख्यातीत्येषु कर्मसु यज्ञदान-तपोरूपकर्मणां त्यागो त्रिविधः। यतो हि यज्ञ-दान-तपांसि फलेच्छारहितानि। अनासत्तया भगवदर्थं कर्मपरायणं मनीषिणः सदा पावयन्ति। अत एतानि अपि कर्माणि फलानि च विहाय कर्तव्यानि भवन्ति। वर्णधर्मानुसारं श्रीकृष्णः कर्मणां विभागमारभते। तद्यथा -

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं विप्रकर्म स्वभावजम्

शौर्यं तेजो धृतिर्दीक्षं युद्धे चाप्यपलोचनम्

दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्मस्वभावजम्।

कृषि गौरक्षवाणिज्य वैश्यकर्मस्वभावजमे

परिचर्यार्थकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्॥

एवं प्रकारेण चातुर्वर्ण्यस्य कर्मणां संक्षेपेण वर्णनं विधाय निर्दिशति श्रीकृष्णः -

स्वे स्वे कर्मणभिरतः संसिद्धिं लभते नरः”

स्वकर्मविरतो मानवः कर्मयोगेन भाग्यमपि परिवर्तयितुं पारयति। ये च मानवाः कार्यं वा साधयेत् शरीरं वा पातयेत्” इति मन्त्रोच्चारणदीक्षिताः भवन्ति। ते नूनं भुवने कृतकार्या भवन्ति। अत एव भगवता श्रीकृष्णेन भगवद्गीतायां स्पष्टरूपेण स्वीयम् अभिमतं प्रतिपादितम्-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन

मा कर्मफलतीतुर्भूमा ते संगोऽस्त्वकर्मणि॥”

नास्ति ज्ञानं गुरुं विना....

अंकित यादव

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

संसारीणां कति न सुकृता मन्यथा दुर्निदेशा।

तेषां जाता मयि न करुणा न त्रपा सानुभूतिः।

उत्सृज्येतानय मम गुरो! साम्प्रतं लब्धबुद्धिः

त्वामाथातः शरणमभयं युज्यतामात्मदास्ये ॥०१॥

भावार्थः - मैंने नम्र होकर संसार के लोगों के कितने प्रकार के दुर्निदेशों का पालन नहीं किया? परन्तु उन लोगों के मेरे प्रति न तो करुणा पैदा हुई न लज्जा और न ही सानुभूति। इसलिए हे मेरे गुरुदेव! अब मैं इन सबका त्याग करके आपकी भयरहित शरण में आया हूँ। आप मुझे सेवक के रूप में नियुक्त करें॥

ईश्वरं प्रणमेभित्यं ततः पूर्वं गुरुं नमेत्।

यतोहि ईशप्राप्त्यर्थं असौ हि मार्गदर्शकः ॥०२॥

भावार्थः - शिष्य प्रतिदिन परमात्मा को नमस्कार करे, परन्तु उससे भी पहले गुरु को नमस्कार करे क्योंकि ईश्वर की प्राप्ति के लिए निश्चित रूप से वे ही मार्गदर्शक हैं।

आत्मज्ञानी भवेद् यस्तु भवेच्च शास्त्रपारगः।

उत्कृष्टैश्च गुणैर्युक्तो सद्गुरुभिधीयते ॥०३॥

भावार्थः - जो (गुरु) आत्मज्ञानी, शास्त्रों के तत्त्व को जानने वाला तथा उत्कृष्ट गुणों से युक्त होता है वह सद्गुरु कहलाता है।

संसारद्रुममारूढा लभन्ते नरकार्णवम्।

तस्माद्धिं पायते यस्तु तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥०४॥

भावार्थः - संसार रूपी वृक्ष पर चढ़े हुए लोग नरकरूपी समुद्र को प्राप्त करते हैं अर्थात् समुद्र में गिर जाते हैं, और उस नरकरूपी समुद्र से जो उन लोगों की रक्षा करते हैं, उन गुरुदेव को प्रणाम है।

गुरोः कृपा प्रसादेन शुष्यन्ते दुःखसागराः।

शिष्य तेन प्रसादेन प्राप्नोति आत्मसम्पदाम् ॥०५॥

भावार्थः - गुरु के कृपारूपी प्रसाद से दुःखरूपी सागर सूख जाते हैं और शिष्य उसी कृपा रूपी प्रसाद से आध्यात्मिक क्षेत्र में आत्मसम्पदा को प्राप्त करता है।

संगृह्य छन्दसां सारं पुष्पेभ्य षट्पदा इव।

गुरुः बन्ध्यति शिष्येषु, शिष्याणां प्रतिपत्तये ॥०६॥

भावार्थः - जिस प्रकार भौंरा फूलों से सारतत्व ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार गुरु वेदों सा सार ग्रहण करके शिष्यों की उन्नति के लिए उनमें बाँट देता है।

मिथ्यावादी गुरुस्त्याज्यः ज्ञानहीनश्च कृत्रिमः।

स्वीयां शान्तिं न जानाति परशान्तिं करोति किम् ॥०७॥

भावार्थः – शिष्य उस गुरु का त्याग कर देवे जो कि मिथ्या भाषण करने वाला, ज्ञान से हीन तथा बनावटी हो। क्योंकि जो स्वयं की शान्ति नहीं जानता, वह दूसरों को क्या शान्ति देगा।

उत्तमस्तु भवेच्छिष्टाः पूतः खनिजतैलवत्।

गुरूपदेशस्फुल्लिङ्गं गृह्णाति दूरतोऽपि यः ॥०८॥

भावार्थः – जो उत्तम शिष्य है वह डीजल या पेट्रोल की तरह है। जिस प्रकार डीजल यदि अग्नि से दूर हो तो भी वह उसे ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार वह शिष्य भी गुरु के उपदेश रूपी चिंगारी को दूर से ही ग्रहण कर लेता है।

गुरुं त्यजति यः शिष्य जीवन्नपि स स्यान्मृतः।

मन्त्रं त्यजति यः शिष्य दारिद्र्यं तस्य जायते ॥०९॥

भावार्थः – जो शिष्य गुरु का त्याग कर देता है, वह शिष्य जीता हुआ भी मरे के समान है और जो शिष्य मन्त्र का त्याग कर देता उसे दरिद्रता आ जाती है।

पुनर्यदि भवेज्जन्म मम भारतभूतले।

शरणं तव गच्छेयं, कृपा भवतु हे गुरो! ॥१०॥

भावार्थः – इस भारत की धरा पर यदि मेरा पुनः जन्म हो तो, हे गुरो! मैं आपकी कृपा से आपकी ही शरण को प्राप्त करूँ, ऐसी कृपा मुझ पर करें।

संस्कृतस्य महत्त्वम्

रमेश चन्द्र

अनुक्रमाङ्कः : 92

भारतीयभाषाणां जननी संस्कृतं भवति। सर्वाभारतीयभाषायाः संस्कृतभाषया सह घनिष्ठं सम्बन्धं भजन्ते। अतः भारतीयदर्शनस्य, धर्मस्य संस्कृतेश्च भाषारूपेण संस्कृतस्य महत्त्वमनिर्वचनीयमस्ति।

विश्वस्य प्राचीनतमा भाषा भारतस्य अमूल्यनिधिश्च भवति। बौद्धिकभावात्मकाध्यात्मिका कलात्मकनिष्पत्तेः स्रोतः निरन्तरधाराः संस्कृतभाषा वर्तते। अस्याः महत्त्वमेव विशदीकर्तुं प्रयते।

1. ऐतिहासिकमहत्त्वम् :-

संस्कृतभाषायाः साहित्ये प्राचीनेतिहासः सन्निहितो वर्तते। अन्य स्रोतसामाधारेण लिखितः इतिहासः काल्पनिकः स्वान्नाम परन्तु न संस्कृतसाहित्ये विद्यमानानां तथ्यानामधारेण लिखित इति। यथा- कौटिल्यस्य अर्थशास्त्रे, मनुसूतौ, याज्ञवल्क्यस्मृतौ च तत्कालीनसमाजस्य इतिहास उपलभ्यते। पुराणेषु उपनिषत्सु, रामायणे, महाभारते, महाकाव्येषु बौद्धानां त्रिपिटकसाहित्ये जैनानामार्थसाहित्ये च भारतस्य प्राचीनेतिहासः विद्यते।

2. सांस्कृतिकमहत्त्वम् :-

अस्माकं सभ्यता संस्कृतिश्च वेदेभ्यः स्मृतिभ्यः पुराणेभ्यश्च निःसृता भवति। तस्याः स्रोतः संस्कृतभाषा भवति। अस्माकं सभ्यता च संस्कृतपतन्येषु विद्यते। संस्कृतभाषायाः माध्यमेन भारतीयसंस्कृतिः अनूचाना प्रवर्तते। शोडशः संस्कारा उच्चदार्शनिकविचाराः आध्यात्मिकज्ञानं, नैतिकता च संस्कृते समाविष्टाः सन्ति।

3. राष्ट्रियमहत्त्वम् -

भारतस्य एकता, अखण्डता च संस्कृते निहिता वर्तते। भारते अनेकेषु बाह्यभेदेषु जनानां संस्कृतिः समाना वर्तते। कदाचित् जनाः साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता, भाषा इत्यादि विषयेषु कलहं कुर्वन्ति। ईर्ष्या-द्वेषः-घृणा-इत्यादिदुर्भावना उत्पद्यन्ते। तादृशपरिस्थितौ संस्कृतभाषायाः राष्ट्रियं महत्त्व सहायकं भवति।

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।

वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्तेतिः॥ इति

4. अन्तराष्ट्रियमहत्त्वम् -

संस्कृतभाषायाः न केवलं राष्ट्रिय महत्त्वं वर्तते अपितु अन्तराष्ट्रियमहत्त्वमपि वर्तते। उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्” इत्येतमादर्शं भारतीय प्राचीनकालादेव प्रादर्शयन्।

देवस्य पश्य कार्यं न ममार न जीर्यति”।

केवलाधो भवति केवलादी”।

सत्यमेव जयते नानृतम्”।

5. साहित्यिकं महत्त्वम् -

वैदिकसंस्कृते काव्यरचनैव प्रधाना आसीत्। भारतीयभाषासु साहित्येन च न केवलं संस्कृतभाषायाः जालमेव अपितु संस्कृत साहित्यस्य विचारधाराः ध्वन्यलङ्कारादेयश्च अन्तर्भवन्ति। संस्कृतसाहित्यस्य उत्कृष्टरचना विश्वविख्याताः सन्ति।

यथा-

कालिदासस्य-अभिज्ञानशाकुन्तलम्

कालिदासस्य - रघुवंशम्

कालिदासस्य - कुमारसम्भवम्

भवभूतेः - उत्तररामचरितम्

भारवेः - किरातार्जुनीयम् इत्यादि।

6. कलात्मकं महत्त्वम् -

प्राचीनभारते विज्ञानेन साकं कलानामपि उन्नतिः आसीत्। मूर्तिकलायाम्, चित्रकलायाश्च भारत विश्वविख्यातम् आसीत्। सिन्धुघाटयाः अवशेषेषु एतासां कलानाम् उन्नतेः प्रमाणानि विद्यन्ते। एतदतिरिक्ताः - नाट्यकाला, अभिनयसामग्री, वेशभूषा, संगीत, नृत्यम् इत्याद्याः चतुःषष्टिकलाः संस्कृत ग्रन्थेषु वर्णिता।

7. राजनैतिकमहत्त्वम् -

प्राचीनभारते संस्कृतस्य राजनैतिकमहत्त्वदपि वर्तते। कौटिल्यस्य अर्थशास्त्रं मनुस्मृतिः इत्यादि राजनितिपरकग्रन्थाः संस्कृतसाहित्ये लभ्यन्ते। एतेन विवेचनेन स्पष्टं भवति यत् भारतीयसंस्कृतिः भारतीयोन्नतिश्च संस्कृतसाहित्ये सुरक्षिता अस्ति। संस्कृतभाषा द्वारा भारतस्य वास्तविकस्वरूपं ज्ञातुं शक्यते। अतः तदर्थं पुनः संस्कृतस्य उदाहरार्थम् आवश्यकः प्रयत्नः कर्तव्यः।

कर्मणि एव अधिकारः

राई किशोरी दास
शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

शब्दविषयकः अनुभवः शाब्दबोधः। आप्तवाक्यं शब्दः। यथार्थवक्ताः आप्तः। बोधः अर्थात् अधिगमः। अतः शब्दविषयकः बोधः / अधिगमः 'शाब्दबोधः'। शक्तिलक्षणान्यरसम्बन्धेन पदजवय पदार्थस्मृतित्वावच्छिन्न कारणतानिरूपित कार्यत्वं शाब्दबोधः।”
शाब्दबोधे घटकानि तत्त्वानि

- (1) कारणम् (2) सहकारिकारणम् (3) अवान्तरव्यापारः
1. पदज्ञानं कारणम्। अर्थात् शाब्दबोधे कारणम् अपेक्षते।
2. आकाङ्क्षा-योग्यता-सन्निधिः तात्पर्याणां प्रत्येकं ज्ञानं सहकारीकारणम्।
3. वृत्तिज्ञानसहकृतपदज्ञानजन्यपदार्थोपस्थितः अवान्तरव्यापारः।

फलव्यापारयोर्धातुराश्रये तु तिङः स्मृता।

फले प्रधानं व्यापारस्तिङर्थस्तु विशेषणम्॥”

फलस्य व्यापारस्य च वाचकः धातुः तथा आश्रयस्य (फलाश्रयः कर्म, व्यापाराश्रयः कर्ता) वाचकः तिङर्थः भवति। फले व्यापारः प्रधानः भवति। तिङर्थः कर्ता। कर्म व्यापारे विशेषणं भवति।

वैयाकरणानां मते शाब्दबोधः -

- धात्वर्थः कलव्यापारौ।
- तिप्सादि तिङ्प्रत्यायाः भवति आख्यातः।
अतः आख्यातार्थ-तिङर्थः। कर्ता कर्म च आश्रयः भवति।
- कर्ता, कर्म, क्रिया च इत्यस्मात् निष्पन्नः शाब्दबोधे व्यापारः मुख्यः भवति।

यथा - देवदत्तः ओदनं पचति।

शाब्दबोधः - देवदत्ताभिन्नैककर्तृक-ओदनकर्मक-वर्तमानकालिकः विक्लित्युनकूलो व्यापारः।

अत्र कर्ता, कर्म, क्रियाणां च निष्पन्नशाब्दबोधः भवति। अतः शाब्दबोधे व्यापारः मुख्यः भवति।

नैयायिकानां मते शाब्दबोधः -

- धात्वर्थः फयाव्यापारौ।

- आख्यातार्थः (तिङ्र्थः) कृति (यत्न) भवति।

- शाब्दबोधे प्रथमान्तार्थः मुख्यविषयकः भवति।

यथा- देवदत्तः ओदनं पचति।

शाब्दबोधे - ओदनकर्मक विभिन्नत्यनुकूलव्यापारानुकूलकृतिमान् देवदत्तः।

अत्र प्रथमान्तार्थः देवदत्तः प्रधानः भवति, अतः प्रथमान्तमुख्यकः शाब्दबोधः भवति।

अत्र वैयाकरणानां मतवद् धात्वर्थः समानः भवति, परन्तु आख्यातार्थः कृति प्रथमान्तार्थस्य मुख्यतायाः च अनयोः मध्ये भेदः भवति।

मीमांसकानां मते शाब्दबोधः -

- धात्वर्थः केवलं फलम्।

- आख्यातार्थः व्यापारः भवति।

- आश्रयः (कर्त्ता, कर्म) लक्षणायाः अस्थितिः भवति।

यथा- देवदत्तः पचति।

शाब्दबोधे - देवदत्ताभिन्नैककर्तृक वर्तमानकालिक विक्लित्यनुकूलव्यापारः।

अत्र वैयाकरणानां मतानां सम एव भवति। अत्रापि व्यापारमुख्यकः शाब्दबोधः, परन्तु किञ्चिदेव अन्तरम्।

- व्यापार धात्वर्थः न भवति, अपितु आख्यातार्थः

- आश्रयः आख्यातार्थः न भवति, अपितु लक्षार्थः अर्थात् आक्षेपार्थः भवति।

वैयाकरणानां मतेऽपि भेदः -

प्राचीनवैयाकरणानां मते -

(1) धात्वर्थः फलव्यापारौ भवति।

(2) क्रिया कर्तृवाच्ये भवतु उत् कर्मवाच्ये द्वयोः क्षेत्रयोः मध्ये शाब्दबोधव्यापारः एव मुख्यविशेषकः भवति।

नवीनवैयाकरणानां मते -

(1) धातोः फले व्यापारे च पृथग् प्रथग् खण्डशः शक्तिः स्वीक्रियते।

(2) कर्तृवाच्ये - शाब्दबोधे व्यापारः एव प्रधानम्।

(3) कर्मवाच्ये - शाब्दबोधे फलमेव प्रधानम्।

यथा - कर्तृवाच्ये - देवदत्तः ओदनं पचति।

शाब्दबोधे - देवदत्ताभिन्नैककर्तृकः ओदनकर्मकः वर्तमानकालिक विक्लित्यनुकूलव्यापारः।

कर्मवाच्ये - देवदत्तेन ओदनः पच्यते।

शाब्दबोधे - देवदत्तवृत्तिः वर्तमानकालिक व्यापारजन्य ओदननिष्ठ विक्लितिः।

शैक्षिकनिहितार्थः -

- शाब्दबोधेन वाक्यस्य सम्पूर्णस्वरूपस्य ज्ञानं भवति।

- अनेन वाक्ये निहित कर्त्ता-क्रिया-कर्म च सर्वेषां ज्ञानं सम्यक् तथा भवति।

- अनेन लेखन कौशले वैशिष्ट्यता आगच्छति।

– शाब्दबोध द्वारा लेखन-कौशलस्य तथा व्याकरणेऽपि दक्षता आगच्छति।

अधिगमः

रस्मिता धनी

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

अधिगमस्यार्थः -

अधिगमः व्यापकं जीवनपर्यन्तं सततप्रचाल्यमाना काचित् गतिशीला प्रक्रिया वर्तते। अधिगमं जर्मनभाषायां Lernen इति कथ्यते तथा आङ्ग्लभाषायां Learning इति कथ्यते। मनुष्यः जन्मतः मृत्युं यावत् यत्किमपि शिक्षत्यैव। समायोजनद्वारा प्राजानुभवमाध्यमेन सः अधिकाधिकं लाभान्वितं भवति। इमां प्रक्रियां मनोविज्ञाने अधिगमः इति कथ्यते। उदाहरणार्थं - शिशुं सम्मुखे यदा ज्वलन्तं दीपकं नीयते तदा सः तस्य ज्वालां प्राप्तुं प्रयासं करोति। अस्मिन् प्रयासे तस्य हस्तः ज्वलति तथा सः स्वहस्तं बहिरानयति। पुनः यदा तस्य सम्मुखे प्रज्वलितं दीपं नीयते तदा सः स्वीयानुभवानुसारेण दीपकं न स्पृशति। अपितु तस्मात् दूरं गच्छति। इमं विचारमेव स्थितिं प्रति प्रतिक्रियाकरणम् इति उच्यते। अन्यशब्देषु कथितुं शक्यते यत् अनुभावाधारेण बालकस्य स्वाभाविक- व्यवहारे परिवर्तनमायाति।

अधिगमस्य परिभाषाः -

- (1) वुडवर्थ महोदयानुसारं - अधिगमः विकासस्य प्रक्रिया वर्तते।”
- (2) स्कनर महादेयानुसारं - अधिगमः व्यवहारे उत्तरोत्तरसामञ्जस्यस्य प्रक्रिया।
- (3) गेट्स महोदयानुसारं - अनुभवेन व्यवहारे जायमानं परिवर्तनम् अधिगमः”।

अधिगमस्य नियमाः -

Thorndine महोदयेन केचन नियमाः अन्वेषितं ते अधोलिखिता भागद्वयं वर्तते।

(1) **मुख्यनियमाः -**

तत्परतायाः नियमः।

अभ्यासस्य नियमः।

प्रभावस्य नियमः।

(2) **गौणनियमाः -**

बहु अनुक्रिया सिद्धान्तः।

मानसिकस्थितेः नियमः।

आंशिकक्रियायाः नियमः।

समानतायाः नियमः।

साहचर्य परिवर्तनस्य नियमः।

मुख्यनियमाः -

तत्परतायाः नियमः - अस्य नियमस्यानुसारं यदा कोऽपि व्यक्तिः किमपि कार्यं कर्तुं प्रथमतः सज्जः भवति तदा तत् कार्यं शीघ्रमेव अधिगच्छति। यदा व्यक्तिः कार्यकरणार्थं

सुसज्जितः न भवति अथवा शिक्षणे इच्छा न भवति तर्हि सः खिन्नः भवति एवञ्च तस्य अधिगमगतिः अपि मन्दः भवति।

अभ्यासस्य नियमः - अभ्यासस्य नियमानुसारं मनुष्यः यां क्रियां बारम्बारं करोति तां क्रियां शीघ्रमेव अधिगच्छति। यथा- गणितस्य प्रश्नानामभ्यासकरणम्।

प्रभावस्य नियमः - अस्य नियमानुसारं यथा क्रियया मनुष्यस्य जीवने सुष्ठुप्रभावः भवति अथवा सुखशान्तिं प्राप्नोति तां क्रियामाधिगन्तुं सः प्रयतते। एवञ्च यया क्रियया तस्योपरि कुप्रभावः भवति तर्हि सः तां त्यजति।

गौणनियमः -

बहु अनुक्रिया सिद्धान्तः - अस्य नियमानुसारं व्यक्तिस्मिन् यदा कापि नूतना समस्या आगच्छति तर्हि सः तां निवारेणाय विभिन्नप्रतिक्रियामाध्यमैः समाधानम् अन्वेषति। सः प्रतिक्रियां तावत् पर्यन्तं करोति यावत् पर्यन्तं समस्यायाः सुसमाधानं न प्राप्नोति।

मानसिकस्थितेः मनोवृत्तेः वा नियमः - अस्य नियमानुसारं यदा कोऽपि व्यक्तिः अधिगन्तुं मानसिकरूपेण सुसज्जितः भवति। तदा सः शीघ्रमेव अधिगच्छति।

आंशिकक्रियायाः नियमः -

अस्य नियमानुसारं व्यक्तिः किमपि समस्यां साधयितुम् अनेकाः क्रियाः प्रयत्नविस्मृतिश्च इत्याधारेण करोति। सः स्वीयान्तर्दृष्टेः उपयोगं कृत्वा आंशिकक्रियाणां सहायतामाध्यमेन समस्यायाः समाधानं अन्वेषति।

समानतायाः नियमः -

समानतायाः नियमानुसारं यदि आगतसमस्या अथ च मनुष्यस्य पूर्वानुभवमध्ये परिस्थितिर्मध्ये वा साम्यता दृश्यते चेत् समस्यायाः आगमने मनुष्यस्य अनुभवः स्वतः एव स्थानान्तरितं भूत्वा अधिगमे साहाय्यं करोति।

साहाचर्यपरिवर्तनस्य नियमः -

अस्य नियमानुसारं व्यक्तिः प्राप्तज्ञानस्य उपयोगः अन्येषु परिस्थितिषु अथवा सहचारी उद्दीपकं प्रति अपि करोति। यथा - भोजनं दृष्ट्वा कुक्कुरस्य मुखात् स्वतः एव लारस्रावः निपतति। परन्तु कालानन्तरं भोजनद्रोणीं दृष्ट्वा एव लारस्रावः तस्य मुखान् निर्गच्छति।

संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति

शुभश्री जेना

अनुक्रमाङ्कः : 91

सतां सज्जनानां सङ्गतिः सत्सङ्गतिरुच्यते। मानवजीवने सत्सङ्गत्याः प्रभावः सर्वदा परिलक्ष्यते। सद्भिजनैः सह निवसन् मनुष्यः स्वयं सद्गुणोपेतः प्रकृतिसरलः उदात्तभावगुणयुक्तः भवति। सत्सङ्गत्या मनुष्यः परमोन्नतिं प्राप्नोति तस्य प्रतिष्ठा प्रभावः कीर्तिश्च वर्धते। अतः एवोक्तम्-

सद्भिरेव सहासीत सद्भिः कुर्वीत संगतिम्।

सद्भिर्विवादं मैत्रीं च नासद्भिः किञ्चिदाचरेत्॥

मनुष्यः यादृशानां जनानां सङ्गतौ वसति सः तादृश एव सञ्जायते। सत्सङ्गत्या सः सज्जनाः शिष्यः विनीतः व्यवहारकुशलश्च भवति। दुर्जनसङ्गाच्च मनुष्यः स्वयं दुर्जनः दुर्गुणोपेतः दुश्चारितः दुर्मतिश्च जायते। अत एव संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति इत्याभाणकं प्रसिद्धमेव। असतां सङ्गं सर्वथा परित्यज्य वयं सर्वदा सतां सङ्गगतिं कुर्याम। सत्सङ्गतिप्रभावेण शुद्धोऽपि जनः समुन्नतिं याति, प्रतिष्ठां च लभ्यते। तथाहि-

कायः काद्यनसंसर्गतिद धत्रे मारक्तीं द्युतिम्।

तथा सत्सन्निधानेन मूर्खोऽपि प्रवीणताम्॥

अपि च -

यथोदयगिरेर्द्रव्यं सन्निकर्षेण दीप्यते।

तथा सत्सन्निधानेन हीनवर्णोऽपि दीप्यते॥

सृजनात्मकता (Creativity)

सीना मीना

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

आधुनिक युग वैज्ञानिक युग है इसलिए मनोवैज्ञानिकों ने उस अद्भुत योग्यता एवं शक्ति के सम्बन्ध में शोध करने के लिए आकर्षित हुआ। व्यक्ति को प्रतिदिन नये आविष्कार करने एवं कठिन समस्याओं का समाधान ढूँढने तथा जीवन को सुखमय बनाने के लिए सहयोग प्रदान करती है। इसी को सृजनात्मकता कहते हैं।

सृजनात्मकता व्यक्ति की उस क्षमता को कहते हैं जिससे वह कुछ ऐसी नवीन वस्तुओं, रचनाओं या विचारों को पैदा करता है जो नया होता है एवं जो उसे पहले से ज्ञात नहीं होता है। सृजनात्मकता एक ऐसी प्रक्रिया है जो लक्ष्य-निर्देशित (goal-directed) होती है इसमें व्यक्ति को लक्ष्य निश्चित रूप से पता होता है और उसका प्रत्येक व्यवहार इसी लक्ष्य से संबंधित होता है।”

सृजनात्मकता में व्यक्ति कुछ नया एवं भिन्न चीजों का निर्माण करता है। सृजनात्मकता प्रायः सभी प्राणियों में पाई जाती है। यदि माता-पिता सही ढंग से बच्चे का पालन-पोषण करके या अध्यापक बच्चे को अच्छी एवं उपयोगी शिक्षा देकर लाभकारी कार्य करें तो हम कह सकते हैं कि इनमें पर्याप्त मात्रा में सृजनात्मकता विद्यमान है।

सृजनात्मकता का अर्थ (Meaning of Creativity)

सृजनात्मकता एक विशेष ढंग से चिंतन (thinking) करने का तरीका होता है। उसे ही सृजनात्मकता या रचनात्मक चिंतन कहते हैं। सृजनात्मकता एक ऐसी योग्यता है जो किसी समस्या का समाधान करने के लिए नवीन विधियों एवं स्थितियों का सहारा लेती है। यह समस्त प्राणियों में कम या अधिक पाई जाती है। सृजनात्मकता में अनेक योग्यताओं या गुणों तथा समस्याओं के प्रति सजगता विचारशीलता में गति, लचीलापन, मौलिकता, नवीनता

के लिए परिवर्तन जिज्ञासा का मिश्रण होता है जिससे व्यक्ति रचनात्मक उत्पादनों (Constructive production) को करता है।”

परिभाषा -

थर्स्टन - (Thurston 1955) इनका मत है कि कोई भी वह क्रिया सृजनात्मकता है जिसका तुरन्त समाधान प्राप्त हो जाये क्योंकि इस प्रकार का हल विचारक के लिए सदैव नवीनता लिये हुए होता है।”

सृजनात्मकता (Creativity) चिंतन (thinking) का एक विशिष्ट रूप है जिसे सृजनात्मक या रचनात्मक चिन्तन (Creative thinking) भी कहा जाता है। यह बुद्धि से पृथक् सम्प्रत्यय है, क्योंकि बुद्धि में चिन्तन के अलावा भी अन्य मानसिक क्षमताएँ सम्मिलित होती है।

सृजनात्मक प्रक्रिया के सोपान (Steps in Creative Process)

शिक्षाशास्त्रियों एवं शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने सृजनात्मकता प्रक्रिया को एक जटिल प्रक्रिया (Complex Process) माना है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कई सोपान या चरण (Steps) सम्मिलित होते हैं। इस प्रक्रिया में निम्नांकित मुख्य सोपान (Steps) सम्मिलित होते हैं।

- (1) समस्या का प्रत्यक्षण
- (2) समस्या को परिवर्तित करना।
- (3) निर्णय को निलम्बित करना।
- (4) उद्भवन प्रभाव।
- (5) किसी एक विचार में बँध जाना।
- (6) परिणाम की अटकलबाजी।
- (7) उत्तम निष्कर्ष का चयन।
- (8) अपने निर्णय को सुसाध्य करने की इच्छा।
- (9) अनिश्चितता को स्वीकार करना।

सृजनात्मक के पहलू (Aspects of Creativity)

सर्जनात्मकता के अनेक पहलुओं (Aspects) या तत्वों (element) या विमाओं (dimensions) का अध्ययन गिलफोर्ड (Guilford, 1967) द्वारा निम्नलिखित बिन्दु हैं-

- (1) धाराप्रवाहिता (Fluency)
- (2) लचीलापन (Flexibility)
- (3) मौलिकता (Originality)
- (4) विस्तारण (Elaboration)

सृजनात्मकता का शिक्षण (Teaching of Creativity)

सृजनात्मकता शिक्षण के विषय में कुछ मनोवैज्ञानिकों जैसे जैक्सन एवं मेसिक, टारेन्स (1972) द्वारा दिये गये अध्ययनों से यह समझ में आता है कि सृजनात्मकता एक ऐसी प्रक्रिया है जिसको शिक्षकों द्वारा अन्य विषयों के समान पढ़ाया जा सकता है अर्थात् सृजनात्मकता का शिक्षण संभव है। विभिन्न शोधों से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षक कक्षा में कोई विशिष्ट विधि, प्रविधि अपनाकर छात्रों की सृजनात्मकता को बढ़ा सकते हैं। कक्षा में प्रयोग करके शिक्षक बालकों में सृजनात्मकता को बढ़ावा दे सकते हैं। यथा-

- (1) अध्यापकों को बालकों में आत्माभिव्यक्ति की आदत डालनी चाहिए।
- (2) नए विषयों को, विचारों के मौलिक स्रोतों (Sources) से छात्रों को अवगत कराना चाहिए।
- (3) अध्यापक को मस्तिष्क-झंझावाती प्रविधि का उपयोग करना चाहिए।
- (4) विवादात्मक प्रश्नों को जान-बूझकर पूछना चाहिए।
- (5) वस्तुओं एवं विचारों का जोड़-तोड़ करने का काम बालकों के ऊपर होना चाहिए।
- (6) सृजनात्मक माहौल जिसमें बालक निसंकोच एवं आराम से प्रश्नों का समाधान कर सके।

ऊपर दिये गए तथ्यों से यह पता चलता है कि अनेक प्रविधियों को अपनाकर अध्यापक चाहे तो छात्रों में उचित मात्रा में सृजनात्मकता उत्पन्न कर सकते हैं।

निष्कर्ष: - सृजनात्मकता में हमने देखा कि किस प्रकार एक अध्यापक विभिन्न विधियों प्रविधियों का विकास करके बालकों में पर्याप्त मात्रा में सृजनात्मकता उत्पन्न कर सकता है। यदि शिक्षक की भूमिका रहे तो किस प्रकार इसको और अधिक बढ़ाया जा सकता है।

- (1) एक मजबूत पाठ्यक्रम बनाकर उसे एक निर्धारित समय-सीमा के अन्दर पूरा करने का अध्यापक को ज्यादा से ज्यादा प्रयत्न करना चाहिए। प्रायः हम देखते हैं कि किसी तरह से शिक्षक पाठ्यक्रम तो तैयार कर लेते हैं किन्तु उसे समय-सीमा के भीतर समाप्त करने की योजना नहीं बनाते हैं। उस पर अधिक ध्यान नहीं देते हैं इससे बालकों में लापरवाही बढ़ती है और सृजनात्मकता का विकास कमजोर हो जाता है। विद्यालय को शिक्षकों के प्रशिक्षण में अधिक योग्य शिक्षाशास्त्रियों की उपलब्धि करवानी चाहिए।

उपर्युक्त विचारों से यह स्पष्ट है कि शिक्षक एवं विद्यालय का महत्व सृजनात्मकता में बहुत है। इनके प्रयासों से बालकों में सृजनात्मकता पर्याप्त मात्रा में बढ़ सकती है।

सद्ज्ञान

धानेश्वरी साहू
शिक्षाशास्त्री-द्वितीय वर्ष

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।

एतच्चतुर्विधां प्राहुः साक्षात् धामेस्य लक्षणम्॥

मानवीय व्यक्तित्व के तीन आयाम सर्वविदित हैं- शरीर, मन एवं आत्मा शरीर को पोषण देने के लिए आहार की प्राणवायु की आवश्यकता पड़ती है। अन्न जल एवं वायु न मिले तो शरीर को लंबे समय तक जीवित रख पाना संभव नहीं हो पाता है। मन को पोषण देने के लिए सद्विचारों की सरभावनाओं की जरूरत होती है तो आत्मा की आवश्यकता सद्ज्ञान से ही पूरी पाती है। सद्ज्ञान का संबल मिलने पर मनुष्य के गुण-कर्म एवं स्वभाव को पोषण मिल पाता है। गुण, कर्म व स्वभाव की उत्कृष्टता की आत्मा को पोषण देती है व समुन्नत जीवन की आधार शिला रखती है।

जीवन में मनुष्य को चहिय कितना कुछ भी उपलब्ध करा दिया जाए, तमाम सुख, अकल्पनीय सुविधाओं के अंबार लगा दिए जाएँ परन्तु इन सबके बाद भी यदि सद्ज्ञान उपलब्ध न हो सका तो जीवन में एक बड़ी भारी रिक्तता का अनुभव होता है। इसी कारण समस्त सुविधाओं के होते हुए भी युवराज सिद्धार्थ सर्वस्व त्यागकर सद्ज्ञान प्राप्ति की राह की निकल पड़ते हैं महाराज भर्तृहरि, वैराग्य को प्राप्त होते हैं एवं राजा जनक आत्मज्ञान की पाते हैं। सद्ज्ञान का अवलंबन ही मनुष्य को जीवन में ऊँचा उठाता एवं आगे बढ़ाता है। सद्ज्ञान की प्राप्ति मनुष्य को सन्तोष, सम्मान एवं समुन्नति के ऐसे आभूषणों से नवाजती है कि जिसके आगे स्वर्ग की संपदा भी तुच्छ नजर आती हैं।

सद्ज्ञान की प्राप्ति के लिए मार्ग तो अनेकों हैं, परन्तु स्वाध्याय एवं सत्संग का पथ कुछ ऐसा है कि इसको अपनाने वाले निज जीवन में महानता के अधिकारी बनते हैं। सचपूछा जाए तो मानवीय महानता का सारा श्रेय सद्ज्ञान को ही देने की आवश्यकता है, क्योंकि उसकी प्राप्ति ही मनुष्य के जीवन को अनुकरणीय बनाती हैं। सद्ज्ञान पारस के पत्थर की तरह हैं, जिसे स्पर्श करने वाले अपने जीवन को स्वर्णिम सौभाग्य शाली बनाकर रहते हैं। जिसे सद्ज्ञान न मिल सका वह जन्म-जन्मातरो तक पतन व पराभव की वीथियों में भटकता रहता है, जबकि सद्ज्ञान प्राप्त कर लेने वाले अपने जीवन को एक प्रेरणा में परिवर्तित कर देते हैं। सद्ज्ञान की उपलब्धि ही मनुष्य जीवन का श्रेष्ठतम सौभाग्य है।

मूल्यशिक्षायाः स्वरूपम्

मानसी प्रधान

मूल्यं जीवनस्य सारतत्त्वं वर्तते। यदि जीवने मूल्यानि नैव सन्ति, तर्हि तज्जीवनं निरर्थकमिति, वस्तुतः मूल्यमेव तदेव तत्त्वमस्ति, येन मानवः प्राणिषु श्रेष्ठः इति। यदि मूल्यं नास्ति, तर्हि तस्य वस्तुनः, पदार्थस्य, विचारस्य, मानवस्य य किमपि महत्वमेव न भवति। अतएव मानवजीवनं मूल्यमयं कर्तुं बालेभ्यः विद्यालयीशिक्षायां मूल्यशिक्षा नूनमेव प्रदेया तर्हि विद्यालये प्रदीयमानायां मूल्यशिक्षायां के के विषयाः स्युः? सा च शिक्षा कीदृशी स्यात्? विषयेऽस्मिन् शिक्षाशास्त्रिणः चिकीर्षन्ति यत् पाठ्यक्रमनिर्धारणकाले मूल्यशिक्षायाः अधोलिखिताः विषयाः पाठ्यक्रमे समायोजनीयाः। येषाम् अध्यापनेन बालकानां जीवनं मूल्ययुक्तं भविष्यति।

तद्यथा-

1. सदाचारपालनम् 2. सत्यपालनम् 3. अहिंसापालनम् 4. धर्माचरणम् 5. परोपकारः 6. विश्वबन्धुत्वभावनायाः विकासः

1. **सदाचारपालनम्** - आचारः परमो धर्मः इति सिद्धान्तम् आश्रित्य सदाचारः सर्वोत्तमं तप इति पालनीयः। जीवने यदि विद्यते किञ्चन शाश्वतं तत्त्वम् तर्हि तद् वृत्तत्वम् एव सदाचारपालने ब्रह्मचर्यस्य महत्त्वं वर्तते एवं च चरित्ररक्षा शीलरक्षा चेत्यादि सदाचारपालनेन एव भवन्ति। यथोक्तं-

वृत्तं यत्नेन संरक्षेत् वित्तमेति च याति च।

अक्षीणौ वित्ततः क्षीणौ वृत्ततस्तु हतौ हतः॥

2. **सत्यपालनम्**- सवेदा सत्यभाषणं करणीयम् मिथ्याभाषणं कदापि नैव करणीयम्। यतोहि सत्यमेव धर्मस्य मूलाधारो वर्तते भाषणे सत्यं, विचारे सत्यं, कर्मणी च सत्यं स्वीकृतं चेत् ईश्वरस्य प्राप्तिः अवश्यमेव भवेत्। सत्यस्य व्यवहारविषये संस्कृतसाहित्ये इत्थं प्राप्यते। यथा-

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्

प्रियं च नानृतं ब्रूयाद् एषः धर्मः सनातनः।

अहिंसापालनम्-सर्वविधहिंसायाः परित्याग एव अहिंसा। समस्तजीवान् प्रति सद्भावनायाः प्रदर्शनमेत अहिंसा। भारतीयसंस्कृतेः मूलाधारः अहिंसा भवति। अहिंसायाः परिपालनेन आत्मोन्नतिः राष्ट्रोन्नतिश्च जायते। पतञ्जलिना उक्तम्- अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः।

धर्माचरणम्- धर्मः एव जीवनस्य सारभूतः। धर्मः जीवनरक्षकः इत्युच्यते अत एव धर्माचरणं करणीयम्। यदि वयं धर्मरक्षां कुर्मः तर्हि धर्मोऽपि अस्मान् रक्षति अतः जगति धर्मः एव सर्वोत्कृष्टः।

विश्वबन्धुत्वभावनायाः विकासः- इदं जगत् सुखदुःखात्मकञ्च भवति शिक्षया बालकेषु

इदृश्याः भावनायाः विकासः सम्पादनीयः, यया ते अन्यजनान् आत्मावदनुभवेयुः। इदं मम, अयं निजः, ते न मदीयाः इत्यादि भावना अपाकरणीयाः जगतः सर्वजनाः मम कुटुम्बजनः इति विचिन्त्य सर्वेषां साहाय्यं करणीयम् हितापदेशेऽपि उक्तम् यथा-

अयं निजः परावेति गणनालद्युचेतसान्।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

निष्कर्षरूपेण अस्माभिः वक्तुं शक्यते यत् पाठक्रमस्य निर्माणं तादृशरीत्या करणीयम्, येन राष्ट्रस्य भाविनागरिकाणां जीवनं मूल्ययुक्तं भवेत्।

अनुवादविधिः

अनिषा साहु

शिक्षाशास्त्री- द्वितीय वर्ष

संस्कृतशिक्षणविधिषु अनुवादशिक्षणं प्रमुखं वर्तते। “अनु पश्चात् वदति इति अनुवादः” एकस्याः भाषायाः अन्यस्यां भाषायां रूपान्तरीपकरणम् अनुवादः इत्युच्यते। राकस्य विषयस्य तदनुगुणं तदनुसारं च रूपान्तरीकरणं अनुवादं इत्युच्यते अपि अनुवादशिक्षणे त्रिणि रूपाणि अवलोक्यन्ते-

1. पद्यानुसारं अनुवादः (अक्षरशः अनुवादः)
2. छायानुवादः।
3. तथ्यानुवादः।

1. **अक्षरशः अनुवादः-** अक्षरशः अनुवादे भाषायाः तत् तत् शब्दानां विद्यमानस्थाने संस्कृतभाषायां सामान्यतया शब्दानां प्रयोगः क्रियते उद “सैन्धवमानय”

2. **छायानुवादः-** अनुवादेऽस्मिन् विद्यमानविषयस्य भाषा शैली आश्रीयते। किन्तु तत्र विद्यमानस्य भाषानुसारं सारांशः अनुद्यते। अतः अस्य छायानुवादस्य प्रसंगः अनुवादः शिक्षणे सर्वत्र प्रतिभति।

3. **तथ्यानुवादः-** प्रकृतानुवादे विद्यमानविषयस्य भावः, भाषा क्रमश्च आश्रीयते। तेन भाषायाः सौन्दर्येण सह भावस्य शैलयाश्च सौन्दर्यनुभूयते बहुषु ग्रन्थेषु अयमनुवादः परिलक्ष्यते।

अनुवादशिक्षणस्योद्देश्यानि-

1. संस्कृतमाध्यमेन छात्राणां भावानां विचारणां परस्परं अविष्करणयोग्याताप्रदानम्
2. भिन्नभाषायाः विद्यमानसाहित्यानां तुलनात्मवज्ञानसम्पादनम्।
3. अन्येषां विचाराणां तत् भाषानुसारं तत् शैल्यनुगुणं संस्कृतभाषायां लेखनस्य अभ्यासप्रकल्पनम्।
4. छात्राणां स्वमातृभाषया अन्यभाषया वा स्वाभिमतं स्वशैल्या प्रकटनम्।

अनुवादशिक्षणस्य पद्धतयः -

1. पुस्तकपद्धतिः
2. द्विभाषीया पद्धतिः

3. अनुकरणात्मकपद्धतिः।

अनुवादशिक्षणे मनोविज्ञानपद्धत्यनुगुणं स्तरानुसारं शिक्षणं प्रदीयते। तुलनात्मकाध्ययनस्य प्रवृत्त्यर्थं प्रयासो विचार्यते। अनुवादे सर्वदा मातृभाषायाः शैलीभावविषयादीनां रक्षा भवेत्। सरलतायाः विषये विशिष्टं लक्ष्यं प्रदेयम्। व्याकरणाध्ययनं विना अनुवादकार्यं सुतरां न सम्भवति। अतः शास्त्रीयव्याकरणेन सह लौकिकव्याकरणस्य ज्ञानमपि अनुवादे अपेक्ष्यते।

आत्मविश्वास

सुनयना

शिक्षाशास्त्री- द्वितीय वर्ष

यह मनुष्य जीवन तब ही सफल एवं सार्थक हो पाता है, जब हम अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को आत्मविश्वास से परिपूर्ण करते हुए, निश्चितता, निर्भीकता एवं निर्द्वन्द्वता के साथ व्यतीत करते हैं। यदि डरते हुए, भयभीत होते हुए, आशंकाओं से ग्रस्त होते हुए मनुष्य जीवन व्यतीत किया जाए तो इससे बढ़कर दुर्भाग्य और क्या हो सकता है? वो जीवन, जिसे प्राप्त करने के लिए देवी-देवता भी लालयित रहते हैं, यदि वो मात्र चिन्ताएँ करने, उलझनें बुनने एवं पश्चात्ताप करने में ही गुजर गया तो इसे एक त्रासदी का ही नाम दिया जा सकता है।

मनुष्य जीवन के रूप में अवसर को सौभाग्य में बदलने के लिए जिस शक्ति की आवश्यकता है, इसे आत्मविश्वास के नाम से पुकारा जाता है। आत्मविश्वास भी मात्र उनके व्यक्तित्व का आभूषण बन पाता है। जिनका मन ईश्वरविश्वास से परिपूर्ण हैं जिनका मन ईश्वरविश्वास से लबरेज है, जो सदा ईश्वर पर भरोसा करते हैं और जो सदा ईश्वरीय सत्ता की उपस्थिति को अनुभव करते हैं, उन्हें भला किसका डर सता सकता है? ब्लैक कैट कमांडो का एक दस्ता साथ चल रहा हो तो ही अपनी सुरक्षा की आश्वस्ति हो जाती है तो फिर जब स्वयं सर्वशक्तिमान प्रभु साथ हों तो कैसा डर और किसका भय? सत्य यही है कि आत्मविश्वास एवं ईश्वर विश्वास एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अपने ऊपर परिपूर्ण विश्वास करने की सामर्थ्य मात्र उसमें होती है, जो हर आत्मा में उपस्थित परमात्मा पर अनन्य विश्वास करना जानता है।

अपने ऊपर विश्वास करने वाले ही, दूसरों के विश्वासपात्र बनते हैं। जो अपनी सहायता आप करते हैं, वे ही ईश्वरीय सहायता के हकदार बन पाते हैं। आत्मविश्वास ही मनुष्य की शक्ति का आधार है। अपनी अंतरात्मा में निहित शक्ति का जागरण ही मानवीय उद्देश्य का चरमोत्कर्ष समझा जाना चाहिए।

आत्ममूल्याङ्कनस्य सम्प्रत्ययः

मोनिका शिवहरे

शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

आत्ममूल्यांकलनं मानवीय जीवस्याधारभूत स्तम्भत्वेन वर्तते। यत् उपयुक्त जीवनयापनार्थं, समाजस्योद्देश्यानुसृतं जीवनयापनार्थं वैयक्तिकलक्ष्याणां, उपयुक्त रीत्या पूर्त्यर्थं, समाजस्य पथप्रदर्शनार्थञ्च अनिवार्यं वर्तते। आत्ममूल्यांकने मानवः आत्मनः गुणदोषानां विषये चिन्तनं करोति। आवश्यकतानुरूपं मार्गदर्शनं स्वीकरोति। तथा आदर्श व्यक्तित्वस्य निर्माणार्थं प्रयत्नं करोति।

समान्यतः समाजमिति विधिना आत्ममूल्या-ङ्कलनस्य सम्प्रत्ययः स्पष्टः संजातः। अस्य विधेः विकासः 'मोरेनो महोदयेन' 1934 तमे वर्षे कृतम्। एतेषां मतमासीत् यत्- मानवैः तटस्थं व्यक्तेः नायकस्य, दलनायकस्य, समूहस्य तिरस्कृतजनानाञ्च मूल्यांकलनात् प्राक् आत्ममूल्यांकलनं कुर्यात् तथा आवश्यकतानुरूपं तावत् पर्यन्तं आत्मपरिवर्तनं आनयेत् यावत् लक्ष्यस्य प्राप्तिः न भवेत्।

आत्ममूल्यांकलनस्य-उद्देश्यानि-

1. आत्ममूल्यांकलनस्य मूलोद्देश्यं समाजे आत्मनः स्थितेः परिज्ञानं वर्तते।
2. आत्ममूल्यांकलनस्य व्यक्तिः स्वस्यजीवनयापनार्थम् उपयुक्तविधेः पद्धतेर्वा चयनं कर्तुं शक्नोति।
3. आत्ममूल्यांकलनस्य व्यक्तिः मार्गदर्शनस्य महत्त्वं जानाति तथा मार्गदर्शनं स्वीकर्तुं यतते।
4. आत्ममूल्यांकलनस्य व्यक्तिः समाजस्योद्देश्यानुसृतं पथप्रदर्शनं सहाय्यमाचरति।

आत्ममूल्यांकलनस्य प्रक्रिया-

व्यक्तिः स्वस्यजीवनारम्भस्य प्रत्येकं बिन्दु-माश्रित्य विचारं कुर्यात्। स्वस्य सहपाठीभिः सह, कार्यकर्तृभिः सह, पारिवारिकजनैः सह, सामाजिकैः सह आत्मनः व्यवहारस्य पर्यालोचना कुर्यात्। तथा आदर्श व्यक्तित्वां विषये जानीयात्, तेषां जीवनचरितं विषये पठेत्। तत्पश्चात् आत्मनः स्थितेः विषये परिज्ञानं कुर्यात्। यदि सः दिक्भ्रामितः भवति तदा स्वस्याभिभावकैः अध्यपकैः सामाजिकैश्च मार्गदर्शनं प्राप्नुयात् येन तस्यजीवनं सफलं भवेत्।

आत्ममूल्यांकलनस्य विशेषताः -

1. आत्ममूल्यांकलनं प्राकृतिकविचारोपरि आधारितं भवति।
2. छात्राः अग्रे पठनाय ज्ञातुं किं पठनम्? इति।
3. छात्राः स्वस्य अधिगमप्रक्रियाः ज्ञातुं अग्रे पठितुं जिज्ञासयति।
4. आत्ममूल्यांकने शिक्षक-छात्रयोः मध्ये सहभागिता स्यात्।

बौद्धकाले शिक्षा

किरण कुमार पटेल

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

बौद्धधर्मश्च प्रवर्तकः महात्माबुद्धः। सः ख्रि.पू. पञ्चमशतके लब्धवान्। तस्य पिता शुद्धोधनः सूर्यवंशीय राजा आसीत्। सः शाक्यगणराज्यस्य प्रमुखः शासकः आसीत्। लुम्बिनीनामकारण्ये द्वयोः पुष्पितशालिवृक्षयोर्मध्ये पुत्रस्य जन्म अभवत्। बाल्यकाले तस्य नाम सिद्धार्थः आसीत्। तरुणावस्थायां राजकुमारसिद्धार्थः संसारविरक्तः सन् विचारमग्नावस्थायां तिष्ठति स्म। तं संसारविरक्तं दृष्ट्वा तस्य पिता अतीवरूपवती राजकुमारी यशोधरानाम्ना कन्यया सह तस्य विवादं कृतवान्। कालादिक्रमेण एक पुत्ररत्नस्य प्राप्तिरपि अभवत्। पुत्रः मम मार्गे बाधकः (राहुः) इति मत्वा तस्य नामकरणमपि राहुलः इति कृतम् सिद्धार्थः। वृद्ध-रोगी-मृत-सन्यासीमवस्थायां दृष्ट्वा मनसि उद्विघ्नतामनभवत्। तेषु सिद्धार्थः सन्यासीजीवनस्य चयनमकरोत्।

एकोनत्रिंशत्तमवयसि गृहं परित्यज्य सन्यासव्रतं धारणं कृतवान्। भगवतः बुद्धस्य सन्यासं प्रति गमनं 'महाभिनिष्क्रमिति' उच्यते। बौद्धकाले बौद्धसंघः, मठः, विहारश्च विद्यायाः केन्द्रबिन्दवः आसन्। अत्र ये शिष्याः आसन् ते बौद्धभिक्षुनाम्ना अभिहिताः भवन्ति। बुद्धः मानवजीवनस्य लक्ष्यं निर्वाणप्राप्तिश्च बौद्धशिक्षायाः उद्देश्यानि आसन्। गौतमस्य मतेन दुःखात् मुक्तिः एव मानवजीवनस्य लक्ष्यं, तदर्थं तेन आर्धङ्गिकमार्गस्य अनुसरणं कृतम्। यथा-सम्यक् दृष्टिः, सम्यक् संकल्पः, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मः, सम्यक् जीवनं, सम्यक् व्यायामः, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधिश्च। बौद्धशिक्षाप्रणाल्यां शिक्षा त्रिषु स्तरेषु विभक्ता - प्राथमिकशिक्षा, उच्चशिक्षा, भिक्षुशिक्षा च। भिक्षुशिक्षायां प्रवेशात् प्राक् छात्राणामुपसम्पादानामकः संस्कारः अभवन्। पवज्जासंस्कारेण बालकाः मठे विहारे च प्रथमं प्रवेशं कुर्वन्ति। विनयपिटकमाम्नि पुस्तके अस्य संस्कारस्य रीतिः उल्लेखश्च विद्यते। अस्मिन् संस्कारे शिष्यः शरणत्रयस्य उच्चारणं करोति - बुद्धं शरणम् गच्छामि, धर्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि। अनन्तरं शिष्यः श्रमणः सन् मठे विहारे च प्रवेशं करोति। शिष्याणां जीवनं अतीव सरलमासीत्। पाठ्यक्रमः द्विधा विभक्तः आसीत्। प्रथमः - धार्मिकपाठ्यक्रमः द्वितीयः लौकिकपाठ्यक्रमश्च। बौद्धकाले शिक्षायाः माध्यमः आसीत् पालिभाषा। शिक्षार्थं बहवः विधयः आसन् यथा-स्वाध्यायविधिः, व्याख्याविधिः, अनुकरणविधिः, प्रश्नोत्तरविधिश्च। बौद्धकाले शिक्षायाम् उत्तमप्रशासनस्य व्यवस्थाऽऽसीत्। येन सुसंगठितविद्यालयविश्वविद्यालयानां स्थापनमभवत्। यथा - नालन्दाविश्वविद्यालयः, बल्लभी, विक्रमशिला, तक्षशिलाप्रभृतयः। बौद्धकाले स्त्रीणां कृतेऽपि शिक्षाव्यवस्था आसीत्। इत्थं बौद्धकाले उन्नतकरः पाठ्यक्रमः आसीत्। येन माध्यमेन जनानां सामाजिकराजनैतिके व्यवस्था उन्नतकरा आसीत्।

अन्ते वक्तुम् शक्यते बौद्धशिक्षायाः मूलं भवति 'मोक्षप्राप्तिः'।

पाठ्यचर्या

रेबति बाग

अनुक्रमांक : 89

पाठ्यचर्या भवति पाठ्यक्रमस्य आधारस्तम्भः। अर्थात् पाठ्यक्रमस्य क्रमबद्धता (Basic of curriculum) आदौ पाठ्यचर्या सन्दर्भे ज्ञातव्यं कारणमिति यत् पाठ्यचर्या पाठ्यक्रमस्य आधारः वर्तते। शिक्षायाः क्षेत्रे वर्यं यत् किमपि कुर्मः तत् सर्वं व्यापकः रूपेण पाठ्यचर्या भवति। पाठ्यचर्यायां बहवः अंशाः सम्मिलितः सन्ति। यथा-

- ◆ भौगलिक अंशाः
- ◆ समाजशास्त्र अंशाः
- ◆ नागरिक अंशाः
- ◆ भाषाशास्त्रीयांशाः इत्यादयः।

पाठ्यचर्या एकं व्यापकं विस्तृतं चिन्तनं वर्तते। व्यापकचिन्तनमिति उच्चमनसि मस्तके वा चिन्तनम् यत्र साम्यभावः वर्तते तत्र भवति व्यापकचिन्तनम् इति।

यदा सामान्यरूपेण एकवर्षात्मक काले केवलं केचन पाठान् अङ्गीकृते पाठनं भवति। पाठ्यचर्या अस्माकं पदं भवति शिक्षा। शिक्षा व्यापकं भवति। प्राथमिक स्तरे I-V शिक्षायां के के अंशाः भवेयुः, माध्यमिक स्तरे, उच्चमाध्यमिकस्तरे तथा च उच्चस्तरे के के अंशाः भवेयुः तत् सर्वं शिक्षातः अंशाः स्वीकृता। तत् भवति पाठ्यचर्या।

अध्ययनक्षेत्रे विषयवस्तु आवश्यकम्। किं किं पाठनीयं के के अंशाः पाठनीयाः। यथा- रणनीतिविज्ञाने के के अंशाः सम्मिलित- इत्यादि नागरिकाणां कृते बहुना धारणाम् उल्लेखनीयम्। पुनः यदि विषयः कालिदासः भवति तर्हि कालिदासस्य रचनादयः, तत्रत्यः विशेषताः अपि अन्तर्भवन्ति।

ये विषयाः वर्तन्ते पाठ्यचर्यायां तेषां विषयाः सर्वेषां उपादेयता विषये संकल्पनायाः आवश्यकता अस्ति। विषयवस्तोः यत् तात्पर्यमस्ति तत् प्रकाशीकरणं भवति संकल्पना। कालिदासेन विरचितं रघुवंशं महाकाव्ये जनानां कर्तव्य विषये वर्णितमस्ति। तत्र संकल्पना भवति राजानां विषये ज्ञानप्रदानम्।

पाठ्यचर्या तदा निर्मियते, तस्मिन् काले सामाजिक पर्यावरणं कीदृशः वर्तते। जनानां चिन्तनं कीदृशं इति ज्ञात्वा विषये ज्ञानप्रदानम्।

पाठ्यचर्यायाः रचनायाः काले कवि, लेखकः किं चिन्तयति रचना कीदृशी भवेत्? रचना लोकमङ्गलाय भवेत्, छात्राणां हितायै भवेत्। अधुना उद्देश्यं पूरित्यर्थं जीविकोपार्जनं भवति। रचनाशक्तिः नास्ति; तस्य उपयोगिता अपि नास्ति। एतेषां विषये ज्ञानप्रदानम्।

विविध कवीनां विद्वांसानां, कथाकाराणां, चिन्तकानां, दार्शनिकानां मतानाम् अनुप्रयोगः पाठ्यचर्यायां भवेत्। पाठ्यचर्या प्रभावशाली भवेत्। एतानि मतानि उपस्थाप्यन्ते तदा छात्राः लाभान्विताः भवेयुः। यदि विद्या केवलं उदरपोषणार्थं वर्तते तर्हि भिक्षायां को दोषः?

पाठ्यचर्यायाः गतिः - पाठ्यचर्यायां पाठकेषु गतिः वर्तते। ते पाठ्यचर्यां स्वीकृत्य तेषाम् अंशान् स्वीकृत्य पठन्ति। अतः पाठ्यचर्यायां छात्रेषु अपि अवधानः स्यात्।

पाठ्यचर्या एका निर्देशिका भवति। अनया विविध लघुयोजना सन्दर्भे ज्ञानं प्राप्यन्ते। कस्मिन् वर्षे किं करणीयम् तस्मिन् विषये ज्ञान-करणम् निर्देशनम्। एतेषां सर्वेषां सारभूताः अंशभूताः अंशाः भवति पाठ्यचर्या। पाठ्यचर्या अध्ययनस्य विस्तृत क्षेत्रे वर्तते, यत् कक्षायां आवेक्षते तत् क्षेत्रं स्वीकरणीयम्।

पाठ्यचर्या एका योजना वर्तते। यदा विद्यालये औपचारिक शिक्षा पठिष्यामः तदा ज्ञायते पाठ्यचर्या एका योजना वर्तते इति। एकवर्षात्मककाले किं करणीयं तत् सर्वं पाठ्यचर्या योजना रूपेण स्वीक्रियते। योजना सुस्पष्टा भवेत्, तद तदा करणीयम्। किं करणीयम्, कथं करणीयम् इति योजनायाः आधारः वर्तते। निर्णयात्मकक्षमता सर्वाणि अपि कार्याणि योजनया सम्बन्धाः भवेत्। तथा च विद्यालयीय पाठ्यक्रमे यथा - प्रातः कालादारभ्य [प्रार्थना, सुभाषितानि, क्रीडाङ्गणे क्रीडा, पाठ्यविषयः, गोष्ठीः संगोष्ठी, विविधक्रियाः सन्ति] विरामो पर्यन्तं एतेषां क्रियाणां योजना भवेत्। पाठ्यसहगामिन्यः याः क्रियाः वर्तते तासां सर्वेषां क्रियाणां भूलभूतरूपा वर्तते पाठ्यचर्या।

प्रयोजनमनुदिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते” अर्थात् उद्देश्यं विना किमपि कार्यं कर्तुं नैव शक्यते। पाठ्यचर्यायां उद्देश्यं स्थापनीयम्। पाठ्यचर्यायाः प्रकृति वर्तते छात्राणां रुच्यनुगुणम् अध्यापकः पाठनीयम्। यथा छात्राणां अधिगमः भवति तथा पाठनीयम्।

उद्देश्यं, विषयवस्तु, मूल्यांकनं त्रिषु तत्त्वेषु परस्परं समन्वय विश्लेषणम् च। पाठस्य उद्देश्यं किम् अस्ति? विषयवस्तु किम् अस्ति? मूल्याङ्कनम् अधिगमः भवति न वा एतत् विषये ज्ञानकरणम्।

परिभाषा -

Wikipedia -

शिक्षायां पाठ्यचर्या एकस्यां शैक्षिकप्रतिक्रियाणां विद्यार्थीनाम् अनुभवानां समग्रता वर्तते।

Dewangan -

पाठ्यचर्यायां ते समस्ताः अनुभवाः सम्मिलिताः भवन्ति यान् बालकः एव स्वविद्यालय दर्शने प्राप्नोति।

विद्या ददाति विनयम्

मधुस्मिता साहुः

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

एकस्मिन् नीतिश्लोके स्पष्टभावेन उल्लेखोऽस्ति - विद्या ददाति विनयम्। विद्या

विनयस्य मूलभूमिः इति श्लोकः इत्थमस्ति -

विद्या ददाति विनयं विनयम् याति पात्रताम्।

पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनात् धर्मस्ततः सुखम्॥

विद्यया विनयं प्रभवति। विनयी सत्पात्रः भवति। समाजे तस्य स्थितिः दृढः जायते। अपि च क्रमशः सः धनार्जनं करोति। धनव्ययेन सः लोकहितकरं कार्यं कर्तुं समर्थः भवति। फलतः धर्मम् उपार्जयति। धर्माजनफलेन सकलसुखस्य अधिकारी भवितुं असौ योग्यः भवति।

यथा -

नभोभूषा पूषा कमलवनभूषा मधुकरः,

वचोभूषा सत्यं वरविभवभूषा वितरणम्।

मनोभूषा मैत्री विमलकुलभूषा सूचरितम्,

सभाभूषा सूक्तिः सकलगणभूषा च विनयम्॥

सूर्य, आकाशस्य भूषणम्। भ्रमरः पद्मवनानां भूषणम्। सत्यमेव वचो भूषणम्। दानं श्रीमतः भूषणम्। बन्धुता मनसः भूषणम्। सुचरितमेव विमलकुलभूषणम्। सूक्तिः सभायाः भूषणम्। परन्तु विनयः एतेषां सर्वेषां गुणानां भूषणम्। विनयः सर्वश्रेष्ठः इति सदा प्रतिपाद्यते। यथा जीवनं विना शरीरं, जलं विना भेदीकूपतडागादयः। रसं विना कविता, पतिं विना वनिता, वृक्षं विना लता, तेजो विना सविता, चन्द्रं विना कुमुदं, हास्यं विना ललना न शोभते, तथैव विनयं विना शौर्यं, वीर्यं, धैर्यं, पराक्रमोऽपि न शोभते। तस्मादेव विनयं महत्भूषणम्। विनयेन पुत्रः सुपुत्रः भवति। तस्य सुचरितेन वंशः पवित्रो जायते। अतः उच्यते -

एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना।

वासितं छद्मं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा॥

विनयी छात्रः एव विद्याधिकारी भवति। अथ च अविनयशीलाय विद्यादानं महान् दोषः। विनयविहीनः जनः विद्यया विनापि संसारे अनादरं लभते। अविनयशीलानां सुखदर्शनं कर्तुं न कोऽपि अग्रेसरः भवति। अविनयिनः मुखं व्यथितः त्वतिभयङ्करम्। मनसि अहमिकाम् उत्पादयति, ईर्ष्यां समुत्पादयति, सरलसुखदमार्गं कण्टकितं करोति।

परन्तु विनयः शत्रुं मित्ररूपेण परिणमयति, दुर्गमानापि कुसुममिव कोमलान् करोति। अतः अमूल्यं विनयं विद्या एव जनयति।

रघुवंशप्रदीपो राजा दिलीपः प्रजानां विनयस्य शिक्षायाः च आधानात् पिता आसीत्।

यतः विद्यायाः परिणामः विनयः। पुनः यथार्थतः उच्यते -

विद्या विनयोपेता हरति न चेतांसि कस्य मनुजस्य।

काञ्चनमणिसंयोगा नो जनयति कस्य लोचनानन्दम्॥

कोऽपि शास्त्रज्ञः यदि विनयहीनो भवति, यः मुखः इति कथ्यते। अतः विनयः नरस्य भूषणम्।
भूषणं विद्याया सुलभं जायते। यतः “विद्या ददाति विनयम्”।

आधुनिकयुगे लैङ्गिकशिक्षा

गौरी शङ्कर त्रिपाठी

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

मनुष्यः सामाजिकप्राणी भवति। समाजे वसति जीवति इत्यतः सामाजिकगतिविधिभिः सह सम्बन्धः स्थापयितुं यत्नं करोति। आधुनिक समाजे शिक्षायाः मुख्यं कार्यं भवति आवश्यकतानां पूर्तिः। आवश्यकतापूर्त्ये जनाः हिंसायाः, अनैतिकतायाः आचरणं कुर्वन्ति। तया आतङ्कवादः, भ्रष्टाचारः, अत्याचारः, अराजकता इत्यादीनां कार्ये लिप्ताः भवन्ति। एकविंशतिशताब्द्यां समाजे लैङ्गिकसम्बन्धिसमस्याः अत्याधिकरूपेण दृष्टिगोचरः भवन्ति। अतः आधुनिकयुगे लैङ्गिकशिक्षायाः आवश्यकता वर्तते।

लैङ्गिकशिक्षायाः अर्थः -

लैङ्गिकशिक्षायाः आङ्ग्लभाषायाः अर्थः भवति Gender Education। लिङ्गसम्बन्धे या शिक्षा वर्तते सा लैङ्गिकशिक्षा नारीपुरुषाणां भेदभावः दूरीकरणाय तया परस्परं योग्यसम्बन्धं स्थापनाय। समाजे उभयोरपि प्राधान्यविषयम् अवबोधयितुं या शिक्षा वर्तते। तदैव शिक्षा लैङ्गिकशिक्षा।

लैङ्गिकशिक्षायाः आवश्यकता -

1. लैङ्गिकसमस्यानां दूरीकरणार्थं लैङ्गिकशिक्षायाः आवश्यकता वर्तते।
2. किशोरावस्थायां कामभावनाः किशोरान् विचलितान् कुर्वन्ति। अतः कामशिक्षा अत्र अपेक्षते।
3. अज्ञानताकारणात् जनाः विभिन्नयौनरोगैः पीडिताः भवन्ति। अतः नीरोगनिमित्तं आवश्यकता वर्तते।
4. कन्याभ्रूणहत्यादूरीकरणाय अस्यावश्यकता वर्तते।
5. लैङ्गिकशिक्षायाः अभावेन जनसंख्यायः वृद्धिः जायते।
6. स्त्रीपुरुषाणां भेदभावं दूरीकर्तुं तया समाजे सर्वेषां कुते समानतस्थापनार्थञ्च अस्यावश्यकता वर्तते।
7. जनानां मध्ये स्थितं नारी दुर्बला इति चिन्तनस्य दूरीकरणाय लैङ्गिकशिक्षायाः आवश्यकता वर्तते।
8. देशस्य विकासार्थम् उन्नत्यर्थञ्च लैङ्गिकशिक्षायाः आवश्यकता वर्तते।

अतः स्वस्थपरिवारस्य, स्वस्थसमाजस्य, स्वस्थदेशस्य च निर्माणे लैङ्गिकशिक्षायाः आवश्यकता अनिवार्यमस्ति।

वैदिकवाङ्मये अग्रितत्त्वम्

ऋषिराम पाण्डेय

शिक्षाशास्त्री

उत्पत्तिः -

अग्निशब्दस्य यास्कोबहुधा निर्वचनं दर्शयति- अग्निः पृथिवीस्थानस्तं प्रथमं व्याख्यास्यामः। अभिः कस्मात्? अग्रणीर्भूतिं अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते अङ्गं नयति संनममानः। अन्कोपनो भवतीति स्थौलाष्टीविः न क्नोपयति न स्नेहयति। शानपूणिनामको निरुक्तकारो धातुप्रसादग्निशब्दनिष्पत्तिं मन्यते। इतः हण्गतौ इति धातुः। उक्तः अञ्जु व्यक्ति-प्रक्षण-कान्ति-गलिषु इति धातुः। दग्धे 'दह भस्मीकरणे' इति धातुः। नीतो' णीम् प्राणे इति धातुः। निष्फला छात्रा।

अग्निशब्दो वस्तुतोऽग्निः इति शतपथब्राह्मणात् अग्निशब्दस्य व्युत्पत्तिः। प्रजापतिः देवेषु सर्वप्रथमं जनयामास इति हेताः अग्निः अग्निः इति कथ्यते। तद्वा एनमेतदग्रे देवानामध नयत-तस्माद् अग्निः।

अग्निर्ह वै नामैतद् सा उ एवास्य अग्निता (श.ब्रा. 2.22.1)''

अङ्गिरा इति वैदिकसाहित्ये अग्नेः नामान्तरम्। उपनिषत्सु ब्राह्मणेषु अङ्गिरोऽग्निः प्रमुखः प्राणः इति कथ्यते। अस्य शब्दस्य व्युत्पत्तिरपि प्रकाशमपेक्षते। अङ्ग-इरस्। पाणिनीयव्याकरणे अग् इति अङ्ग इति च इत्युभावपि धातूगत्यर्थकौ। एको निनुनासिकोऽपरश्च सानुनासिकः। संस्कृतव्याकरणे बहूनां रूपद्वयमुपलभ्यते। तद्यथा मद्, इथ्, इन्ध् इध, रन्ध, मिद्, मिन्द इति। एतेभ्यो धातुभ्यो द्विविधा शब्दनिष्पत्तिः अपि दृश्यते। तद्यथा मद्धातोः 'मद् मदन मदिर' इति तथा मन्द् धातोः मन्द्, मन्द्र, मन्दता, मन्दिर इत्यादयः शब्दाः निष्पद्यन्ते।

अत्रापि 'अग्र' धातोः अग्नि अग्र इति तथा च 'अङ्ग' धातोः अङ्गार, अङ्गिर अङ्गिरस् इत्यादयः शब्दाः निष्पद्यन्ते। उभावयौ धातू गव्यर्थकौ इति समानार्थकौ।

अनेन स्वरूपेण अग्निः ईश्वरस्य नाम अथवा एतमाक प्रदूषेर्बोधकः।

अङ्गिराशब्दस्य इदं निर्वचनमाधारीकृत्य दयानन्दः स्वकीये वेदभाष्ये अङ्गिरा इति शब्दस्य प्राणाः विद्वान् वेत्यादीनर्थान् प्रदत्तवान्।

श्री अरविन्दः अस्मिन् शब्दे ऊर्ध्वगतिः ऊर्ध्वारोहणे अर्धत्वेन कल्पयति तदनुसारं पया शक्त्या मानवानाम् ऊर्ध्वारोहणं ऊर्ध्वगमनं स्यात्, या वा मानवचेतनायाम् अङ्गारवत् गतिशीला स्यात् सा जाज्वल्यमाना शक्तिः अङ्गिरा इति गीयते।

शतपथब्राह्मणे छान्दोग्योपनिषद् अङ्गिरसूयदस्य प्राणः इति अर्थः कृतः? तन्निवर्चम् अरविन्दकृतव्याख्यानकूलमस्ति। प्राणमैव प्राणिनः गतिशीला भवन्ति इति अनुभवसिद्धमेव। अग्नेः मूर्तिभेदाः

वैदिक-वाङ्मये अग्निः कार्यभेदात् विविधनाम्ना कीर्तितः यथा जातवेदस्-वैधादार-तनूनपातूनराशेसादयः।

जातवेदोऽग्निः

जातवेदसिति नाम्ना बहुषु स्थलेषु अग्निः वर्णितः। शब्दस्यास्य विविधाः व्याख्याः भाष्यकाराः प्रस्तुवन्ति। सायणः यास्कमनुकुर्वन् लिखति धातानां वेदितारं, धातधनं, जातप्रज्ञां चेति। यास्कः निर्वक्ति यथा – जातवेदाः कस्मात् धातानि वेद जातानि वै न विदुः जाते घाते विद्यते इति वा धातावतोः वा धातधवः, जातविधोः वा जातप्रज्ञानः, यन्तज्जातः पशून् अविन्दोति तज्जातवेदसो जातवेदस्त्वमिति ब्राह्मणम् (निरुक्तः)

प्राणो वै जातवेदाः सः हि जातानां वेदः। ऐ०ब्रा०

तस्मात् द्युलोकस्थः वार्थिवश्चाग्निः धातएव सातसत्त्वत्वाज् जातवेदः उच्यते। भावदृष्ट्या अर्थ अग्ने मूर्तिभेदः कथितुं शक्यते।

वैश्वानरोऽग्निः

अस्यान्यत् स्वरूपं वैश्वानर इत्युच्यते। अस्य प्रयोगः ऋग्वेदे षष्टिसु स्थलेषु ऋषिभिः कृतः समग्रेऽपि ऋग्वेदे अयं शब्दः अग्निवाचकत्वेनैव प्रयुक्तः। अस्य शब्दस्य महत्वं स्वीकुर्वन्तौ सायणयास्कौ विशदतया व्याख्यातवन्तौ।

अन्ते च अयमेवाग्निः वैश्वानरः इत्युक्तवन्ताविति। सायणः-वैश्वानर पदं व्याख्यायन् भाषते यथा ‘विश्वानरहिता’। यास्क निर्वक्ति यथा- वैश्वानरः कस्यात्” विश्वान्तराभयति विश्वं एवं नरा नयन्तीति वा। अपि वा विश्वानर एव स्यात् प्रत्यूक्तः सर्वाणि भूतानि तस्य वैश्वानरः तस्यैषा भवति (निरुक्तन्तः)

नराशेषः

अयं शब्दः ऋग्वेदे चतुर्दशस्थलेषु प्रयुक्तः वर्तते। तत्र मन्त्रप्रथं विहाय एकादशस्थलेषु अग्निपर्यायत्वेन विशेषणत्वेन वा प्रयुक्तः। एकस्मिन् मन्त्रे अर्थ शब्दः सवित्विशेषणः सोऽप्याभिरूप एव। नाराशंसेति शब्द आद्यकालादेव विवादितार्थः आसीत्। ऐतरेय ब्राह्मणानुसारं प्रधानां वाक् एवं नाराशंसः अस्ति।

– प्रजा वै नरा वाक्शंसः। ऐ०ब्रा०

स्पष्टं यत् गर्भस्थः तनूनपात्” प्रकटितरूपः सन् नाराशंस इति उच्यते। स एवान्तरिक्षे मातरिश्वा भवतीति। अस्मिन् मन्त्रे प्रयुक्तः –

‘आसुरः’ सायणानुसारं असुराणां हन्तुरग्रेर्वाचकः। असुरहन्तृत्वादेव सः नाराशंसः इति उच्यते। मन्त्र

तनूनपादुप्यते नर्भ आसुरो नराशंसो भवती यद् विजायते।

मातरिश्वां यदमिमीत मातरि वातस्य सर्गो अभवत् सरीमणि॥

पाठ्यचर्यायाः महत्त्वम्

लोपामुद्रा जेना

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

पाठ्यचर्यायाः अर्थः -

पाठ्यचर्या इत्थयम् आङ्ग्लोभाषायाम् curriculum इति कथ्यते। curriculum इति शब्दः लेटिनभाषायाः curer इति शब्दात् निष्पन्नो वर्तते। यस्यार्थः भवति धावनक्षेत्रम्। पाठ्यचर्यायां ते समस्तानुभवाः सम्मिलिताः भवन्ति यान् बालकः स्वविद्यालयनिर्देशने प्राप्नोति। इयं पाठ्यचर्या अनियोजितमनेकाङ्गि च भवति। विद्यालये जायमानानां संपूर्णक्रियाकलापानां समूहः भवति पाठ्यचर्या। इति।

पाठ्यचर्यायाः महत्त्वम् -

1. पाठ्यचर्या अधिगमं प्रति प्रेरयति -

पाठ्यचर्यायां बहवाः विषयाः अन्तर्निहिताः सन्ति। तेषां विषयाणां अध्ययनं तेषां विषयाणां निरूपणं क्रियते। अध्ययनेन रुचिः वर्धति। अनन्तरं अधिगमे इच्छा भवति। छात्रान् तथा च अध्यापकान् इयं प्रेरयति।

2. छात्राणां कृते उपयोगि -

कस्मिन् क्षेत्रे छात्रैः किं करणीयम्, कः विषयः चेतव्यः, किदृशमार्गं स्वीकरणीयम्, तादृशं कार्यं करोति पाठ्यचर्या।

3. अध्यापकानां कृते उपयोगि -

यतोहि पाठ्यचर्यायां ये अंशाः भवन्ति तेषाम् अध्ययने अध्यापकानां सहायम् आवश्यकम्। प्रत्येकं विषयस्य कृते अध्यापकः अपेक्षते। पाठ्यचर्या विना अध्यापकः किमपि कर्तुं नैव शक्नोति। अध्यापकः पाठ्यचर्यानुसारेण स्वयं पठित्वा पाठयति।

4. समाजस्य हितकारीणि -

सर्वे अपि छात्राः समाजे निवसन्ति। समाजे तेषां कर्तव्यं वर्तते सामाजिकानां हितकरणम्।

5. शैक्षिक वातावरणम् -

पाठ्यचर्या शैक्षिकवातावरणं निर्माणं करोति। कस्यां कक्षायां के विषयाः भवेयुः, कस्मिन् स्तरे के विषयाः भवेयुः तत् सर्वं शैक्षिकवातावरणे अङ्गिक्रियते।

6. भाविजीवनाय प्रशिक्षणम् -

पाठ्यचर्या भावि जीवनस्य निर्माणाय सहायं भवति। यतोहि अत्र सर्वाङ्गीणविकासः भवति तथा च भाविजीवनस्य कृते अपि सुधारात्मकं परिवर्तनम् आनयति।

7. मानवीयगुणानां समृद्धिः -

मानवे साधारणतया ये गुणाः जन्मजात प्रवृत्तिः आसीत्, तेषां गुणानां विकासाय पाठ्यचर्या सहायं भवति। मानवीय गुणाः यथा - इच्छा, द्वेष, भय, क्रोध इत्यादि।

मानवजीवने शिक्षायाः महत्त्वम्

कौशल्या दीप

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

शिक्षायाः स्वरूपम् -

समग्र प्राणीसंसारे मानवमहत्तां शिक्षायाः मन्यते। शिक्षादीप्तदीपित एव पुरुषः क्रमेणोन्नतमानोति अग्रणीयां योनिपरम्परामनुसेव्य स्वकर्मफलानुसारमेव जीवो मानवयोनिं प्राप्नोति। सहजतया मानवजन्म न लभ्यते, मानवजन्म तु प्राक्कालिकजन्मजन्मान्तरार्जितानां पुण्यानां फलमेवास्ति।

अथ 'सा विद्या या विमुक्तये' इति आसीत् ऋषिसमयः। 'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमस्नुते' इति खलु वेदघोषः। या विद्या एव प्रकृष्टा या विद्या मुक्तिं प्रददाति। यया विद्याया लौकिकं ज्ञानं जायते, सा अपरा विद्या। यया च सक्षर ब्रह्मविषयकं ज्ञानं जायते, या पराविद्या।

शिक्षायाः अर्थः -

शिक्षायाः शाब्दिककार्थं कोऽर्थः अभिप्रेत इत्यस्मिन् विषये चर्चा विधीयते। शिक्षाविद्योपादाने इत्यस्माद् भौवादिवधातेः गुरोश्च हलः इति पाणिनीय सूत्रेण अ- प्रत्यये सन्ति, अजायनदम् इति तापि शिक्षा इति शब्दः निष्पद्यते।

आङ्ग्लभाषायां शिक्षा इति म्कनबंजपवद नाम्नाभिधीयते। इति शब्दः लेटिन भाषायाः Education, Educare तथा Educere इति पदत्रयस्याधारेण उत्पन्नः शिक्षाशास्त्रिणामभिमतम्।

शिक्षायाः व्यापकार्थः -

शिक्षा नाम आजीवनं प्रचल्यमाना काचित् गतिशीलप्रक्रिया इति स्वीकर्तव्या। वीरेमाण्ट महोदयानामाशयः स्मर्तव्यः तद्यथा शिक्षा विकासाय तादृशः क्रमः येन व्यक्तिः क्रमशः भिन्नभिन्नप्रकारेण भौतिकसामाजिकाध्यात्मिक वातावरणानुकूला भवितुम् आत्मनं नियोजयति। एवञ्च वक्तुं शक्नुमः यद् शिक्षा तादृशी प्रक्रिया वर्तते यया प्रक्रियया मनुष्यस्य जन्मजातशक्तीनां स्वाभाविकः सामञ्जस्य पूर्णविकासो भवति।

शिक्षायाः परिभाषा -

1. सा विद्या या विमुक्तये - तैत्तिरीयोपनिषद्
2. शिक्षा नाम आत्मसाक्षात्कारः - जगद्गुरुशङ्कराचार्यः।
3. मानवान्तर्निहितपूर्णतया अभिव्यक्तिरेव शिक्षा - स्वामिविवेकानन्दः।
4. शिक्षा मनुष्यस्य निर्माणं करोति - क्रोथरन्

शिक्षायाः महत्त्वम् -

अखिलेऽस्मिन् ब्रह्माण्डे वैदिक कालादद्यावधि समेषां मानवानामाध्यात्मिक-चारित्रिक-बौद्धिक-सामाजिकविकासमुन्नेतुं प्रकाशमानञ्च कर्तुं प्रभावयति शिक्षा। शिक्षा एका गतिशिला प्रक्रिया वर्तते। यया शिक्षया मानवः मानवत्वं प्राप्नोति शिक्षादर्पणमिव कार्यं सम्पादयति, यथा दर्पणमवलोक्य मानवः स्वीयं वास्तविकं स्वरूपं वेति तथैव शिक्षायाः स्वस्तित्वबोधं कर्तुं

प्रभवति। शिक्षा एव मानवः सभ्यतां, सुशीलता, व्यवहारम्, आदरं, ज्ञान-विज्ञानम्, कर्मकर्म, धर्माधर्म, सत्यसत्यं विद्यामविद्यां च वेति।

चारित्र्योन्नतिसाधिका गुणगणैः सारल्यसंसाधिका।
लोकेषुप्रचरेत् सुरिष्यजनिदा शिक्षा सदा कामधुक्॥

स्वामिविवेकानन्दमते शिक्षा

मोनालिसा त्रिपाठी

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

भारतस्य धरा आध्यात्मिकशक्तियुता विभूतिभिः सुशोभते। एताः विभूतयो न केवलमाध्यमिकविकासस्य चेष्टां कृतवन्तः अपितु भारतस्य शैक्षणिकविकासाय अपि प्रभूतं प्रयासं कृतवन्तः। एतादृशासु विभूतिषु स्वामिनो विवेकानन्दस्य नाम विशिष्टं वर्तते। भारतस्य रत्नभूता एते भारतस्य सर्वविधविकासार्थं चेष्टारताः आसन्। तेषां विचाराणां संयोजनैव तेषां शिक्षादर्शनमभिजातुं शक्यते। वस्तुतः तेषां शिक्षाविषये शैक्षणिकप्रयोग- सम्बन्धे च कोऽपि ग्रन्थो नोपलभ्यते। परं शिक्षायाः धर्मस्य च प्रचारसन्दर्भे तैर्प्रकटितैर्विचारैः तेषामभिप्रायाः कृता।

शिक्षायाः अर्थः -

स्वामिविवेकानन्दस्य मते शिक्षा हि मानवानां पूर्णतायाः अभिव्यक्तिर्नाम। तदनुसारं केवलं सूचनैव शिक्षा” इति न सम्भवति प्रत्युत बालकस्य मानवरूपे निर्मितरेव शिक्षा वर्तते। यः केवलः पञ्चैव सद्विचारान् धारयन् विचारं कर्तुं प्रभवति।

विवेकानन्दमते प्रचलिता शिक्षा मानवेषु गुणानां निर्मितौ तेषां विकासे चाक्षतामता। एतया शिक्षया मानवनिर्मितिर्न सम्भवति एतस्मिन् तत्त्वज्ञानस्य अभावीऽवलोक्यते। एषा निषेध-आत्मिका शिक्षा वर्तते।

शिक्षा अभ्यन्तरे स्थितं ज्ञानमनावृतं विदधाति। बालकोऽन्तर्निहितस्य ज्ञानस्य अन्वेषणं प्रकटनञ्च इति मनस्येव समस्तं ज्ञानं निहितं भवति। वदसंस्तास्तु केवलं तस्मै प्रेरणां ददाति। अनया प्रेरणाया -

गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव॥

त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।

त्वमेव विद्या द्रविणां त्वमेव॥

त्वमेव सर्वं मम देव देव॥

यदि वर्तमाने या भारतीयशिक्षा प्रचलति तस्या आदर्शस्वरूपम् इच्छन्ति चेत् सम्प्रति या शिक्षा प्रचलति या ‘जान् डी.वी. महादेयानुसारमस्ति यस्याः उद्देश्यानि यथा-

बालकानां सर्वाङ्गीण विकासः। मूलशक्तीनां च शिक्षायाः एव सम्भवमस्ति। प्रथमतः एव अस्माभिः न निश्चयते यद्, बालकानां शक्तीनां विकासः कस्यां दिशि भविष्यति। अतः शिक्षायाः उद्देश्यानि तत्कालिका एव भविष्यन्ति।

शिक्षायाः तात्पर्यम् -

इयुवो महोदयानुसारं शिक्षा जीवनस्य एका आवश्यकता वर्तते। सः अयं कथयति- शिक्षां विना जीवनस्य प्रगतिः सम्भवन्नास्ति। परन्तु जीवनस्य प्रगति केवलं अनुभवानाम् आधारेण एव भवितुं शक्नोति अतः एव शिक्षा अनुभवस्य भवति।

तथा अनुभवाय भवति। प्रत्येकं नव अनुभवः प्राचीनानुभवे रूपान्तरणं आनयने तथा तं दूरीकरणाय बाह्यते। नवीनमानदण्डः पुरातनमानदण्डानां स्थानं गृह्णाति।

शिक्षायाः परिभाषा -

शिक्षा व्यक्तेः तासां समासां योग्यतानां विकासः अस्ति यद् तस्मिन् स्वस्मिन् वातावरणे नियन्त्रण स्थापनाय तथा च सम्भावनानाम् पूर्णस्य सामर्थ्यं प्रददाति इति।

प्रारूप-योगात्मकमूल्याङ्कनम्

चिन्मयी साहु

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

मूल्याङ्कनम् एका सततप्रक्रिया अस्ति। कमपि मानकं (Standard) स्वीकृत्य कस्यापि वस्तुनः गुणात्मक मापनमेव मूल्याङ्कनम्। एतत् मानकं सामाजिक-वैज्ञानिक-आर्थिक-सांस्कृतिकादयः भवितुं शक्यते। मानकमपि वास्तविकं तथा ऐच्छिकं किमपि वा भवितुं शक्यते। मूल्याङ्कने कस्यापि वस्तुनः मूल्यं निद्धार्यते अपि च निश्चीयते यत् किम् उत्तमं किम् अनुत्तममिति। अतः यदा वयं गुणदोषसन्दर्भे कस्यापि जनस्य वस्तुनः वा अवलोकनं कुर्मः तत्र मूल्याङ्कनं निहितं भवत्यैव। न तु केवलं छात्रस्य अपि तु शिक्षकस्य अथवा सम्पूर्णशिक्षणप्रणाल्याः तथा पाठ्यक्रमस्य अपि च शिक्षणविधीनां मूल्याङ्कनं भवति। अस्मात् ज्ञायते यत् मूल्याङ्कनप्रक्रिया एकाङ्गी न भूत्वा सकलकार्याणाम् एका शृङ्खला अस्ति।

परिभाषा -

(1) वेस्लेम महोदयानुसारम् :- मूल्याङ्कनं हि छात्रस्य व्यवहारे परिवर्तनेन सम्बन्धितानां सूचनानामेकत्रीकरणस्य, तेषां विवेचनस्य च पद्धतिः अस्ति।

मूल्याङ्कनं त्रिविधम्। यथा :-

(1) निदानात्मकमूल्याङ्कनम् (Diagnostic Assessment)

(2) प्रारूपात्मकमूल्याङ्कनम् (Formative Assessment)

(3) योगात्मकमूल्याङ्कनम् (Summative Assessment)

(1) निदानात्मकमूल्याङ्कनम् (Diagnostic Assessment)

पाठ्यक्रमं क्षुद्ररूपेण तथा स्वतन्त्ररूपेण अध्याप्य यदा मूल्याङ्कनं क्रियते तद् भवति प्रारूपात्मक मूल्याङ्कनम्। अस्मिन् मूल्याङ्कने अनुदेशनप्रक्रियायां तदा सूचनाः तथा प्रतिपुष्टयः लभ्यन्ते यदा अधिगमः सञ्जातः अथवा प्रचाल्यमानः अस्ति। अस्मिन् मूल्याङ्कने छात्राणाम् उन्नतिः मापयितुं शक्यते अपि तु स्वस्य उन्नतिः अपि विधातुं शक्यते एकानुदेशकरूपेण।

मूल्याङ्कनमेऽस्मिन् उद्देश्यानां प्राप्तेः उपरि बलं प्रदीयते। प्रत्येकम् अन्वितेः कृते विशेष-परीक्षणं निर्मायते। अध्यापकेन औपचारिकरीत्या अनौपचारिकरीत्या तथा अनुदेशन द्वारा नियन्त्रते तथा परीक्षितविषयस्य संशोधनमपि कर्तुं शक्यते। सर्वोपरि एतत् मूल्याङ्कनं शिक्षकेभ्यः छात्रेभ्यः च तेषां साफल्यासाफल्याविषये गुणदोषानां विषये च निरन्तरं पृष्ठपोषणं प्रददाति। यद्वारा ते जागरूकाः भूत्वा अग्रिमशिक्षणं प्रभावयितुं समर्थाः भवेयुः।

(2) प्रारूपात्मकमूल्याङ्कनम् (Formative Assessment)

कस्यापि कार्यक्रमस्य अन्तिमावस्थायां तस्य गुणवत्तायाः ज्ञापनाय यत् मूल्याङ्कनं क्रियते तत् भवति योगात्मकमूल्याङ्कनम्। नाम तस्य कार्यस्य आरम्भात् अन्तं यावत् सर्वासां क्रियाणां परीक्षणं भवत्यस्मिन् मूल्याङ्कने। अस्य मूल्याङ्कनस्योद्देश्यं भवति यत् एषा योजना अग्रे प्रचलिष्यति अथवा न। एतदतिरिच्य अनेकेषु वैकल्पिक कार्यक्रमेषु कः कार्यक्रमः स्थातव्यः अपि च कः त्याज्यः इत्येतेषु विषयेषु एतत् मूल्याङ्कनं स्थिरी करोति। अस्मिन् मूल्याङ्कने छात्रैः कियत् यावत् अधिगमः जातः तत् ज्ञातुं शक्यते। अस्यान्तर्गतं यदा परीक्षा छात्रैः उत्तीर्यते तदा अन्ते संकलितविधिशिक्षणं प्रदीयते।

(2) प्रारूप-योगात्मकमूल्याङ्कनयोर्मध्ये भेदः -

- प्रारूपात्मक मूल्याङ्कनम्

- (1) प्रारूपात्मकमूल्याङ्कनम् अध्यापनकालैव सम्पाद्यते।
- (2) अस्य प्रकृतिः निदानात्मिका भवति।
- (3) अस्य प्रयोगः असकृत कर्तुमेव शक्यते।
- (4) मूल्याङ्कनेऽस्मिन् एकांशः (Unit) योगात्मकसदृशः भवति।
- (5) अधिगमप्रक्रियायाः शक्तिनां दुर्बलतानाञ्च ज्ञानं जायते।
- (6) अस्य परिणामः तेभ्यः छात्रेभ्यः भवति ये कस्मिन्नपि एकांशे विषये वा निपुणतां प्राप्तवन्तः। तथा प्रभावपूर्ण, प्रेरणास्रोतः तथा पारितोषिकं स्यात्।
- (7) एतत् अनुदेशिताभिक्रमितस्य संशोधनं करोति। तथा केन्द्रितगुणवत्तायाः - निष्कर्षमपि सूचयति।
- (8) एतत् आन्तरिकमूल्याङ्कनं भवति।
- (9) एतत् योगात्मकमूल्याङ्कनवत् तादृशं विश्वसनीयम् उपयोगी तथा व्याहारिकं नास्ति।
- (10) एतत् अधिगम प्रक्रियायाः एकं महत्वपूर्णमङ्गं भवति, यत् अधिगम चक्रव्यूहे संशोधनाय सहायतां करोति।

- योगात्मकात्मकमूल्याङ्कनम् :-

- (1) योगात्मकमूल्याङ्कनं कस्यापि निश्चितावधेः परं तथा षाण्मासिकवार्षिकपरीक्षादीनाम् अनन्तरं सम्पाद्यते।
- (2) एतत् छात्रेभ्यः श्रेणीषु तुलनाकरणे सहायतां करोति।
- (3) अस्य प्रकृतिः निर्णयात्मिका भवति।
- (4) योगात्मकमूल्याङ्कने एकांशः (Unit) रूपात्मकसदृशः भवति।

-
- (5) एतत् मूल्याङ्कनम् उद्देश्यप्राप्तेः स्तरज्ञापने सहायतां करोति।
 - (6) परं योगात्मकमूल्याङ्कनं तेषां छात्राणां योग्यतानां दक्षतानां वा प्रमाणं करोति।
 - (7) एतत् परिसमाप्तानुदेशिताभिक्रमिषु केन्द्रितगुणवत्तायाः निष्कर्षं प्रतिपादयति।
 - (8) एतत् बाह्यमूल्याङ्कनं भवति।
 - (9) एतत् संरचनात्मकमूल्याङ्कनस्यापेक्षया अधिकं विश्वसनीयं, वैधं, उपयोगी तथा व्यावहारिकं भवति।
 - (10) मूल्याङ्कनं निर्णये एतत् कस्यापि पाठस्य अनुदेशनप्राप्तये प्रमाणपत्रप्राप्तये सहायतां करोति।

रचनात्मक-योगात्मकमूल्याङ्कनम्

अपूर्वा अग्रवाल

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

मूल्याङ्कनस्य सम्प्रत्यय :-

मूल्याङ्कनं मूल्याङ्कनमिति। मूल्याङ्कनं मूल्यनिर्धारणस्य प्रक्रिया वर्तते। शिक्षाक्षेत्रे मूल्याङ्कनस्य प्रयोगः विशेषरूपेण क्रियते। प्रत्येकगतिविधेः पश्चात् विद्यार्थिनः व्यवहारस्य परीक्षणं तत्र परिष्काराय निर्देशदानमेव मूल्याङ्कनं कथ्यते। मूल्याङ्कनम् एका सततप्रक्रिया वर्तते।

परिभाषा -

लीमहोदयानुसारम् - विद्यालयेन, कक्षया च निर्धारितलक्ष्याणां शैक्षिकोद्देश्यानां प्राप्तौ छात्रस्य प्रगतेः परीक्षणमेव मूल्याङ्कनं भवतीति।"

एन. एम. डांडेकरमहोदयानुसारम् - "Evaluation may be defined as a systematic process of determining the extent to which educational objectives are achieved by the pupils."

सर्वप्रथम मिचैल स्क्रीवेन (Michael Scriven) महोदयेन 1967 तम वर्षे मूल्याङ्कनस्य भेदः कृतः।

1. रचनामूल्याङ्कनम् (Formative Evaluation)
2. योगात्मकमूल्याङ्कनम् (Summative Evaluation)
1. रचनामूल्याङ्कनम् (Formative Evaluation) -

रचनामूल्याङ्कनम् प्रारूपमूल्याङ्कनम्, अधिगमाय मूल्याङ्कनं च नाम्नापि अभिधीयते। यदा निर्माणाधीनशैक्षिकयोजनायाः, प्रक्रियायाः वा स्वप्रारम्भिकावस्थायां परिष्काराय मूल्याङ्कनं क्रियते चेत्तत् रचनात्मकमूल्याङ्कनं कथ्यते। अर्थात् कस्याश्चित् शैक्षिकयोजनायाः मूल्याङ्कनं प्रभावशीलतां, गुणवत्तां, वाञ्छनीयताम्, उपयोगितां च वर्धयितुं क्रियते चेत्तत् रचनामूल्याङ्कनमुच्यते इति।

विशेषता -

1. स रचनात्मकमूल्याङ्कनं परिष्कारात्मकं भवति।

2. अनुदेशनसमये रचनात्मकमूल्याङ्कनं क्रियते।
3. अभिप्रेरणात्मकं, सूचनात्मकं च भवति।
4. रचनात्मकमूल्याङ्कनं निदानोपारात्मकशिक्षणे साहाय्यं भवति।
5. अनेन नूतनावसरस्य प्राप्तिः जायते इति।

2. योगात्मकमूल्याङ्कनम् -

योगात्मकमूल्याङ्कनम् संकलनात्मकमूल्याङ्कनम्, अधिगमस्यमूल्याङ्कनं च नाम्ना अभिधीयते। कस्यचित् शैक्षिककार्यक्रमस्य समाप्तौ तस्य समग्रवाञ्छनीयतां ज्ञातुं, कृतं मूल्याङ्कनं योगात्मकमूल्याङ्कनम् कथ्यते।

विशेषता -

1. योगात्मकमूल्याङ्कनम् अनुदेशनादनन्तरं क्रियते।
2. योगात्मकमूल्याङ्कनं षड्मासिकं वार्षिकं वा भवति।
3. योगात्मकमूल्याङ्कने परिष्कारस्य सम्भावना न भवति।
4. योगात्मकमूल्याङ्कने श्रेणी प्रदीयते।
5. अत्र सम्पूर्णविषयस्य मूल्याङ्कनं विधीयते।

रचनात्मक-योगात्मकमूल्याङ्कनयोर्मध्ये भेदः

| क्र. रचनात्मकमूल्याङ्कनम् | क्र. योगात्मकमूल्याङ्कनम् |
|--|---|
| 1. रचनात्मकमूल्याङ्कनम् अधिगमप्रक्रियायाः समये विधीयते। | 1. योगात्मकमूल्याङ्कनम् अधिगमप्रक्रियायाः समाप्त्यनन्तरं विधीयते। |
| 2. एतत् मूल्याङ्कनं छात्राणाम् अधिगमं संवर्धयति। | 2. अत्र छात्राणाम् उपलब्धेः मूल्याङ्कनं क्रियते। |
| 3. अत्र पाठ्यक्रमस्य लघुभूतस्य अंशस्य मूल्याङ्कनं क्रियते। | 3. अत्र सम्पूर्णविषयस्य मूल्याङ्कनं विधीयते। |
| 4. रचनामूल्याङ्कनम् एका प्रक्रिया रूपेण भवति। | 4. योगात्मकमूल्याङ्कनम् उत्पादरूपेण भवति। |
| 5. अनुदेशनप्रक्रिया अस्ति। | 5. श्रेणीकरणप्रक्रिया अस्ति। |
| 6. अल्पकालीननिर्णयस्वीकारे एतत् साहाय्यं भवति। | 6. योगात्मकमूल्याङ्कनं दीर्घकालीन निर्णयस्वीकारे साहाय्यं भवति। |
| 7. अत्र छात्रेभ्यः, अध्यापकेभ्यः च प्रतिपुष्टिं यच्छति। | 7. अत्र छात्रेभ्यः परिणामं यच्छति। |
| 8. रचनात्मकमूल्याङ्कनं निदानात्मकं भवति। | 8. योगात्मकमूल्याङ्कनं मूल्याङ्कनात्मकं भवति। |

श्रीचैतन्योपरि राधाकृष्णयोः प्रभावः

लक्ष्मीप्रिया नायक

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

भगवतः इच्छावशात् पृथिवी सृष्टा अभवत्। अन्यतमम्। ऋषिमुनीनामादर्शनेन भरितात्मनः अस्य देशस्य महत्त्वं विलक्षणम्। हिन्दुबहुले भारत शिवशक्तिवादः प्रमुखस्थानं भजते। पुराणेषु ब्रह्मपदार्थः शक्तिमान्। माया तस्य शक्तिरिति उक्तमस्ति। ऋग्वेदानुसारेण अम्भृणन्ऋषेः

कन्यायाः वाक् इति नाम्न्याः ब्रह्मवादिन्याः उक्तिः देवीसूक्तिरूपेण प्रसिद्धा। सा यदा ब्रह्मोपलब्धि कृतवती तदा सा अनुभूतवती यत् अहं ब्रह्मरूपा। अहं रूद्ररूपा, वसुरूपा, आदित्यरूपा, विश्वदेवतारूपा चेत्यादि, बृहदारण्यकोपनिषदानुसारेण आत्मा प्रथमतः सन्मात्रा रूपेण आसीत्। सा मायाशक्तिरूपेण अनन्तरं परिचिता। इयं शक्तिः क्रमशः वैष्णवधर्मे दर्शने च प्रविष्टा। ततः पूर्णविकासं प्राप्य सा शक्तिः राधारूपेण परिकल्पिता। कोषानुसारेण राध् धातोरर्थः सिद्धिः।

यन्नामहितमन्त्रयापनरः प्रीत्या स्वयं माधवः श्रीकृष्णोऽपि तद्भुतं स्फुरतं मे राधेति वर्णद्वयम्। एतेन ज्ञायते यत् शक्तिरूपिण्याः राधायाः नाम जपनं श्रीकृष्णः अपि कृतवान्। शक्तिं विना शिवः भवति। अतः शक्तिरूपिणी राधां विना श्रीकृष्णोऽपि न किञ्चित्। एतादृश्याः चिन्ताधारायाः पूर्णविकासं श्रीचैतन्य महाप्रभुः कृतवान्। श्री राधाम् आदाय तस्य यद् चिन्तनं तत् तस्य दार्शनिक अवबोधः उच्यते। राधाकृष्णयोः प्रेमोन्मत्तः श्रीचैतन्यः राधावादं यथा प्रसारितवान्। तद्दर्शनं यथा स्वयमवबुद्धवान् तत् सर्वमात्रालोच्यते। राधाकृष्णयोः अनिवर्चनीय तत्वेन चैतन्य प्रभावितः आसीत्।

बालचरितमिति रूपके सहृषणः दामोदशः गोपसुन्दरी इति पदानां व्यवहारात् ज्ञायते राधा इति शब्दस्य प्रभावः अथवा 'राधाकृष्णलीलाप्रभृति तदानीं प्रचलितं नासीत्। कालिदासमयेऽपि राधाकृष्णलीलाविषयः विश्रुतः नासीदिति। मेघदूते मेघवर्णनाप्रसङ्गे तेन लिखितं यत् -

रत्नछायाव्यतिकर इव प्रेक्ष्यमेतत् पुरस्ताद् धनुषखण्डमाखण्डलस्य वाल्मीकाग्रात् प्रभवति

येन श्यामं वपुरतितरां कान्तिमापत्स्यते ते बर्हेणेव स्फुरितरुचिना गोपवेरास्य विषोः॥

एतेन सः केवलं मयूरपुच्छधारिणा विष्णुना सह इन्द्रधनुर्मण्डितस्य मेघस्य तुलनां करोति। तदनन्तरं वर्तिना हालकविना रचितायां गाथासप्तशत्यां राधाकृष्णप्रेमाकिञ्चिद् वर्णितं दृश्यते। सखीमुखेन हालः वर्णयति यत् -

मुखमारुतेन त्वं कृष्ण गोरजोराधिकाया अपनयन्

एतासां वल्लवीनामन्यासमपि गौरवं हरसि”

अत्र वर्णितं यत् राधिकायाः मुखचुम्बनलालसी कृष्णः तस्या मुखनिकटे 'निजमुखं योजयित्वा तन् नयनयोः गोपरागं मुखवायुफुत्कारेण दुरीकरोति। एतद् अवलोक्य निकटवर्तिनीनां गोपाङ्गनानामन्येषां गौरवद्भासः जातः। समानावस्थायां विद्यमानामस्माकम् अपेक्षां कृत्वा इति ज्ञायते। कालिदास अनन्तरं हालकविसमये प्रायशः ख्रीष्टीयद्वितीयशतके राधाकृष्णलीला अद्भुतरिताऽऽसीदिति ज्ञायते।

शिक्षायाम् अनुशासनस्य आवश्यकता

अलका जेना

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

शिष्टजनैः निर्मिता या जीवनशैली तस्याः अनुकरणमेव अनुशासनम्। अनुशासनम् नाम शास्यते अनेन इति शासनम्। अनु उपसर्ग पूर्वक शास अनुशिष्टौ धातोः तस्मात् करणे

ल्युट् प्रत्यये सति अनुशासनम् इति रूपं भवति। सर्वस्मिन् अपि क्षेत्रे अनुशासनस्य अतीव आवश्यकता वर्तते। तत्रापि शिक्षायाम् अनुशासनस्य तादृशी एव आवश्यकता वर्तते यादृशो शरीर रक्षणाय आहारस्य आवश्यकता भवति। यदि मानव जीवने अनुशासनं न स्यात् तर्हि समग्रमपि जीवनं पशुवत् भावहीनं धर्मभ्रष्टं च स्यात्।

आङ्गल भाषायां अनुशासनस्य कृते Discipline इति शब्दः उपयुज्यते। अस्य शब्दस्योत्पत्तिः Disciplina इति लाटिनशब्दात् भवति। यस्मार्थं भवति। अभ्यासः नियमः, शिक्षा, अध्यापनं प्रशिक्षितव्यवस्था च। मित्ररूपेणाऽपि Discipline इति शब्दस्योत्पत्तिः Discipulum इति लाटिनभाषातः मन्यन्ते। यस्यार्थो वर्तते गुरुवः शिष्यकाशात् आकांक्षन्ते यच्छिष्याः श्रद्धपूर्वकमादेशपालनं कुर्युः। स्वजीवने आवश्यक वाञ्छितगुणानां विकासं कुर्युः। एवं प्रकारेण (Discipline) डिसिलिन शब्दस्य अर्थो वर्तते आचारेषु नियमितता संपादनम्।

तदेव टि. पि. नन् महोदयः अब्रवीत् अनुशासनं नाम स्वभावनां शक्तीनाञ्च नियन्त्रणं वर्तते, येन अव्यवस्थायाः व्यवस्थितता परिदृश्यते”। (Discipline consists in the submission of one's impulses and powers so regulations which imposes from upon chaos T. P. Nunn)

एवञ्च प्राचीनकालदारभ्य भारते अनुशासनस्य कृते अतीव महत्त्वं प्रदत्तम्। तत्र पुराणेषु श्लोकः अस्ति यत् -

लालायेत् पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत्।

प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्॥

एवं प्रकारेण गुरुकुले अपि आचार्याः छात्रान् अनुशासनविषये एवं बहुपदेशान् ददाति स्म। तत्र यथा - सत्यं वद। धर्मं चर स्याध्यायात्मा प्रमदः। मातृदेवो भव पितृदेवो भव। आचार्य देवो भव। श्रद्धया देयम्। एवं परञ्च अनुशासनेऽपि कालप्रभावेण मत्तद्वादानुगुणं परिवर्तनं दृश्यते यथा -

1. आदर्शवादानुगुणमनुशासनम्
2. प्रकृतिवादानुगुणमनुशासनम्
3. व्यवहारिकवादानुगुणमनुशासनम्
4. यथार्थवादानुगुणमनुशासनम्

तथा न आधुनिकेषु (आधुनिक शिक्षायां) अनुशासनस्य एवं प्रकाराणि सन्ति।

1. दमनात्मकानुशासनम्
2. प्रभावात्मकानुशासनम्
3. मुक्त्यात्मकानुशासनम्

एवं प्रकारेण ज्ञायते यत् अनुशासनस्य मुख्योद्देश्यं भवति आत्मनियन्त्रणक्षमतायाः विकाससम्पादनं व्यवहारसम्बन्धसमस्यानां निवारणम्, प्रजातन्त्रात्मकाभिवृत्तेः विकाससम्पादनम्। एवं तत्रापि मुख्यं भवति छात्राणां सदाचरणसंपादनं येन अस्वाभाविकानां प्रवृत्तीनाञ्च शक्तीनां नियन्त्रणं कृत्वा अव्यवस्थायाः व्यवस्था सम्पादमेव शिक्षानुशासनस्य परमोद्देश्यं वर्तते।

निष्कर्षः -

अनुशासनं नाम मानवजीवने ये दोषाः दृष्टाः तान् वीक्ष्य तेषां निवारणं येनोपायेन जायते। तन्नामानुशासनमिति। एतमेव शिक्षायां सर्वाङ्गीणविकासाय तथा सर्वविध लक्ष्यसिद्ध्यर्थमपि अनुशासनस्य महती आवश्यकता वर्तते।

एवं च शिक्षानुशासनं नाम शिक्षारूपिणि वृक्षे यावदनुशासनस्य सेचनं भवति। तावत् फलं कल्पलतेवात्र मिलत्येव। अतः सर्वत्र शिक्षानुशासनस्यावश्यकता दृश्यते एव।

शान्तिसंस्थापने बाधकत्वरूपेण आतङ्कवादः

मिनती पात्र

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

आतङ्कवादस्य स्वरूपम् -

आतङ्कस्य वादः आतङ्कवादः। अस्य व्युत्पत्तिः भवति - आ + तङ्क + धञ् + कृत्वम् - आतङ्कः इति आतङ्कवादशब्दस्य तात्पर्यमस्ति - भय-चिन्तयोः च स्थितिः। अस्य उद्देश्यं वर्तते हिंसा द्वारा जनेषु आतङ्कं स्थापयित्वा स्व-शक्तिं प्रदर्शनम् इति। आतङ्क्यते अववाद्यते जनेषु विस्फोटकं शास्त्रादि माध्यमेन यैः ते आतङ्कवादिनः। आतङ्कं भयङ्करः वादयन्ति ये ते सः आतङ्कवादिनः। आङ्गलभाषया (Terrorism) इति कथ्यते।

स्वार्थसिद्धिः तथा राजनैतिकोद्देश्याभ्यां प्रेरितौ तीव्रहिंसायाः प्रयोगः आतङ्कवादः वर्तते। आतङ्कवादः वर्तमानसमये भयङ्करः विश्वव्यापी समस्या वर्तते। आन्तराष्ट्रियस्तरे भीषणसमस्या रूपेण उपतिष्ठति आतङ्कवादः।

कलियुगः पापीयान युगः इति यत् सर्वे वदन्ति न तत् सत्यम्। किं सत्ययुगे आतङ्कवादिनः नासन्? तदा दूष्कृता विनासाय साक्षात् ईश्वरः मत्स्य-कुर्मः वराहः-नृसिंह-वामन रूपेण पापं विनाशयन्ति। त्रेतायुगे पुनः परशुरामरूपं गृहीत्वा सहस्रशः क्षत्रियान् जघान। तदचिन्तनं क्षत्रियाणां विचारे रामः आतङ्कवादि शिरोमणिसारासीत्। पुनः श्रीलंकायां रावणः अपि सः जगदिश्वरस्य श्रीरामचन्द्रस्य धर्मपत्नी सीतामपि बलात्कारेण हृत्वा आत्मनः आतङ्कवादि प्रतिपादयत् द्वापरयुगेऽपि समाजस्य स्थितिः शोचनीया अभवत्। यः कंसः कंसः न अधानीत्? कृष्णमारणाय सः निर्दयः शिशुन् जघान। सः शिशुमारकः आतङ्कवादः आसीत्।

आतङ्कवादस्य कारणानि -

आतङ्कवादस्य अनेककारणानि सन्ति। तेषु मुलकारणानि भवन्ति यथा -

- ८ शिक्षायाः धनस्य च अभावः
- ८ उद्योगप्राप्तेः अभावः
- ८ उचितः पथप्रदर्शनस्याभावः
- जनसंख्या वृद्धिः/विस्फोटः
- वाद्यशक्तिनां प्रभावः
- आजिविकायाः समस्या

- असमानता
 - स्वार्थपरता स्वार्थनिवद्धा संकुचिता दृष्टिः वा
 - वैरदेशानाम् आतङ्क्य अभिप्रेरणम्।
 - राष्ट्रियैकतायाः बाधकः
- तदनु क्षेत्रवादः, भाषावादः, धर्मान्धता, आर्थिकविषमता समन्वयस्य अभावः, नैतिकमूल्यानां ह्रासः, प्रशासनस्य निष्क्रियत्वम्। न्यायपालिकाया दुर्बलत्वम्, राजनैतिकं कारणञ्च इत्यादयः आतङ्कवादस्य प्रमुखकारणम्।

आतङ्कवादस्य दुष्प्रभावः -

आतङ्कवादस्य दुष्प्रभावः तु समाजस्य प्रत्येकं क्षेत्रं यथा समाजिकम् आर्थिकं राजनैतिकं सांस्कृतिकं धार्मिकं च पक्षं प्रभावयति। आतङ्कवादस्य कारणेन समाजे हिंसा अनैतिकता अराजकता च वर्धते। सम्प्रति अस्माकं भारतवर्षे सुचैतसः जनाः शिक्षान् गृहितवन्तः सन्तः अनैतिक उपायेन शिक्षाक्षेत्रे पदवीनां चयनार्थम् इमे उद्योगप्राप्तुं असमर्थाः भवति।

तदर्थं ते दुराचारिणः अस्मान् प्रलोभनं प्रदर्श्य आकर्षयन्ति। किं च जनमानसेषु भित्तिः भारतस्य द्वयीमुखाः पाकिस्थानचिनादयः अस्माकं देशे शान्तिं विघटितुं अस्मदीयान् जनान् धनमाध्यमेन आतङ्कवादीनः छात्रान् विस्तारयन्ति। पुनश्च भारतवर्षस्य पीडयतां आतङ्कवादीनां सकाशे कोटिपरिमितानि कृष्ण धनानि सन्ति। ते च आतङ्कवादिनः निर्धनान् जनान् तैः धनैः प्रलोभनं कृत्वा तान् आकर्षयन्ति। एतत् सर्वे परिचिन्त्य प्रधानमन्त्रिणः नरेन्द्रमोदि महाभागाः 2016 तमे वर्षे नवम्बरमासस्य अष्टमदिनाङ्कस्य रात्रौ विमुद्रीकरणं कृतम्।

आतङ्कवादस्य निरोधोपायाः -

- नैतिकशिक्षा / सुशिक्षा प्रदानम्
- राजनैतिकएकता
- भातृत्वभावनयाः विकासः
- वसुधैवकुटुम्बकम् इति भावना
- विमुदीकरणम्
- नियुक्तिः
- वाद्यशक्तिनां कठोरतापूर्वकदमनम्
- ८ जनानां मनसि जागरूकतायाः भावनायाः विकासः
- ८ राष्ट्रियैकता

पुनश्च धर्मसंस्थापनाय गीतायां वणितमस्ति यत् -

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारतम्
अभुत्थानमधर्मस्य तदात्मानं यृजाम्यहम्।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतम्
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

इति वचनानुसारेण यदा समाजे अधर्मः समायाति तदानीं स्वयमेव भगवान् मानवरूपं

परिधाय दुष्टजनान् परित्यागपूर्वकं पुनरपि धर्मं संस्थापयति। तथैव समाजेस्मिन् भ्रष्टाचारादि दूरीकरणाय स्वयमेव देशसेवकः महाराजः देशव्यवस्थां परिवर्तयति इति। धर्मशास्त्रेवर्णितमस्ति।

निष्कर्षः रूपेण -

एवंप्रकारेण यदि एकतायाः भावना मनसि निधाय सर्वेऽपि मिलित्वा आतङ्कवादस्य निवारणाय प्रयासं कृत्वा तस्य समाधानं करिष्यति चेत् तर्हि आतङ्कवादीनां प्रकोपः अपि शिथिलः भविष्यति। यद्वारा अस्माकं भारतवर्ष अवश्यमेव स्वर्णभारतेन परिवर्तिष्यते।

स्त्री शिक्षा

दिव्यांशु आर्य

शिक्षा शास्त्री द्वितीय वर्ष

प्राचीन काल में भी स्त्रियाँ, पुरुषों के समान शिक्षा प्राप्त करती थीं। वह अपनी विद्वता और संस्कृतियों के लिए बहुत प्रसिद्धि और यश प्राप्त करती थीं। लेकिन समय के साथ-साथ समाज में पुरुषवादी मानसिकता अपनी जड़े जमाती चली गई और स्त्रियों को दबाया-कुचला जाने लगा। हाल के वर्षों में समाज में एक जागृति आई है। वैचारिक स्वतंत्रता ने सामाजिक पुरुषवादी सोच की जड़ता को झकझोर डाला है और लोग स्त्री शिक्षा के महत्व को समझने लगे हैं। हालांकि अभी भी कुछ लोग हैं जो मानते हैं कि स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर की परिधि के भीतर ही होना चाहिए और स्त्री शिक्षा लाभ से अधिक हानि देती है। फिर भी, इन नकारात्मक सोचों को दरकिनार कर स्त्री शिक्षा दर दिनोंदिन बढ़ रही है। सह शिक्षा के साथ-साथ देश भर में लड़कियों की शिक्षा के लिए सैकड़ों अलग विद्यालय और महाविद्यालय भी खुले हैं, जिनमें हजारों लड़कियाँ पढ़ती हैं। कहते हैं, एक पुरुष को पढ़ाने से एक व्यक्ति शिक्षित होता है, जबकि अगर एक स्त्री को शिक्षा दी जाए तो पूरा परिवार शिक्षित होता है। स्त्री परिवार की धुरी होती है। वह माँ होती है। एक शिक्षित माँ अपने बच्चों में शिक्षा और संस्कार तो देती ही है, उनके स्वास्थ्य का भी बेहतर ध्यान रखती है। शिक्षित स्त्री घर-परिवार का प्रबंधन अधिक कुशलतापूर्वक कर सकती है, आय-अर्जन तथा अन्य कामों के मामले में पति का हाथ बँटाती है, अपने अधिकारों और दायित्वों को बेहतर रूप से समझती है और समाज में फैली कई बुराइयों के विरोध में खड़ी हो सकती है।

अब सवाल ये पैदा होता है कि उनके लिए सहशिक्षा का वातावरण बेहतर है या अलग शिक्षा का। कई अभिभावक सहशिक्षा का विरोध करते हैं। वे कहते हैं कि लड़कियों को लड़कों से इतना घुलना मिलना सही नहीं है। वह अपनी जगह सही हो सकते हैं, लेकिन अब वह समय नहीं, जब लड़कियों को घर के भीतर ही रहना होता था। अब उन्हें किसी न किसी काम से बाहर तो निकलना पड़ता ही है। ऐसे में लड़कों से संपर्क तो कहीं भी हो सकता है। अगर बचपन से ही उन्हें लड़कों से दूर-दूर रखा जाए तो वह अव्यावहारिक तथा अतिसंवेदनशील होने के साथ ही साथ आत्मविश्वासहीन भी हो जाएँगी। इसके अलावे, उन्हें लड़कों की प्रकृति की पहचान नहीं हो पाएगी, जो उनके लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है।

सहशिक्षा उन्हें लड़कों के स्वभाव से परिचित कराती है, जो उनके आगे के जीवन के लिए जरूरी

है। साथ ही, उनमें लड़कों से प्रतियोगिता तथा मित्रता की भावना भी जगाती है। अत्यधिक संकोच और हिचकिचाहट मिटाकर जीवन में खुलकर आगे बढ़ने का विश्वास देती है।

लड़कों की ही तरह लड़कियों को भी समग्र शिक्षा मिलनी चाहिए। वह शिक्षा जिसमें उनकी रुचि हो, जो उनके भविष्य के लिए नई राह खोलती हो, साथ ही, उसे अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों का ज्ञान देती हो। जो उसे मानवता की रक्षा करने का नैतिक साहस दे। अपनी भावना व्यक्त करने की भाषा सिखाए और अपने तथा अपने परिवार और समाज का कल्याण करने का सामर्थ्य दे। इसके अलावा, जरूरी है कि उनकी शिक्षा में शारीरिक शिक्षा और आत्मरक्षा के गुर भी शामिल होने चाहिए।

समाज स्त्री और पुरुष दोनों से मिलकर बना होता है। जब तक दोनों को समान शिक्षा तथा अवसर न दिया गया, तब तक समाज में संतुलन नहीं कायम होगा और सही अर्थों में विकास नहीं हो सकेगा। दोनों पक्षों की मजबूती ही समाज में वास्तविक मजबूती ला सकती है।

शारीरिक शिक्षा (Physical education)

सौरभ धाकड़

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्ष

शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्- शरीर समस्त धर्म का साधन है। हमारी ज्ञान अभिव्यक्ति का माध्यम शरीर ही हैं।

हमारे भारत में एक धारणा है 'स्वच्छ शरीर में ही स्वच्छ मस्तिष्क का निवास होता है। इस स्वस्थ मस्तिष्क के लिए शरीर को स्वस्थ होना आवश्यक है। शरीर के स्वास्थ्य के लिए शारीरिक शिक्षा का महत्व सभी ने स्वीकार किया है।

शारीरिक प्रशिक्षण से छात्रों में सामुहित भावना अनुशासन एवं व्यवस्थित कार्य करने की अभूतपूर्व क्षमता उत्पन्न होती है। उससे स्वस्थ समाज का निर्माण होता है। इस प्रकार शारीरिक शिक्षा व्यक्ति, समाज राष्ट्र व विश्व के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है।

शारीरिक शिक्षा का अर्थ - शारीरिक शिक्षा का शाब्दिक अर्थ तो 'शरीर की शिक्षा है परन्तु इसका भाव शरीर तक सीमित नहीं है। वास्तव में शारीरिक शिक्षा के द्वारा बालक का शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आत्मिक विकास होता है, उसका सन् व्यक्तित्व सुगठित होता है। शारीरिक शिक्षा केवल शारीरिक क्रिया नहीं है। 'शारीरिक शिक्षा, शिक्षा ही है। यह वह शिक्षा है जो शारीरिक क्रियाओं द्वारा बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व, शरीर, मन एवं आत्मा के पूर्ण विकास हेतु दी जाती है। प्राचीन काल में शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य मांसपेशियों को विकसित करके शारीरिक शक्ति को बढ़ाने तक ही सीमित था और इस सब का तात्पर्य यह था कि मनुष्य आखेट में, पेड़ों पर चढ़ने में, लकड़ी काटने में, नदी, तालाब में गोता लगाने में सफल हो सके। किंतु शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य में भी परिवर्तन होता गया और शारीरिक शिक्षा का अर्थ शरीर के अवयवों के विकास के लिए सुसंगठित कार्यक्रम के रूप में होने लगा। वर्तमान काल में शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम के

अंतर्गत व्यायाम, खेलकूद, मनोरंजन आदि विषय आते हैं।

शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति में शारीरिक शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है। खेल के मैदान में, धरती माता की धूल में ही बालक के व्यक्तित्व का वास्तविक गठन होता है। खेलों के द्वारा स्फूर्ति, बल, निर्णय शक्ति, संतुलन, साहस, सतकर्ता, आगे बढ़ने की वृत्ति, मिलकर काम करने की आदत, हार जीत में समत्व-भाव, अनुशासनबद्धता आदि शारीरिक, नैतिक, सामाजिक एवं आत्मिक गुणों का विकास होता है। शारीरिक क्रियाकलापों से यदि खुलकर बाहर आता है। भीतर की कुछ कुंठाएं, घुटन, निराशा आदि खेल की मस्ती में घुल जाती है। उत्साह उमड़ता है। क्रियाशीलता बढ़ती है, और उसे योग्य दिशा मिलती है। आनंद की प्राप्ति होती है, और आनंद में ही मानव के विकास की प्रेरणा निहित है।

विभिन्न स्तरों पर शारीरिक शिक्षा के संवर्धन के लिए संघ तथा संस्थाएँ स्थापित की गई हैं। ये संस्थाएँ समय समय पर प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताएँ भी आयोजित करती हैं। इन प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रतियोगियों को विशिष्ट प्रशिक्षण दिया जाता है। यही कारण है कि विश्व की प्रतियोगिताओं में दिनोंदिन प्रगति हो रही है।

आज खेलकूद (स्पोर्ट्स) भी शारीरिक शिक्षा का एक अंग हो चला है। इसके अंदर सभी खेल सम्मिलित हो जाते हैं जिनके द्वारा स्फूर्ति तथा मनोरंजन प्राप्त होता है। शारीरिक शिक्षा आज सामान्य शिक्षा का प्रमुख अंग समझी जाने लगी है।

शारीरिक शिक्षा के अंग - भारतीय मनोविज्ञान में मानव की भौतिक काय को स्थूल शरीर कहा गया है। इस स्थूल शरीर के दो भाग हैं। स्थूल देह को अन्नमय कोश एवं दुसरे भाग को प्राणमय कोश कहा गया है। अतः शारीरिक शिक्षा के अंतर्गत अन्नमय कोश और प्राणमय कोश-दोनों का विकास सम्मिलित है। सामान्य भाषा में अन्नमय कोश के विकास को शारीरिक विकास एवं प्राणमय कोश के विकास को संवेगात्मक विकास कहा जाता है।

शारीरिक विकास

उद्देश्य -शारीरिक विकास के तीन प्रधान उद्देश्य हैं-

शरीर को हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर, सुडौल बनाना एवं उसकी क्षमताओं का विकास करना। शरीर के सभी अंगों एवं संस्थानों की क्रियाओं का सर्वांगपूर्ण, प्रणालीबद्ध और सामंजस्यपूर्ण विकास करना।

शरीर का पूर्ण निरोग रहना। यदि शरीर में कोई दोष और विकृति हो तो उसे सुधारना। विशेष रूप से आँख, कान, नाक आदि इन्द्रियों को निरोग एवं क्षमतावान बनाना।

शारीरिक विकास के आवश्यक तत्व - भोजन, स्वच्छता, विश्राम, व्यायाम, सद्बिचार, एवं नियमितता

भोजन- शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भोजन का संतुलित एवं नियमित होना आवश्यक है। छात्रों को यह ज्ञान होना चाहिए कि संतुलित भोजन क्या होता है और भोजन नियमित समय पर और कितनी मात्र में किस प्रकार करना चाहिए। पानी पीने के नियमों की जानकारी उपयोगी है। भोजन में स्वच्छता एवं पवित्रता का ध्यान रखना चाहिए। यह जानना आवश्यक है कि हम अपने शरीर को

सबल और स्वस्थ रखने के लिए भोजन करते हैं, स्वादेन्द्रिय को सुख देने के लिए नहीं ।

स्वच्छता– शरीर को निरोग एवं स्वस्थ रखने के लिए यत्ना आवश्यक है। नियमित नान के द्वारा को स्वच्छ रखना, दांत, नाखून, वस्त्र आदि स्वच्छता, रहने, बैठने के स्थान आदि की स्वच्छता इन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

विश्राम– शरीर को समुचित विश्राम मिलना चाहिए। विश्राम अथवा सोने की अवधि आयु के अनुसार अलग अलग हो सकती है। सोने का स्थान बिल्कुल शांत और हवादार होना चाहिए स्नायुओं को आराम पहुँचाने के लिए पूर्ण निद्रा आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति को जाग्रत अवस्था में मांसपेशियों और स्नायुओं को विश्राम देने की विधि जाननी चाहिए। योगासनों में शवासन या शिथिलता की क्रिया इसके लिए बहुत उपयोगी है।

व्यायाम– शरीर के विकास के लिए मांसपेशियों में अच्छी गति और संतुलित वृद्धि लाने के लिए प्रतिदिन व्यायाम आवश्यक है। बालकों के दैनिक कार्यक्रम में व्यायाम, खेल-कूद को अच्छा स्थान देना चाहिए। रीढ़ की हड्डी और जोड़ों का कड़ा पड़ जाना, यह शरीर के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इसके लिए योगासनों का अभ्यास बहुत उपयोगी है। इनसे शरीर नमनीय एवं लचीला बनता है।

सद्बिचार एवं नियमितता– जीवन में सद्बिचार, नियमितता तथा स्वस्थ आदतों का शारीरिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहता है। छोटी आयु से ही बालकों में शारीरिक स्वास्थ्य, शक्ति, सामर्थ्य और सुन्दर, सुडौल शरीर के प्रति आदत का भाव सिखाना चाहिए। अच्छी आदतों, अच्छे विचारों का शारीरिक स्वास्थ्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। ब्रह्मचर्य की साधना शरीर को बलशाली, सुन्दर, सुडौल और अदम्य क्षमतावान बनाती है। इसका महत्व छात्रों को यथासमय बताना चाहिए। शिक्षा के समय में पढ़ाया जाने वाला एक पाठ्यक्रम है। इस शिक्षा से तात्पर्य उन प्रक्रियाओं से है जो मनुष्य के शारीरिक विकास में सहायक होती है।

मैं शिक्षक हूँ

सीमावती बारिक
शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

ना पेड़ हूँ ना शाख हूँ
हर रास्ता भटकने बालो को
अपने ओर खींचने वाला
में वह पुष्प का महक हूँ।।1।।
ना दिया हूँ न बाती हूँ
अन्धेरे में रोशनी दिखाने वाला
में तो वह तेल का दीपक हूँ।।2।।
ना नायक हूँ ना खलनायक हूँ
अपने बातों से सभी को हसाने वाला

मैं तो उस नाटक का विदूषक हूँ। 13।।
ना साध्य हूँ ना साधन हूँ
अपने आँखों से दिखाई देने वाला
मैं तो वह ज्ञान प्रत्यक्ष हूँ। 14।।
कभी डांट कर तो कभी मना कर
कभी रुला कर तो कभी हँसा कर
उनकी हर कमजोरियों का
उपचार करने वाला
मैं तो वह चिकित्सक हूँ। 15।।
ना चाहत है मुझे धन की
ना चाहत है मुझे सम्मान की
खुद प्यासा होकर भी
प्यासे को जल दिखाने वाला
मैं तो वह कुआँ का रक्षक हूँ। 16।।
हाँ है मुझमें कमियाँ
फिर भी अपने शिष्य को
राजा बनाने वाला
मैं तो वह चाणक्य हूँ। 17।।
कभी कभी टूट जाता हूँ मैं
जब मुझे मेरे अपने ही गलत समझते हैं
फिर भी खड़े होकर उन्हें
सही मार्ग दिखाने वाला
मैं तो वह मार्गदर्शक हूँ। 18।।
ना कुछ पाने की इच्छा है मुझमें
ना कुछ करने की ताकत है
फिर भी एकसाथ सभी किरदार को
बखूबी निभाता हूँ
क्योंकि मैं शिक्षक हूँ
मैं शिक्षक हूँ। 19।।

अनुशासन

वन्दिता राउत
शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

कभी पतङ्ग के धागे की तरह
ऊपर बनाये रखता है
कभी दीप की तरह
अन्धेरे में रोशनी दिखाता है
कभी अपनों के तरह चुपके से
कानों में सही या गलत बताता है
तो कभी गुरु की तरह
सही मार्ग दिखाता है
वह अनुशासन होता है.....(1)
कभी मन में एक सुकून सा होता है
कभी जिन्दगी में बहुत कुछ दे जाता है
कभी हमारे सबसे अच्छे दोस्त बन जाता है
तो कभी मरते दम तक साथ निभाता है
वह अनुशासन होता है.....(2)
कभी वो आग की तरह होता है
जिसमें हमारी सारी गलती जल जाता है,
कभी वो जल की तरह होता है
जो हमारे मन को शान्त कर देता है।
वह अनुशासन होता है.....(3)
कभी वो पुष्प की तरह होता है
जो हर तरफ महक भर देता है
कभी वो नियम की तरह होता है
जिसमें बन्धकर किसी का भविष्य सुधर जाता है
वह अनुशासन होता है..... (4)

विश्व शान्ति

पुष्पिता मिश्र

शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

‘सबको मिलकर बस एक आखिरी जंग शान्ति के लिए
हमारी दुनिया को शान्ति की जरूरत है।’

सचमुच आज मनुष्य विनाश के कगार पर खड़ा मृत्यु की गोद में धड़ाधड़ चला जा रहा है। मनुष्य मनुष्य को अपने स्वार्थों से जकड़ लिया है। वह इस स्वार्थ की पूर्ति के लिए आज भयानक और कठिन से कठिन अस्त्र-शस्त्रों की होड़ लगाए जा रहा है। आज इसीलिए मनुष्य सर्वविनाश के लिए अणुबम, परमाणु बम आदि बना बनाकर के अपनी अपार शक्ति का परिचय दे रहा है। इस प्रकार सम्पूर्ण विश्व एक बहुत बड़ी अशान्ति के दौर में पहुँच चुका है।

आज विश्व शान्ति की आवश्यकता बहुत अधिक और तेज गई है। विश्व शान्ति कैसे और किस प्रकार से हो सकती है। यह एक विचारणीय प्रश्न है। इस विषय के लिए हम यह कह सकते हैं कि विश्व शान्ति के लिए भाई चारे की भावना सबसे पहले जरूरी है। भाईचारे, मेल-मिलाप की भावना और परस्पर हित-चिन्तन की भावना विश्व शान्ति की दिशा में महान कदम और सार्थक कार्य होगा। अगर इस तरह की सद्भावना और श्रेष्ठ विचार प्राणी के मन में उत्पन्न हो जाएगा तो किसी प्रकार से विश्व में अशान्ति और अव्यवस्था की भावना नहीं हो सकती है।

आज यह सौभाग्य का विषय है कि विश्व के कई बड़े राष्ट्र विश्व शान्ति के प्रयास की दिशा में प्रयत्नशील दिखाई दे रहे हैं।

प्रत्येक वर्ष 21 सितम्बर के दिन को विश्व शान्ति दिवस के रूप में मनाया जाता है। विश्व शान्ति दिवस का अर्थ पूरे विश्व में शान्ति स्थापित करना है। आज पूरे विश्व में शान्ति स्थापित करने का कार्य संयुक्त राष्ट्र का है क्योंकि आजकल के युग में चारों ओर अशान्ति फैली हुई है। इस दिन पूरे विश्व में सफेद कबूतर उड़ाने की परम्परा है कारण सफेद कबूतर शान्ति का प्रतीक माना जाता है।

‘विश्व में शान्ति कायम हो सोचो क्या-क्या जतन किये शान्ति दिवस आया गगन में कुछ कबूतर उड़ा दिए। उड़ाना है तो भेदभाव, द्वेष-दंभ, भ्रष्टाचार उड़ा डालो शान्त सब कोलाहल होगा, हृदय प्रेममय बना डालो। आज का युग ऐसा युग बन गया है जिसमें हर आदमी अपने से नीचे वाले को कुचर कर आगे बढ़ना चाहता है और इसी कारण से यह अशान्ति फैली हुई है। किसी कवि ने आज विश्व की गम्भीर और अशान्त स्थिति पर विचार करते हुए लिखा है -

जान पड़ता है सब संकट विसार कर,
मानव है नाश के कगार पर,
जागी है, उसमें घाश्चिकता, बधिकता,
देवता नहीं हैं, कुछ वृद्ध बाल,

सबके लिए है काल,
दस्यु सम घात में है बड़ा
लज्जा नहीं आती है, आत्मा के हनन की।

विश्व शान्ति के लिये हमें प्रयास करना चाहिए कि हम भौतिकता के बने जंगल से आध्यात्मिकता के सपाट मैदान की ओर लौट आयें। विश्व शान्ति के प्रयास में हमें महान दार्शनिकों को और महात्माओं के जीवन सिद्धान्तों और आचरणों को अपनाना होगा। उनके अनुसार चलना होगा। इसके परिणामों को हमें समझ करके दूसरे को इससे प्रभावित करना होगा, तभी विश्व शान्ति का सार्थक और ठोस प्रयास होगा। हमारे अन्दर जो शठता, दुर्जनता और दानवता का प्रवेश हो चुका है उसे समाप्त करना होगा। भौतिकवादी दृष्टिकोण का परित्याग करके, इसके स्थान पर हमें प्रकृतिगामी और प्रकृतिवादी दृष्टिकोणों को अपनाना चाहिए।

समग्र विश्व में शान्ति स्थापन करने के लिए विश्व शान्ति दिवस अथवा अंतरराष्ट्रीय शान्ति दिवस प्रत्येक वर्ष 21 सितम्बर को मनाया जाता है। यह दिवस सभी देशों और लोगों के बीच स्वतन्त्रता, शान्ति और खुशी का एक आदर्श माना जाता है। 'विश्व शान्ति दिवस' मुख्यरूप से पूरी पृथ्वी पर शान्ति और अहिंसा स्थापित करने के लिए मनाया जाता है। शान्ति सभी को प्यारी होती है। इसकी खोज में मनुष्य अपना अधिकांश जीवन न्यौछावर कर देता है किन्तु यह काफी निराशजनक है कि आज इंसान दिन-प्रतिदिन इस शान्ति से दूर होता जा रहा है। पृथ्वी, आकाश व सागर सभी अशान्त हैं। स्वार्थ और घृणा ने मानव समाज को विखंडित कर दिया है। यूं तो 'विश्वशान्ति' का संदेश हर युग और हर दौर में दिया गया है, लेकिन इसको अमल में लाने वालों की संख्या बेहद कम रही है। आज प्रत्येक व्यक्ति को यह समझना होगा कि इंसानियत ही सबसे बड़ा धर्म है। और 'मन की शान्ति सबसे बड़ा धन है।'

वैज्ञानिक अध्यात्मवाद

पार्वती यादव

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्ष

वैज्ञानिक अध्यात्मवाद आधुनिक समय में एक नया चिंतन, नूतन विचारधारा है। इसकी पृष्ठभूमि में दार्शनिक सिद्धान्त एवं वैज्ञानिक प्रक्रियाओं का समन्वित आधार है तथा इसके स्वरूप में समग्र सर्वाङ्गीण जीवन पद्धति का दर्शन मौजूद है। इस चिन्तन में क्रिया, चिन्तन व सम्वेदना का समुचित ध्यान है तथा धर्म, दर्शन व विज्ञान की विचारशक्तियों का सार्थक समन्वय है। इस तरह यह आज का नया चिन्तन भी है और भावी मध्यता के लिए एक पूर्ण और सार्थक जीवन दर्शन भी है।

‘विज्ञान जगत के लिए आवश्यक है कर्मशील अध्यात्म’। वैज्ञानिक अध्यात्म में वैज्ञानिक जीवनदृष्टि एवं आध्यात्मिक जीवनमूल्यों का सुखद समन्वय है। वैज्ञानिक जीवनदृष्टि में पूर्वाग्रहों, मूढताओं एवं भ्रामक मान्यताओं का कोई स्थान नहीं है। यही तो तर्कसंगत, औचित्यनिष्ठ उद्देश्यपूर्ण व सत्यान्वेषी जिज्ञासु भाव ही सम्मानित होते हैं। इसमें रूढ़ियाँ नहीं, प्रायोगिक प्रक्रियाओं का

परिणाम ही प्रमाणिक माने जाते हैं। सूत्रवाक्य में कहें तो वैज्ञानिक जीवनदृष्टि में परम्पराओं की तुलना में विवेक को महत्त्व मिलता है वेदों के ऋषिगण इसी का 'सत्यमेव जयते' के रूप में उद्धोष करते हैं।

वैज्ञानिक जीवनदृष्टि का सत्य आध्यात्मिक जीवन मूल्यों की परिष्कृत संवेदना से मिलकर पूर्ण होता है। परिष्कृत संवेदना ही वह निर्मल स्रोत है, जिससे समस्त सद्गुण जन्मते और उपजते हैं। जहाँ परिष्कृत संवेदना का अभाव है, वहाँ सद्गुणों का भी सर्वथा अभाव होगा। कई बार भ्रान्तिवश सत्य एवं संवेदना को विरोधी मान लिया जाता है जो इन्हें विरोधी समझते हैं, वहीं विज्ञान और अध्यात्म के विरोधी होने की बात कहते हैं जबकि सत्य और संवेदना विज्ञान और अध्यात्म की परस्पर विरोधी नहीं, पूरक हैं। सत्य संवेदना को संकल्पनिष्ठ बनाता है और संवेदनासत्य को भावनिष्ठ, जीवन निष्ठ बनाती है।

वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रयोगों की निरंतरता जीवन को सत्यान्वेषी किन्तु संवेदनशील बनाए रखती है। इसके द्वारा मनुष्य में वैज्ञानिक प्रतिभा एवं संत की संवेदना का कुशल समायोजन व संतुलन बन पड़ता है इस प्रकार अध्यात्म अपने विशुद्ध रूप में एवं विज्ञान अपने मूल रूप में अध्यात्म-अन्तरंग जीवन की शोध, आत्मसाधना द्वारा उसके साक्षात्कार तथा आत्मिक प्रगति के आयामों को खोजने का प्रयास करता है विज्ञान पदार्थ जगत की दृश्य प्रकृति ब्रह्माण्डीय जगत का शोध करता है।

वर्तमान शिक्षा पद्धति

वैभव भूषण

शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

आज पढ़ने लिखने का मतलब कुर्सी पर बैठकर हुक्म चलाना हो गया है। पढ़े-लिखे लोग को काम करने में लज्जा का अनुभव होता है। इसलिए समाज की हालात दिनोदिन खराब होती जा रही है। बुद्धि और हाथ का उपयोग सम्यक रूप से नहीं हो पा रहा है। इसे भारत का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि आज ज्ञान और कर्म के बीच मेलजोल खत्म हो गया है। काम करने वाले के पास ज्ञान नहीं पहुँचता और ज्ञानी काम करना नहीं चाहता।

जो लोग पढ़ाई करते हैं वे ठंड, गर्मी तथा बरसात की मार नहीं झेल सकते हैं, जरा सा कुछ करना पड़ जाय बीमार पड़ जाते हैं या थक जाते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि आज शिक्षित लोग गूढ़ अनुभव को समझ नहीं पाते हैं। ऊपरी तौर पर देखने पर लगता है कि आजकल चारों ओर शिक्षा का विस्फोट हो रहा है। सभी पढ़-लिखकर नौकरी चाहते हैं। जिसके कारण सरकार के सामने विकट समस्याएँ खड़ी हो गई हैं। आजकल विद्यार्थी विद्यार्थी नहीं रहे वे तो परीक्षार्थी हो गये हैं। वे साम-दाम-दण्ड-भेद अपनाकर किसी तरह अधिक से अधिक अंक प्राप्त करना चाहते हैं। आजकल ज्ञान के बजाय जानकारी बटोर रहे हैं। यही एक समस्या का कारण है। आज इतनी बेकार तालीम दी जा रही है कि विद्यार्थी बगावती होता जा रहा है। इस कारण शस्त्र उठाने लगा है। इसी कारण समाज में हिंसा का बोलबाला हो रहा है। ज्ञान न होने के कारण

जानकारी उसे मिली है वह चर्चा करने के लिए तो ठीक है, किन्तु रोटी नहीं दे पाती। आजकल देखने पर तो ऐसा लगता है कि हर युवा किसी न किसी रूप में अवसाद से पीड़ित है। आज जरूरत है इस प्रकार के दोषों को दूर करने की।

समावेशी शिक्षा (शिक्षा नीति-2006 के सन्दर्भ में)

सुरेश लाक्रा

शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

समावेशात्मक शिक्षा का अर्थ है कि विशिष्ट शैक्षणिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामान्यविशिष्ट बालकों को समानाधिकार प्रदान करना। पहले समावेशी शिक्षा की परिकल्पना सिर्फ विशेष छात्रों के लिए की गई थी, लेकिन आधुनिक काल में इस सिद्धान्त को विस्तृत दृष्टिकोण के साथ शिक्षा में समन्वित किया गया। तथा समस्त बालकों को शिक्षा की प्रावधान हेतु शिक्षा नीति बनाई गयी। उसमें शिक्षा नीति 2006 के सन्दर्भ में विचार करेंगे।

समावेशी शिक्षा के सन्दर्भ में शिक्षा नीति -2006 के अन्तर्गत कुछ विशेष तत्त्व -

बाधित बालकों की प्रारम्भिक स्तर पर पहचान कर लेना तथा उनके लिए कार्यक्रम बनाना। शारीरिक तथा मानसिक दोषों से ग्रस्त बालक जो सामान्य शिक्षा संस्थानों में शिक्षा करने वालों की अपमान, तिरस्कार तथा हीन भावना की परिस्थिति से सुरक्षा प्रदान करना। सामान्य शिक्षा संस्थाओं में विशिष्ट शिक्षा के कार्यक्रमों को पयोग करने के लिए संसाधन एजेंसी के रूप में सेवाएँ उपलब्ध कराना। विकलांग बालकों के लाभ के लिए विभिन्न प्रविधियों का पर्याप्त विकास कराना। विकलांग को विभिन्न सहायक प्रविधियाँ उपलब्ध कराना। मानसिक रूप से अपांग बालकों के लिए मनोवैज्ञानिकपुनर्वास केन्द्र में शिक्षा की व्यवस्था कराना। इनकी आवश्यकताओं, क्षमताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम व मूल्यांकन का प्रबन्ध करना चाहिए।

प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर में विकलांग बालकों के लिए संस्था होना चाहिए तथा शिक्षा की रूप सततरूप से हो। वार्षिक समीक्षा पृथक् रूप से हो।

भारतीय संविधान के खण्ड तीन तथा चार में शिक्षा सम्बन्धी अनेक प्रावधान -

1. अल्पसंख्यकों की शिक्षा।
2. शिक्षा अधिकारों में समानता।
3. अनुसूचित जाति व जनजाति के बालकों की शिक्षा।
4. धार्मिक शिक्षा की स्वतन्त्रता।
5. शिक्षा के माध्यम से हिन्दी भाषा का विकास।

तदनुसार शिक्षा नीति में -

1. विकलांगता निवारण।
2. पुनर्वास उपाय।

-
3. विकलांग व्यक्तियों का आर्थिक पुनर्वास।
 - (क) सरकारी प्रतिष्ठानों में रोजगार।
 - (ख) निजी क्षेत्रों में मजदूरी रोजगार।
 - (ग) स्वरोजगार।
 4. विकलांग महिलाओं के लिए विशेष सुविधा।
 5. विकलांग बच्चे।
 6. बाधा मुक्त वातावरण।
 7. सामाजिक सुरक्षा। आदि मुहैया कराना।

मानसिक विकास में शिक्षकों एवं माता-पिता की भूमिका (Role of Teachers and parents in mental Development)

कृष्णाकान्त मिश्र

शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्ष

बालकों एवं किशोरों के मानसिक विकास में माता-पिता तथा शिक्षकों की भूमिका प्रधान होती है। इन दोनों के प्रयास से लड़के एवं लड़कियों में उचित मानसिक विकास हो जाता है। माता-पिता द्वारा अनौपचारिक शिक्षा घर पर दिये जाने से तथा शिक्षकों द्वारा विद्यालय में औपचारिक शिक्षा दिये जाने से बालकों के मानसिक विकास में अधिक तीव्रता आती है।

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने निम्नांकित कुछ ऐसे कारकों का उल्लेख किया है जिससे यह पता चलता है कि बालकों के मानसिक विकास में माता-पिता तथा शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं -

1. माता-पिता को घर में बालकों के सामने ऐसी समस्यात्मक परिस्थिति उपस्थित करनी चाहिए जो उनके उम्र के अनुकूल हो तथा जिससे उनमें सूझ तथा समझ की शक्ति का विकास हो। ऐसा करने से उनका मानसिक विकास तीव्र गति से आगे बढ़ता है।
2. माता-पिता को चाहिए कि वे दुलार-प्यार से बालकों द्वारा पूछे गये प्रश्नों के जबाब दें। इसमें उनमें आत्मसंतोष होता है तथा साथ ही साथ उनके मानसिक विकास का स्तर ऊँचा होता है।
3. माता-पिता को बालकों की उपलब्धियों की अधिक से अधिक प्रशंसा करनी चाहिए इससे उनमें आत्म-सम्मान तथा आत्म-विश्वास बढ़ता है जो मानसिक विकास के लिए एक अच्छा अनुकूल वातावरण तैयार करता है।
4. माता-पिता को बालकों की बौद्धिक क्षमता के अनुकूल ही कार्यों की उम्मीद करनी चाहिए। कुछ माता-पिता ऐसा नहीं करते और वे बालकों की बौद्धिक क्षमता से अधिक उच्च स्तर के कार्य की उम्मीद करते हैं जिसे बालक पूरा नहीं कर पाते। इससे वे क्रोधित हो जाते हैं और बालकों को डाँटना -फटकारना प्रारम्भ कर देते हैं। इससे बालकों में कुण्ठा उत्पन्न होती है जिससे उनके मानसिक विकास पर बुरा असर पड़ता है।
5. शिक्षकों को चाहिए कि वर्ग में बालकों को उनकी बौद्धिक क्षमता के स्तर के अनुकूल

कार्य दें तथा अपने अध्यापन का स्तर भी उसी के अनुकूल रखें। ऐसा करनेसे बालकों में असंतुष्टि नहीं होगी और उनके विकास के लिए एक अच्छी पृष्ठभूमि तैयार होगी।

6. शिक्षकों को वर्ग में शिक्षार्थियों के बीच उचित प्रतिस्पर्धा का भाव भी उत्पन्न करना चाहिए। 'सारासन' (1987) के अध्ययन के अनुसार प्रतिस्पर्धा का भाव शिक्षार्थियों के बीच में होने से मानसिक सतर्कता की वृद्धि होती है और इससे उनका उपयुक्त मानसिक विकास होता है। उपर्युक्त तथ्यों से यह पता चलता है कि माता-पिता तथा शिक्षकों की भूमिका बालकों के मानसिक विकास में अधिक है। ये लोग अपनी भूमिका उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में निभाकर बालकों में मानसिक विकास के स्तर को ऊँचा कर सकते हैं।

योगशिक्षा

अरुण कुमार:
शिक्षाचार्य द्वितीय वर्ष:

शिक्षा - (EDUCATION)

जीवनकार्यार्थम् आवश्यकतानां ज्ञाननैतिकमूल्यानां विकासेन सम्बद्धसमस्तक्रियाकलापाः शिक्षया बोध्यन्ते। शिक्षायाः उद्देश्यं पूर्वसूचनायुक्तं सुसज्जितनागरिकाणां विकासः, न केवलं व्यक्तेः विकासः अपितु प्रतिव्यक्तिसम्बद्धानां केषाञ्चन व्यवसायसम्बद्धावश्यकतानां समानप्रकृतिगुणानाञ्च विकासः। कयाचित् शिक्षया एतादृशापि गुणाः विकसिताः भवन्ति, येषामावश्यकता प्रत्येकस्मिन् जीवने वर्तते, अपि च तैरेव गुणैः सः समायोजितसामञ्जस्य युक्तजीवनं यापयति। शिक्षा इति शब्दः 'शिक्षिद्योपादाने' इत्यस्माद्धातोः 'गुरोश्चहलः' इत्यनेनसूत्रेण 'अ' प्रत्यये प्रातिपदिकत्वेन च शिक्षा इति शब्दः निष्पद्यते। यस्यार्थो भवति शिक्षणम् अध्ययनं वा। शिक्षा शब्दः आङ्ग्लभाषायां (Education) इति नाम्ना अभिधीयते। 'एजुकेशन' (Education) इति पदं लैटिन् भाषायाः 'अन्तः' इत्यर्थकस्य 'श्व' पदस्य, 'बहिरानयनम्' इत्यर्थकस्य 'ड्यूको' (Duco) इति च पदाभ्यां निष्पन्नं वर्तते। एवम्प्रकारेण एजुकेशन (Education) इति पदस्यार्थो भवति - 'आभ्यन्तराद्बहिरानयनम्'। एजुकेशन (Education) इति शब्दः लैटिन् भाषायाः Educatum, Educare तथा Educere पदत्रयाधारेण उत्पन्नः इति शिक्षाशास्त्रिणः अभिप्रयन्ति।

Educatum (एजुकेटम्) एतस्यार्थो भवति "To train", "act of teaching or training" प्रशिक्षणम्, शिक्षणकार्यम्, शिक्षणं वेति।

Educare (एजुकेयर) इत्यस्यार्थो भवति "To educate", "To bring up", "To raise" अग्रेसरणम्, बहिरानयनम्, विकासकरणं वेति।

Educere (एजुसयर) एतस्य पदस्याशयो भवति "To lead out" विकासोत्पादनम्।

शिक्षा एका तादृशी प्रक्रियाऽस्ति, यया बालकस्य जन्मजातशक्तीनां विकासः कर्तुं शक्यते। सम्प्रति शिक्षा शब्दस्य प्रयोगः अनेकार्थेषु भवति, तेषु केषाञ्चनप्रमुखार्थानामुल्लेखोऽत्र क्रियते -

शिक्षा एका विकासस्य प्रक्रिया।

शिक्षा अध्यापकप्रशिक्षणरूपा ।
शिक्षा एका पाठ्यवस्तुरूपा ।
शिक्षा एकः विनियोगः ।
शिक्षा एकं सामाजिकपरिवर्तनमेवञ्च नियन्त्रणस्य यन्त्रमस्ति ।
शिक्षा सामाजिकीकरणस्य सकारात्मकप्रक्रियाऽस्ति ।
शिक्षा एका निष्पन्दिनी ।
प्राच्यानां मते शिक्षायाः परिभाषाः
विवेकानन्दमहोदयानुसारम्-
अन्तर्निहितशक्तीनां बहिरानयनमेव शिक्षा ।
महात्मागान्धिमहोदयानुसारम्-
शिक्षया मे तात्पर्यं बालकमनुष्ययोः शरीरात्मनोः मस्तिष्कस्य च सर्वोत्कृष्टः सर्वपक्षीयः विकास
एव शिक्षा इति ।

पाश्चात्यानां मते शिक्षायाः परिभाषाः

जॉन् डीवी महोदयानुसारम् -

‘शिक्षायाः अर्थः अनुभवानां निर्माणं तेषांपुनर्निर्माणञ्च भवति ।’

एवम्प्रकारेण शिक्षा मानवस्य जन्मतः मृत्युपर्यन्तं, मानवान्तर्गत-विभिन्नप्रतिभानां, गुणानां, विवेकाविवेकविचाराणां जनयित्री वर्तते । येन मानवः स्वीकीयान्तर्गतप्रतिभानामभिव्यक्तिः शाब्दिकाशाब्दिकाभिनयादिभिः करोति । तत्र शाब्दिकाभिव्यक्तिः श्रेष्ठतरा वर्तते । शाब्दिकाभिव्यक्त्यै भाषायाः आवश्यकता नितरां भवति, विना भाषा ज्ञानेन मानवः स्वीयान् विचारान् जनानां सम्मुखे उपस्थापयितुं नैव समर्थः ।

अतः मानवेभ्यः भाषायाः ज्ञानम् अत्यन्तमावश्यकं वरीवर्ति । यतोहि औपचारिकी शिक्षा भवत्वथवा अनौपचारिकी निरौपचारिकी च सर्वाः शिक्षाः भाषायाः आश्रयमेव वाञ्छन्ति, उत आश्रयधीनाः भवन्ति । अतः भाषायाः इदं माहात्म्यमवलोक्याग्रे भाषायाः विशदं वर्णनं शोधकर्ता विधीयते ।

योगः -(YOGA)

योगदर्शनं दर्शनेषु अन्यतमम् । अस्य योगशास्त्रस्य रचयिता महर्षिः पतञ्जलिः । अयं पतञ्जलिः जीवः ईश्वरश्चेति तत्त्वद्वयं स्वीकरोति । अतः एव अस्य दर्शनस्य ‘सेश्वरसांख्यदर्शनम्’ इति नामान्तरम् । अस्यैव शास्त्रस्यापरं नाम ‘सांख्यप्रवचनम्’ इति । एतद्दर्शनं पतञ्जलिना प्रणीतत्वात् ‘पातञ्जलदर्शनम्’ इत्यपि व्यवहारयोग्यं भवति । यद्यपि पतञ्जलेः पूर्वाचार्याः हिरण्यगर्भयाज्ञवल्क्यादयः अनेके आचार्याः योगशास्त्रस्य प्रवक्तारः आसन्, अथापि जनसाधारणानां कृते पतञ्जलिरेव तं योगशास्त्रं सूत्ररूपेण ग्रन्थीकृत्य सम्यक् सरलरीत्या व्याजहार इति हेतोः अस्य योगदर्शनस्य ‘पातञ्जलदर्शनम्’ इति नाम सयुक्तिकं तिष्ठति । अस्मिन् योगशास्त्रे चत्वारः पादाः सन्ति । तेषां नामानि क्रमाद् भविष्यन्ति -समाधिपादः, साधनपादः विभूतिपादः, कैवल्यपादश्चेति । प्रथमे पादे भगवान् पतञ्जलिः- ‘अथ योगानुशासनम्’, इति शास्त्रारम्भस्य प्रतिज्ञां करोति । अनन्तरं योगस्य परिभाषा अस्ति -

‘योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः’ इति । चित्तवृत्तयः-प्रमाणविपर्ययविकल्पादयः । एतेषां निर्वर्तनं योगशब्दार्थः । समाधिशब्दस्यार्थः- सम्यक् आधानम् इति, अर्थात् चित्तस्य स्वात्मस्वरूपे अवस्थापनमिति । योगवासिष्ठे सामाधिलक्षणमेवमभिहितम्-

‘इमंगुणसमाहारमनात्मत्वेन पश्यतः’ ।

‘अन्तःसीतलतायस्य समाधिरितिकथ्यते’ ॥

इति । द्वितीये साधनपादे - ‘तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः’ (यो० सू०-१) इत्यादि सूत्रद्वारा चञ्चलचित्तपुरुषाणां तपः स्वाध्यायादि क्रियायोगः एवं यमनियमादिबहिरङ्गसाधनभूतानां तत्त्वानामुल्लेखः वर्णितः । अत्र तपः इति शब्देन चान्द्रायणादिक्लेशकारकस्य तपसः अर्थावबोधो न भवति, यतः चान्द्रायणादयः शरीरे क्लेशजनकत्वात् तेन चित्तस्य ऐकाग्र्यं न तिष्ठति । अत्र तपः शब्दार्थः इत्यंभूतः भवति-हितकारकं स्वल्पं सात्त्विकभोजनं तथा शीतोष्णसुखदुःखादीनां सहनं एवमिन्द्रियाणां निरोधात्मकं यद्भवति तत्तपः इत्युच्यते । योगशास्त्रे तपः प्रसन्नकरणात्मकं वर्तते न तु पीडात्मकम् । स्वाध्यायस्यार्थः-मोक्षशास्त्राध्ययनं या नियमपूर्वकं प्रणवादिजपानुष्ठानमिति । ईश्वर-प्रणिधानं नाम परमात्मनः अनुचिन्तनम् अथवा परमात्मनि सर्वकर्मणां समर्पणम् इति भवति । सर्वेषु क्रियायोगेषु ईश्वरप्रणिधानं नाम क्रियायोगः उत्तमः इति स्वीक्रियते । ‘यद्यत् कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम्’ इति ईश्वरप्रणिधानयुक्तः पुरुषः सर्वकर्माणि ईश्वरा-र्पितसेवाबुद्ध्या करोति इत्यादयः विषयाः प्रतिपादिताः । तृतीये विभूतिपादे -जन्मान्तज्ञानं, भूतभविष्यदर्थकं ज्ञानं, अन्तर्हितम् इत्यादि अनेकप्रकाराः सिद्धयः उपन्यस्ताः । चतुर्थे कैवल्यपादे - ‘जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धयः’ इति सूत्रेण पञ्चानां सिद्धीनां वर्णनं करोति । देवतानां सिद्धिः जन्मना एव जायते । एवं पक्षिणामाकाशे उड्डयनं पशूनां जलतरणमित्यादि जन्मतः एव प्रसिद्धाः । औषधेभ्यः सिद्धिः प्राप्यते । आयुर्वेद, रसेश्वरदर्शनादिषु सिद्धिरियं वर्णिता । मन्त्रेण एवं तपोबलेन सिद्धीनां प्राप्तिवर्णनं तन्त्रादिशास्त्रेषु मिलिष्यति । समाधेः सिद्धिः शास्त्रस्यास्य गौणविषयभूता भविष्यति । यमनियमादि अष्टाङ्गोपासनेन यदा योगवृक्षः फलति तदा पूर्णभावनया समाधिरुपफलपरिपक्वान्तरं प्रकृति-पुरुषयोः भेदात्मकः साक्षात्कारः सिध्यति । तदानीं असंगः पुरुषः स्वस्वरूपावस्थानेन तिष्ठतीति कृत्वा आत्यन्तिकदुःखविनाशरूपः मोक्षः सिध्यति । अस्मिन् योगशास्त्रे षड्विंशतितत्त्वानि भवन्ति । यथा सांख्याभ्युपगतानि पञ्चविंशतितत्त्वानि, एतेषामतिरिक्तत्वेन एकः ईश्वरः अस्तीति ईश्वरतत्त्वमपि पतञ्जलिरियं स्वीकरोति इत्यतः अस्य नाम सेश्वरवादी सांख्यः इति । ईश्वरस्य लक्षणमेव प्रतिपादयति पतञ्जलिः क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः (यो० सू० १-२४) इति ।

वैदिकी जीवनपद्धतिः धर्मार्थकाममोक्षरूपिणी पुरुषार्थचतुष्टये आश्रिता वर्तते । अन्तिमः पुरुषार्थः एव जीवनस्य अन्तिमम् उद्देश्यम् अस्ति । तदर्थमेव दर्शनशास्त्राणां प्रवृत्तिर्जायते यद्यपि सर्वाणि दर्शनानि स्व-स्वसिद्धान्तानुसारं मोक्षस्य निरूपणमकुर्वन् तथापि योगदर्शनं मोक्षस्य कृते साक्षात्कृतयत्नो विधीयते । मोक्षस्य निरूपणमकुर्वन् तथापि योगदर्शनं मोक्षस्य कृते साक्षात्कृतयत्नो विधीयते । मोक्षस्य कृते एव योगस्य उदयः सञ्जातः । इदं तात्पर्यं ‘योग’ पदस्य व्युत्पत्त्याऽपि स्पष्टमस्ति । ‘युज् समाधौ’ धातोः योगशब्दस्य निष्पत्तिः संजाता । आत्मनः परमात्मनि विलय एव योग उच्यते । यदा त्रिविधदुःखानाम् एकान्तिकी आत्यन्तिकी च निवृत्तिर्भवति, तदा आत्मा स्वरूपे

विलीनो भवति । तत्पश्चात् जननमरणादयः पुनर्न जायन्ते ।

अस्य आत्मसाक्षात्कारस्य शास्त्रीयं मार्गदर्शकं योगशास्त्रमस्ति । समाधेरवस्थायाः अपरः पर्यायो योगः एवास्ति । चित्तवृत्तिः बाह्यजगतः अपवार्य आन्तरतत्त्वे स्थिरयेत् इत्याकारकोऽयं योगमार्गोऽत्र प्रतिपादितः । योगदर्शनं वैदिकदर्शनमस्ति यतो हि वेदेषु उपनिषत्सु च योगस्य सोपायं वर्णनं प्राप्यते । प्राचां ऋषीणां त्रैकालिकज्ञानस्य मूलमिदं योगदर्शनमस्ति, अतोऽस्य प्राचीनता असन्दिग्धा प्रतीयते । यदा वेदानाम् अपौरुषेयत्वं परीक्ष्यते तदा योगः एव तेषां अपौरुषेयत्वस्य साधक इति सिद्ध्यति । यतो हि ऋषयोऽपि योगेन एव मन्त्राणां साक्षाद्दर्शनं कृतवन्तः । ते मन्त्रप्रणेतारो नासन् । अस्य अलौकिकवेदज्ञानजन्ययोगदर्शनस्य क्रियान्वयनं समाधिं विना नैव सम्भवति, अतः योगो वेदादपि प्राचीनं प्रतीयते । यद्यपि योगोऽपि एकं विशिष्टं ज्ञानमस्ति तथा च वेदाः अपि ज्ञानरूपाः सन्ति । ज्ञानस्य कदापि विनाशो नैव जायते । वेदाः अनादिज्ञानरूपाः वर्तन्ते । तेषामालोके योगमार्गस्य दर्शनम् अभवत् येन पश्चात् अदृष्टज्ञानम् अन्तर्निहितं ज्ञानं वा पुनः प्रकाशितम् । वैदिकदर्शनेषु योगस्य महत्त्वपूर्णं स्थानमस्ति । अवैदिकैः जैनबौद्धादिदर्शनैरपि अस्य महत्त्वं स्वीकृतं, स्वसम्प्रदायेषु च सादरं योगस्य प्रतिष्ठापना विहिता । उदाहरणार्थं जैनदर्शनस्याचार्येण 'उमास्वामिना हेमचन्द्रेण च' योगप्रक्रियाया विषयो विस्तरेण प्रतिपादितः । हठयोगानुगामिनि नाथसम्प्रदायेऽद्यापि योगस्य व्यावहारिक अभ्यासो विधीयते ।

योगशिक्षा -(YOGA EDUCATION)

वर्तमानसमये योगशिक्षायाः महत्त्वं अधिकं दरिदृष्यते । छात्रेषु योगशिक्षायाः महत्त्वं किमस्ति । यथा शिक्षां विना जीवनं अपूर्णमस्ति तथैव योगं विना सम्यक् स्वास्थ्यस्य कल्पनापि निष्क्रियं भवति, वैज्ञानिकाविष्काराणां अस्मिन् युगे शरीरस्य सुगठितं बलिष्ठञ्च कर्तुं असंख्यानि संसाधनानि उपलब्धानि सन्ति परन्तु किम् एतानि साधनानि सर्वेषां कृते समानरूपेण उपलब्धानि सन्ति न वा यतोहि एषा विलाससामग्री अस्ति । यस्याः आनन्दं किञ्चित् जनाः एव स्वीकुर्वन्ति । परन्तु योगः सर्वेषां कृते समानरूपेण उपलब्धः अस्ति । अस्मिन् किञ्चित् अपि धनस्य व्ययः नास्ति । योगस्यानन्दं स्वास्थ्यलाभञ्च सर्वे व्यक्तिः समानरूपेण उत्थातुं सक्यते अलम्, आवश्यकता अस्ति यत् सम्यक् प्रकारेण योगस्याधिगमनम् ।

विलासितायाः सर्वाणि साधनानि भवन्तः अपि, तथापि जनाः स्वस्थजीवनं न जीवितुं शक्यते । यस्य अत्यधिकः बृहत्तमं कारणं अस्मदीया जीवनशैली अस्मदीया मानसिकता च अपि अस्ति । स्वस्थजीवनस्य स्वीकर्तुं योगस्य सम्पूर्णज्ञानमावश्यकमस्ति । यतोहि अपूर्णज्ञानं कदापि कदापि हितकरं लाभप्रदं च भवति । शारीरिकं, मानसिकं, अथवा आध्यात्मिकसंस्कृतेः रूपे योगासनानां इतिहासः अनन्तगूढः अस्ति । योगाभ्यासः न केवलं वयस्कानां कृते अपितु युवानां शिशूनां च कृते विशेषकरम् अस्ति ।

छात्रेभ्यः योगः अत्यन्तलाभदायकः इति मन्यन्ते अस्मात् छात्राणां मन-मस्तिष्के स्थिरता आगच्छति एवञ्च छात्रान् स्वाध्ययने ध्यानकेन्द्रितकरणे अपि सहायता मिलन्ति । योगस्य चमत्कारः सम्पूर्णविश्वः स्वीकृतः अस्ति अनेन कारणेन विश्वस्य प्रायः देशेषु योगशिक्षायाः अनिवार्यं कृतमस्ति । योगस्य प्रभावः पश्यन् अद्यःचिकित्सकः एवं वैज्ञानिकः योगाभ्यासस्य परामर्शं ददाति । योगः

ऋषिः-मुनीनां कृते नास्ति अपितु समस्त मानवजातीनां कृते आवश्यकः अस्ति, विशेषकरः छात्रजीवनेभ्यः अत्यन्तमेव आवश्यकमस्ति ।

योगः सर्वेभ्यः समानं लाभं ददाति अतः योगस्याभ्यासः सर्वान् कुर्युः । अस्य लेखनेन वयं भवतः कृते अयं वक्तुं इच्छामः यत् छात्रेभ्यः योगशिक्षा किमर्थमावश्यकमस्ति ।

1. योगः छात्रेभ्यः महत्वमावश्यकञ्च अस्ति ।
2. दृढता एव एकाग्रतायाः वर्धयति योगः ।
3. योगेन मनसः आत्मविश्वासेन पूरयति ।
4. योगेन बुद्धिः तीव्रा तीक्ष्णा च भवति ।
5. योगेन व्यसनात् मुक्तिः मिलति ।

भारतीयसन्दर्भे अनिवार्यपाठ्यक्रमस्य महत्त्वम्

वेविना सेनापति

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

पाठ्यचर्या इति शब्दः आङ्ग्लभाषायां Curriculum इति कथ्यते । Curriculum इति शब्दः लैटिनभाषायाः Currere इति शब्दात् निष्पन्नो वर्तते, यस्यार्थः भवति धावनक्षेत्रम्, पाठ्यचर्यायां ते समस्तानुभवाः सम्मिलिताः भवन्ति यान् बालकः स्वविद्यालय निर्देशने प्राप्नोति । इयं पाठ्यचर्या अनियोजितामनेकांक्षणी च भवति, विद्यालये जायमानानां संपूर्णक्रियाकलापानां समूहः भवति पाठ्यचर्या ।

भारतीय सन्दर्भे अनिवार्यपाठ्यक्रमस्य महत्त्वम् -

विषयकेन्द्रितपाठ्यक्रमः बालकेन्द्रित पाठ्यक्रमस्य च प्रक्रियारूपेण च अस्य पाठ्यक्रमस्य विकासः जातः । अमेरिकायां अयं पाठ्यक्रमः अधिकः लोकप्रियः वर्तते । मनोवैज्ञानिकसिद्धान्तानुगुणं बालकानां रुचिः योग्यताश्च भिन्नाः भवन्ति । अतः सर्वेषां बालकानां कृते समानः पाठ्यक्रमः । सिद्धान्तोऽयं मनोवैज्ञानिकः दृश्यते । अनिवार्य पाठ्यक्रमे केचन विषयाः अनिवार्याः भवन्ति । केचन विषयाणां कृते छात्राणां स्वातन्त्र्यं भवति । ते स्वेच्छया विषयं स्वीकर्तुं स्वतन्त्राः भवन्ति ।

अस्य पाठ्यक्रमस्य मुख्योद्देश्यमस्ति बालकानां कृते अत्यन्तमुपयोगी विषयाणामेव अध्ययनं स्यात्, तेन छात्राणां रुचिः पाठ्यक्रमे भविष्यति ।

वासिङ्गटनः स्वस्य दैनिकवार्तापत्रे प्रकाशितं यत् -

अनिवार्य पाठ्यक्रमे उद्देश्यं युनां कृते व्यक्तिगत सामाजिक समस्यानां सम्बन्धितं अनुभव प्रदानम् । अस्मिन् पाठ्यक्रमे बालकेभ्यः वास्तविक समस्यानां समाधानाय अनुभवाः दीयन्ते । तेन भावि समस्यानां निराकरणाय सामर्थ्यम् उत्पद्यते । अनेन छात्राः सामाजिकाः सुनागरिकाश्च भवन्ति । प्रो. केशवल महोदयस्य अभिप्रायः भवति यत् अनिवार्य पाठ्यक्रमः बालकानां महत्वपूर्णः वैयक्तिक सामाजिक समस्याभिः सम्बन्धितः भवति ।

अनिवार्य पाठ्यक्रमस्योद्देश्यमस्ति यत् जीवनात् शिक्षाग्रहणम् न तु जीवनाय शिक्षाप्रदानम् । महात्मागान्धिमहोदयस्य अभिप्रायः वर्तते यत् - पाठ्यक्रमः सामाजिक शोषणं निवारयेत् जातिगत

भेदभावञ्च नाशयेत्। बालकानां सर्वाङ्गीणविकासाय पाठ्यक्रमे त्रीणि तत्त्वानि स्युः। यथा-

1. बाह्यसृष्टिः
2. सामाजिक वातावरणम्
3. कला शिल्पश्च।

अनिवार्य पाठ्यक्रमस्य विषयाः एतेषां त्रयाणां विषयाणाम् उपरि केन्द्रितः भवति। एतेषां चिन्तनपूर्वकमेव पाठ्यक्रमस्य निर्माणं भवति।

अनेन पाठ्यक्रमेण विद्यालयीय बालकानां सर्वाङ्गीण विकासः जायते।

पाठ्यचर्यायाः स्वरूपम्

पुष्पाञ्जली साहु

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

पाठ्यचर्यायाः अर्थः -

आङ्ग्लभाषायाः Curriculum इति शब्दः प्रयुज्यते, वस्तुतः अयं शब्दः लेटिनभाषायाः वर्तते यस्यार्थः भवति 'धावनक्षेत्रम्' शिक्षायाम् अस्यार्थः छात्राणां कार्यक्षेत्रः अथवा छात्राणां धावनक्षेत्रम्। धावनक्षेत्रम् इत्यत्र क्षेत्रम् इत्युक्ते पाठ्यचर्या, एवञ्च धावनम् इत्युक्ते पाठ्यचर्या आधारित विभिन्नैः कार्यकलापैः प्रज्ञानुभवः विद्यालये जायमानां सम्पूर्णक्रियाकलापानां समूहः भवति पाठ्यचर्या इति।

पाठ्यचर्यायाः स्वरूपम् -

1. पाठ्यचर्या एका योजना वर्तते -यदा विद्यालये औपचारिक शिक्षां पठामः तदा ज्ञायते पाठ्यचर्या एका योजना वर्तते, यत् सर्वं पाठ्यचर्या योजनारूपेण स्वीक्रियते योजनायाः स्वरूपं भवेत् यत् किं करणीयम्? कदा करणीयम्? कथं करणीयम्? इति सर्वाणि अपि कार्याणि योजनायाः सम्बन्धाः भवेत्।
2. पाठ्यचर्या विविध क्रियाणां योजना वर्तते -विद्यालयीय पाठ्यक्रमे यथा प्रातः कालात् आरभ्य प्रार्थना सुभाषितानि, क्रीडाङ्गने क्रीडा, पाठ्यविषयः, संगोष्ठी च विविधाः क्रियाः सन्ति पाठ्यचर्यायाम् एतेषां योजना भवेत् पाठ्यसहगामिभ्यः याः करियाः वर्तते सर्वेषां क्रियायाणां मूलभूकथा वर्तते पाठ्यचर्या।
3. पाठ्यचर्यायां बहुनि उद्देश्यानि भवन्ति -उद्देश्यं विना किमपि कार्यं कर्तुं नैव शक्यते। सर्वेषां कार्याणां उद्देश्यं भवति एव, शास्त्रेणापि उक्तम् -उद्देश्यं विना न मन्दोऽपि प्रवर्तते। अतः पाठ्यचर्यायाम् उद्देश्यं स्थापनीयम्।
4. अधिगमस्य प्रकृतिः -पाठ्यचर्यायाः प्रकृति वर्तते छात्राणां कक्षानुगुणं अध्यापकः पाठनीयम्, कक्षायाम् अनुशासनः भवेत् अध्यापकस्य व्यवहारः उन्नतः भवेत् यथा छात्राणाम् अधिगमः भवति तथा पाठनीयम्।
5. विविध तत्त्वानां सम्बन्धानां विश्लेषणम् - उद्देश्यं विषयवस्तु, मूल्याङ्कनं त्रिषु तत्त्वेषु परस्परं समन्वयतः विश्लेषणञ्च। पुनश्च अन्यानपि कानिचन स्वरूपाणि वर्तते। यथा -

1. पाठ्यवस्तु

2. प्रकरणम्
3. अध्ययनक्षेत्रम्
4. रुचे: केन्द्रम्
5. समन्विताधिगमः
6. शैक्षिकानुभवः

1. पाठ्यवस्तु –पाठ्यचर्यायाः प्रमुखं स्वरूपं वर्तते पाठ्यवस्तु। यतोऽहि पाठ्यवस्तु पाठ्यचर्यायाः एकमङ्गमस्ति। अतः पाठ्यवस्तुनः उपरि गुरुत्वं दातव्यम्। किम् भवेत्, कथं भवेत् ? इति।
2. प्रकरणम् –पाठ्यचर्यायां पाठ्यवस्तु चयनात्परम् आगच्छति प्रकरणम् अर्थात् प्रकरणम् किं भवेत् येन छात्राणां सर्वाङ्गीणविकासः भविष्यति तथा च सः दक्षताशीलः भविष्यति एतेषाम् आधारेण प्रकरणं भवेत्।
3. अध्ययनक्षेत्रम् –केवलं पाठ्यवस्तुः प्रकरणञ्च पर्याप्तं न भवति, यावत् अध्ययनक्षेत्रम् समीचीनं न भवति अतः अध्ययननिमित्तमपि क्षेत्रं वातावरणं वा अनुकूलं स्यात्।
4. रुचे: केन्द्रम् –पाठ्यचर्या रुचिपूर्णा स्यात् अनेन शिक्षणं बालकेन्द्रितः भवति बालकेन्द्रित शिक्षायामेव पाठ्यचर्या मनोवैज्ञानिकयुक्तः भवति येन बालकस्य सर्वाङ्गीणविकासः भवति।
5. समन्विताधिगमः –समन्वितम् इत्युक्ते सामञ्जस्यम् अर्थात् पाठ्यचर्या एवं भवेत् एकया क्रियया सह अन्यक्रियायाः सामञ्जस्यम् भवेत् अनेन बालकस्य रुचिः वर्ध्निष्यति पाठस्य विकासश्च भवति।
6. शैक्षिकानुभवः –पाठ्यचर्या अनुभवाधारिता भवेत् यतोऽहि सैद्धान्तिक पाठस्यापेक्षया स्वानुभवेन अधिकं ज्ञानं प्राप्यते।

मूल्यशिक्षा

सागरिका प्रधान

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

मूल्यशब्दस्यार्थः – भारतीयधर्मग्रन्थेषु मूल्यशब्दस्य प्रयोगः मानवीयुणानां शीलशब्दार्थे विहितोऽस्ति। अयं मूल्यशब्दः आङ्ग्लभाषायाः Value इति पदात् निष्पन्नः जातः, Value इति शब्दः लैटिनभाषायाः Valene इति शब्दात् उत्पन्नोऽस्ति यस्य अर्थः कस्यचन वस्तुनः मूल्यम्, गुणम्, विशेषताम्, योग्यताम्, उपयोगिताम् एवं महत्त्वं वा सूचयेति। जीवने ‘शीलमेव’ (मूल्यम्) सदगुणसाधनमेव वर्तते। यत्र मूल्यम् तत्रैव धर्मः, सत्यम्, तेजं, बलं च स्वमहत्ताम् प्रदर्शयन्ति। मूल्येन वा त्रिलोकेमपि वयं जेतुं शक्यामहे। महाभारतमपि वक्ति –

शीलेन हि त्रयो लोकाः शक्याः जेतुं न संशयः।

न हि किञ्चिदसाध्यं वै लोके शीलवतां भवेत्॥

मूल्यानाम् परिभाषा –Jhone J.Kane महोदयानुसारम् –‘मानवमूल्यानि आदर्शरूपाणि विश्वसनीयरूपाणि, मोनकरूपाणि च भवन्ति, यानि सामाजिकजनाः स्वजीवने सर्वदैव अङ्गीकुर्वन्ति। मूल्यानां प्रकाराः –

1. नैतिक मूल्यानि

2. आध्यात्मिक मूल्यानि

3. सामाजिक मूल्यानि

4. शैक्षिक मूल्यानि

5. राष्ट्रिय मूल्यानि

1. नैतिक मूल्यानि –नीतौ भवः नैतिकः। अर्थात् व्यवहारे विचारे चिन्तने वा येषां मूल्यानाम् महत्त्वं वर्तते अमूनि मूल्यानि नैतिकमूल्यानि नाम्नाभिधीयते। महर्षि मनुना अपि उक्तम् –

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुः विद्या यशो बलम्॥

चरित्रविषये अपि सुन्दरम् उक्तम् –

वृत्तं यत्नेन संरक्षेत् वितमेति च याति च।

अक्षीणो वित्ततः क्षीणः वृत्तस्तु हतो हतः॥

2. आध्यात्मिकमूल्यानि –जगत्त्रयेस्मिन् नैव जीवाः निवसन्ति तेषां सर्वेषां आध्यात्मिकमहत्त्वं नैव भवति। केवलं मनुष्याणामेव वर्तते। दया, शान्ति, क्षमा, मैत्री, प्रीति सेवा, त्यागः, परोपकारः इत्यादयः अहिंसा परमो धर्मः, परोपकारार्थमिदं शरीरम्, प्रियच नान्ततं ब्रूयाद् एषः धर्मः सनातनः।

3. सामाजिकमूल्यानि –Fransic Bachon -man is social animal. He who lives without society either a beast or God. येन विश्वमेकं नीडं मत्वा कुटुम्बसदृशाः सर्वे जनाः विद्यन्ते इति भावना अस्माकं सर्वेषां मनसि अवश्यमेव स्यात्। यथा निगदितम् –

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिदुखभाग्यभवेत्॥

4. शैक्षिकमूल्यानि –शैक्षिकमूल्यानि तेषां विषयाणां समावेशः स्यात्, यानि विषयान् पठनेन बालकेषु आदर्शभावनाः, प्रेमभावनाः, सर्वाङ्गीणविकासः च स्यात्। तदर्थम् महापुरुषाणां जीवनादर्शरूपम् विषये योजनीयः।

5. राष्ट्रियमूल्यानि –अस्माकं जीवनस्योद्देश्यम् राष्ट्रम् एव भवति। अतः अस्माभिः सदा राष्ट्ररक्षार्थं प्रयत्नः विधेयः। यतोहि यदि राष्ट्रस्यावन्नतिः जायते तर्हि समाजस्य स्वीकृत्य अपि अवनति जायते। अतः अस्मासु सर्वेषु देशाभिमानम् दशगौरवं च स्वीयप्राणभ्यः अप्याधिकं स्यात्। भणितम् अप्यस्ति –

न यत्र देशोद्धृतकामनास्ते न मातृभूमेः हितचिन्तकं च।

न राष्ट्ररक्षा बलिदानभावः श्मशानतुल्यम् नरजीवनं तत्॥

मूल्याकलने प्रतिपुष्टिः Feedback in Assessment

लिप्सा तनया दाश

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

भूमिका –मूल्याकलनं नाम मूल्यानां आकलनम्। अत्र मूल्यम् इति पदेन कक्षाकक्षे शिक्षकछात्रयोः मध्ये अधिगमस्य कृतेक्रियमाणायाः क्रिया तस्याः नाम मूल्याकलनम्, मूल्याकलनस्य प्रयोगः छात्राणाम् आन्तरिकमूल्याङ्कनस्य कृते भवति, अध्यापकः पठितपाठः सफलं जातं वा इति परिक्षणार्थं करोति।

आकलनम् एका सम्वादात्मकं रचनात्मकं च प्रक्रिया अस्ति, यया शिक्षकः ज्ञातुं शक्नोति यत् छात्रान् अधिगमं भवन् अस्ति वा। तथा च कालांशः कियत् सफलं जातम् इति मूल्याङ्कनं पाठ्यक्रमस्य शिक्षणावध्याम् एव भवति।

पुष्टिं प्रति प्रतिपुष्टिः, पुष्टिनाम् प्रमाणितकरणम्। कार्यान्तरे शिक्षकः श्रेष्ठजनः वा यः निर्देशः ददाति तस्यैव नाम प्रतिपुष्टिः। सः अध्यापनानन्तरं परिक्षणाय मूल्याकलनं करोति। विषयावगमने यदि कापि समस्या भवति तदा सः प्रतिपुष्टिं दत्वा समस्यां निराकरोति।

मूल्याकलनस्य उद्देश्यानि –

1. निदानात्मकं भवति
2. अधिगमकार्यक्रमे परिष्कारः
3. छात्राध्यापकयोः कृते पृष्ठपोषणप्रदानार्थम्
4. छात्राणाम् अधिगमे का समस्या अस्ति इति ज्ञानार्थम्॥

प्रतिपुष्टेः उद्देश्यम् –

- मूल्याकलनस्य निर्माणम्
- अधिगमे परिष्काराय
- छात्रान् अग्रसरणाय
- अध्ययने रुचिसम्पादनाय
- उत्साह वर्धनाय
- शङ्का निवारणाय
- छात्रविकासाय

प्रतिपुष्टेः प्रकाराः –

- सकारात्मकः
- नकारात्मकः
- औपचारिकः

– अनौपचारिकः च अवसरे का अधिकलाभः ।

प्रतिपुष्टिः स्तरः –

- प्राथमिक स्तरः
- माध्यमिक स्तरः
- उच्चस्तरः ।

मूल्याकलने प्रतिपुष्टिः – प्रतिपुष्टिं विना मूल्याङ्कनस्य निर्माणं न भवितुं शक्नोति । तथा च मूल्याकलनस्य उद्देश्यमपि प्राप्तुं न शक्नुमः । मूल्याकलनानन्तरं यदा अध्यापकः प्रतिपुष्टिमेव न दास्यति तदा अधिगमे परिष्कारः कथं भवितुं शक्नोति । छात्राणां न्यूनताम् अपि अपाकर्तुम् असमर्थः । यदि छात्रस्य कस्मिन् विषये समस्या अस्ति तर्हि तस्याः समस्यायाः विषये प्रतिपुष्टिः आवश्यकी । शिक्षायाः सर्वेषु स्तरेषु प्रतिपुष्टिः आवश्यकी । प्राथमिकस्तरे यथा छात्रः हिन्दीभाषां पठति तदा सः समस्याम् अनुभवति तदा अध्यापकः इतोऽपि प्रतिपुष्टिं दत्वा सहायतां करोति । माध्यमिकस्तरे छात्राः विभिन्नेषु विषयेषु काठिन्यम् अनुभवति तदा तत्रापि अध्यापकः तेषां विषयाणां काठिन्यनिवारणं कृत्वा तान् छात्रान् अधिगमं प्रति नयति परिष्कारयति च । कक्षा-कक्षे मूल्याकनप्रतिपुष्टिः प्रयोगः अत्यावश्यकः ।

निष्कर्षः – शिक्षण प्रशिक्षणकार्यक्रमेषु प्रतिपुष्टिः एकां महत्त्वपूर्ण भूमिकां निर्वहति । प्रतिपुष्ट्या छात्राणां ज्ञानकौशल-व्यवहारस्य विकासः भवति । विद्यालये कक्षाक्रमे वा अस्या प्रयोगः अधिकतया कक्षायाम् अध्ययनाध्यापने एव भवति ।

स्मृतिग्रन्थेषु मूल्यशिक्षा

कुनि भोड़

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

अहंकारग्रहान्मुक्तः स्वरूपमुपपञ्चते ।

चन्द्रवद्विमलः पूर्णसदानन्देः स्वयंप्रभः ॥ (अध्यात्मोपनिषद्)

मानवं वास्तविकार्थेषु मानवनिर्माणस्य श्रेयः उदात्तजीवनमूल्यानि भवन्ति येषां साहाय्येन स्वात्मानं सात्त्विकजीवनं यापयति । वस्तुतः कस्यापि राष्ट्रस्य मूल्याङ्कनं तत्रत्याः जनसमाजस्य आचरणनात् मूल्यैः क्रियते । प्रत्येकराष्ट्रस्य एका भवति परम्परागतसंस्कृतिः, यस्याः सृजनं तेषां मूल्यानामाधारेण अभिजायते । यासां पालनं तत्रत्याः महापुरुषैः क्रियते । वस्तुतः ते मूल्यैः तेषां चरित्रं गौरवपूर्णव्यक्तित्वं स्वर्णाक्षरैः अङ्कितं जायते ।

भारतीयधार्मिकसाहित्ये स्मृतिनां मुख्यं स्थानमस्ति । श्रुतेः पश्चात् धार्मिकक्रियासु मान्याऽस्ति एषा एव । धर्मस्य महास्रोतः यत्रत्याः प्रवाहितः जातः तेषु स्मृतिः प्रधाना वर्तते । महर्षियाज्ञवल्क्येन धर्मस्य पञ्चमूल्यानि स्वीकृतानि । यथा- श्रुतिः, स्मृतिः, सदाचारः, स्वाभीष्टवस्तु, संकल्पेनोत्पन्नेच्छा च । अनेन कथनेन स्पष्टीक्रियते यत् धर्म-मीमांसायाः कृते वेदानान्तरं स्मृति एव प्रमाणं वर्तते । सामाजिकसन्दर्भेऽपि एतानां बहुमहत्वं प्रतिभाति । भारतीयसमाजः आश्रितोऽस्ति वर्णाश्रमसिद्धान्ते । अतः एतेषां सम्पूर्णज्ञानार्थं धर्मशास्त्रस्य ज्ञानमावश्यकं वर्तते । षोडशसंस्काराणां विधानं स्मृतिसु

निहितमस्ति । भारतीयाणां व्यवहारमवबोधनार्थमपि एतासामनुशीलनमनिवार्य निहितमस्ति ।

याज्ञवल्क्यस्मृतेः त्रयः मुख्यविषयाः सन्ति । आचारः व्यवहारः प्रायश्चित्तश्च । आचाराध्याये महर्षियाज्ञवल्क्येन मानवहृदयं शुद्धिकरणार्थं समाजानुकूलपवित्रनियमानां मण्डनं कृतम् । आचारः परमोधर्मः, आचारः मुख्यः भवति याज्ञवल्क्यस्मृतौ । आचारेण सदसमाजस्य स्थापना उन्नतिः च जायते । आचारशास्त्रं सामाजिकनियमान् परिपाल्य व्यक्तेः समाजस्य चारित्रिकबलं च वर्धयति ।

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।

सम्यक्संकल्पः कामो धर्ममूलमिदं स्मृतम् ॥ (या.ज्ञ. 1/7)

श्रुतवेदः, स्मृतिः, धर्मशास्त्रं, सदाचारः पवित्रविचारः, उदारभावः, परोपकारादर्शः सद्भिचारः सदेच्छा च एते एव सर्वे धर्माः ।

महर्षियाज्ञवल्क्येन आचाराध्याये चतुर्दशविद्याः धर्मस्य उपादनं संस्कारः (जन्मतः विवाहपर्यन्तम्) उपनयनः तस्य समयः ब्रह्मचारिणः कर्तव्याकर्तव्यः, विवाहः तस्य योग्यता सपिण्डसम्बन्धस्य नियमः अन्तर्जातीयनियमः अष्टविवाहः, गृहस्थस्य कर्तव्यम्, आचारस्य दससिद्धान्तः, गृहस्थस्य जीवनपद्धतिः, स्नातकस्य कर्तव्यम्, अनध्यायः, भक्ष्याभक्ष्यनियमः पवित्रीकरणस्य नियमः, दानस्य नियमः, श्राद्धविधिः नियमः, गृहशान्तिः, राजधर्मः, दण्डादीनां च विधानं क्रियते । एतेषां मूल्यानामाचरणेन पवित्रेण उत्तमसमाजस्य निर्माणं भवितुं शक्यते ।

व्यवहारानृपः पश्येद्विद्विद्ब्रह्मणैः सह ।

धर्मशास्त्रानुसारेण क्रोधलोभविवर्जितः ॥ (याज्ञ. 2/1)

प्रायश्चित्ताध्याये साताशातेन समाजेन व्यक्तिना वा अशातवशात् स्वात्मानं विरुद्धं कार्यं भवति, तदा एतादृश्यां परिस्थितौ आत्मविरुद्धकार्यं कृतव्यक्तिना विभिन्नविचारैः दुःखमनुभूयेत । भावीकाले एतादृशस्य कार्यस्य पुनारवृत्तिः न भवेत् ।

अस्यां सृष्टौ प्रायः मानवः एव एतादृशः प्राणी वर्तते यः सर्वाधिकसुखमिच्छति एषः एव पुण्यकर्मैः सुखोपभोगस्य उपार्जनं मोक्षलाभश्च कर्तुं शक्यते । शेषसमस्तस्योपनिषु प्राणिनां कर्माणि नष्टानि जातानि, सुख-दुःख पुण्यकर्माणामुपार्जनं प्रायः नास्ति । एतेषामुपार्जनं मनुष्यजन्मेषु एव मिलति । अस्मात् कारणात् महर्षिभिः मानवजीवनं श्रेष्ठं मन्यते । यथा-

कदाचिल्लभते जन्म मानुष्यं पुण्यसञ्चयात् ।

अन्यच्च नरत्वं दुर्लभं लोके.....

अत्र प्रश्नः समुदेति यत् कीदृशं कार्यं धार्मिकाधार्मिकश्च । एतस्य उत्तरं वेदस्मृतिविहितकार्यं धर्मः तद्विरुद्धकार्यम् अधर्मश्च । सन्दर्भेऽस्मिन् उक्तं यथा-

श्रुतिस्मृति विहितं कर्म धर्मस्तद्विपरीतमधर्मः ।

तथा- **वेदाऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् । (मनु. 2/6)**

मनुस्मृति एतादृशः ग्रन्थः वर्तते यस्मिन् धर्मार्थकाममोक्षस्य च विशदवर्णनं कृतम् । उक्तं यथा-

तस्मिन्देशे य आचारः पारंपर्यक्रमागतः ।

वर्णानां सान्तरालानां स सदाचर उच्यते ॥ (मनु. 2/18)

सदाचारः कः विषयेऽस्मिन् मनुस्मृतौ उक्तं यथा -

विरुद्धा च विगीता च दृष्टार्थादिष्टकारणे ।

स्मृतिर्न श्रुतिमूला स्याद्या चैषा संभवश्रुतिः ॥

अस्यां पृथिव्यामुत्पन्नेभ्यः ब्राह्मणेभ्यः सर्वे मानवाः स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेयुः यथा-

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः ।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥ (मनु. 2/20)

वेदः स्मृतिः आचारः प्रसन्नमनश्च एतानि साक्षाद्धर्मस्य लक्षणानि वर्तते यथा-

वेदस्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियात्मनः ।

एतच्चतुर्विधं प्राहः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥ (मनु. 2/12)

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् ।

आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च ॥ (मनु. 2/16)

सर्ववेदज्ञाता स्मृति ब्राह्मणत्वादि त्रयोदशप्रकारस्य शीलानि महात्मनामाचारणानि स्वयं प्रसन्नमनश्च सर्वाणि एतानि मूल्यानि सन्ति धर्मस्य-

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेवितः ।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम् ॥ (मनु. 2/121)

यः सर्वदा वृद्धजनान् प्रणमति तेषां सेवां च करोति तस्य आयुर्विद्या यशोबलं च सर्वदा वर्धयति ।

उपनीयः तु यः शिष्यं वेदमाध्यापयेद् द्विजः ।

संकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते ॥ (मनु. 2/140)

यो ब्राह्मणः शिष्यमुपनीय कल्परहस्यसहितं वेदशाखां समिध्यापयति तमाचार्यमुच्यते ।

उपाध्यायन्दशाचार्य आर्याणां शतं पिता ।

सहस्रं तु पितुन्मामा गौरवेणातिश्च्यते ॥ (मनु. 2/145)

दशोपाध्यायनपेक्ष्य आचार्यः, आचार्यशतमपेक्ष्य पिताः सहस्रं पितृणपेक्ष्य माता गौरवेणातिरिक्ता भवति । इति धर्मशास्त्रिणां मते 'संस्कारः' शब्दस्य परिभाषाः -

1. संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते । चरकसंहिता
2. संस्कारो हि नाम गुणाधानेन वा स्याद् दोषापनयेन वा । शंकरवेदान्तसूत्रम् 1/1/4
3. योग्यतां चादधानाः क्रिया संस्कारा इत्युच्यते । (तन्त्रवार्तिका)
4. आत्मशरीरान्यतरनिष्ठो विहित क्रियाजन्योऽतिशय विशेषः संस्कारः । वीरमित्रोदय संस्कार

प्रकाश भाग -

5. येन शरीरं मन आत्माचोत्तमा भवन्ति सः संस्कारः इत्युच्यते । ते च निषकादशमशानान्ता षोडशप्रकाराः । स्वामीदयानन्दः

उपर्युक्तपरिभाषाभिः स्पष्टीक्रियते यत् संस्कारः तत् धार्मिकानुष्ठानं वर्तते येन मानवः योग्यः भवति सार्थकजीवनं भवति गुणान् वर्धनम् अपगुणान् निवारयति च । यथा- स्वर्णकारः वह्निप्रभावेन कनकं परिष्कार्य आभूषणं निर्माति तथैव माता पिता गुरु पुरोहितश्च संस्कारैः व्यक्तिं परिशोध्य परिवार-

समाज-देशस्य च भावी सदस्यत्वेन निर्मितः भवति।

एतादृशानि बहूनि मूल्यानि स्मृतौ ग्रन्थौ वर्णितानि सन्ति। अतः एतेषां संस्काराणां पालने अवश्यमेव जीवनं भवति सदाचारशीलः। सन्दर्भेऽस्मिन् शास्त्रे उक्तं यथा-
यं मातापितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम्।

न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षे शतैरपि॥ (मनु. 2/227)

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥ (मनु. 3/56)

त्येजेदेकं कुलस्यार्थं कुलं ग्रामस्यार्थं।

ग्रामं जनपदस्यार्थं आत्मार्यं पृथ्वीं त्यजेत्। (अर्थशास्त्रम्)

द्रष्टृपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं पिवौज्जलम्।

सत्यपूतां वदेत् वाक्यं मनः पूतं समाचरेत्॥ (कौटिल्यः)

शाब्दबोधः

राई किशोरी दास

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

शब्दविषयकः अनुभवः शाब्दबोधः। आसवाक्यं शब्दः। यथार्थवक्ताः आसः। बोधः अर्थात् अधिगमः। अतः शब्दविषयकः बोधः/अधिगमः 'शाब्दबोधः'। 'शक्तिलक्षणान्यतरसम्बन्धेन पदजन्य पदार्थस्मृतित्वाच्छिन्न कारणतानिरूपित कार्यत्वं शाब्दबोधः'।

शाब्द बोध घटकानि तत्त्वानि

(1) कारणम् (2) सहकारिकारणम् (3) अवान्तरव्यापारः

1. पदजन्यं कारणम्। अर्थात् शाब्दबोधे कारणम् अपेक्षते।
2. आकांक्षा-योग्यता-सन्निधिः तात्पर्याणां प्रत्येकं ज्ञानं सहकारीकारणम्।
3. वृत्तिज्ञानसहकृतपदज्ञानजन्यपदार्थोपस्थितः अवान्तरव्यापारः।

फलव्यापारयोर्धातुराश्रये तु तिङ् स्मृता।

फले प्रधानं व्यापारस्तिङ्गस्तु विशेषणम्॥

फलस्य व्यापारस्य च वाचकः धातुः तथा आश्रयस्य (फलाश्रयः कर्म, व्यापाराश्रयः कर्ता) वाचकः तिङ्गः भवति। फले व्यापारः प्रधानः भवति। तिङ्गः कर्ता। कर्मे व्यापारे विशेषणं भवति।

वैयाकरणानां मते शाब्दबोधः -

- धात्वर्थः फलव्यापारौ।
- तिप्सादि तिङ्प्रत्ययाः भवति आख्यातः। अतः आख्यातार्थः तिङ्गः। कर्ता कर्म च आश्रयः भवति।

– कर्त्ता, कर्म, क्रिया च इत्यस्मात् निष्पन्नः शाब्दबोधे व्यापारः मुख्यः भवति ।

यथा –देवदत्तः ओदनं पचति ।

शाब्दबोधः –देवदत्ताभिन्नैककर्तृक ओदनकर्मक वर्तमानकालिकः विक्लित्यनुकूलो व्यापारः ।

अत्र कर्त्ता, कर्म, क्रिया च निष्पन्नि शाब्दबोधः भवति । अतः शाब्दबोधे व्यापारः मुख्यः भवति ।

नैयायिकानां मते शाब्दबोधः –

- धात्वर्थः फलव्यापारौ ।
- आख्यातार्थः (तिङर्थः) कृति (यत्न) भवति ।
- शाब्दबोधे प्रथमान्तार्थः मुख्यविषयकः भवति ।

यथा –देवदत्तः ओदनं पचति ।

शाब्दबोधे –ओदनकर्मक विक्लित्यनुकूलव्यापारानुकूल कृतिमान् देवदत्तः ।

अत्र प्रथमान्तार्थः देवदत्तः प्रधानः भवति, अतः प्रथमान्तमुख्यकः शाब्दबोधः भवति ।

अत्र वैयाकरणानां मतवद् धात्वर्थः समानः भवति, परन्तु आख्यातार्थः कृति प्रथमान्तार्थस्य मुख्यतायाः च अनयो मध्ये भेदः भवति ।

मीमांसकानां मते शाब्दबोधः –

- धात्वर्थः केवलं फलम् ।
- आख्यातार्थः व्यापारः भवति ।
- आश्रयः (कर्त्ता, कर्म) लक्षणायाः उपस्थितिः भवति ।

यथा –देवदत्तः पचति ।

शाब्दबोधः – देवदत्ताभिन्नैककर्तृक वर्तमानकालिक विक्लित्यनुकूलव्यापारः ।

अत्र वैयाकरणानां मतानां सम एव भवति । अत्रापि व्यापारमुख्यकः शाब्दबोधः, परन्तु किञ्चिदेव अनन्तरम् ।

- व्यापारः धात्वर्थः न भवति, अपितु आख्यातार्थः ।
- आश्रयः आख्यातार्थः न भवति, अपितु लक्षार्थः अर्थात् आक्षेपार्थः भवति ।

वैयाकरणानां मतेऽपि भेदः –

प्राचीन वैयाकरणानां मते –

1. धात्वर्थः फलव्यापारौ भवति ।
2. क्रिया कर्तृवाच्ये भवतु उत कर्मवाच्ये द्वयोः क्षेत्रयोः मध्ये शाब्दबोधव्यापारः एव मुख्यविशेषकः भवति ।

नवीन वैयाकरणानां मते –

1. धातोः फले व्यापारे च पृथक्-पृथक् खण्डशः शक्ति स्वीक्रियते ।
2. कर्तृवाच्ये –शाब्दबोधे व्यापारः एव प्रधानम् ।
3. कर्मवाच्ये –शाब्दबोधे फलमेव प्रधानम् ।

यथा –कर्तृवाच्ये –देवदत्तः ओदनं पचति ।

शाब्दबोधे –देवदत्ताभिन्नैककर्तृक ओदनकर्मकः वर्तमानकालिक क्लिलित्युनूकलव्यापारः ।

कर्मवाच्ये –देवदत्तेन ओदनः पच्यते ।

शाब्दबोधे –देवदत्तवृत्तिः वर्तमानकालिक व्यापारजन्य ओदननिष्ठ विक्लितः ।

शैक्षिकनिहितार्थः –

- शाब्दबोधेन वाक्यस्य सम्पूर्णस्वरूपस्य ज्ञानं भवति ।
- अनेन वाक्ये निहित कर्ता-क्रिया-कर्म च सर्वेषां ज्ञानं सम्यक् तथा भवति ।
- अनेन लेखनकौशले वैशिष्ट्यता आगच्छति ।
- शाब्दबोध द्वारा लेखन कौशलस्य तथा व्याकरणेऽपि दक्षता आगच्छति ।

पृथ्वीदिवसः

जयस्मिता बेहेरा

शिक्षाशास्त्री द्वितीय वर्षम्

सत्यं बृहदतमृगं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयामि ।

सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्यगुरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥

उपक्रमः –संस्कृतभाषायां पृथ्वीशब्दस्य अर्थः भवति –‘एका विशाल धरा’ । पुराणेषु वर्णितमस्ति यत् –महाराज पृथुः नाम राजा आसीत् । तस्य नामानुसारं अस्याः नाम –पृथ्वी इति भविता, ‘पृथ्वी’ विविधासु नामसु यथा– धरा, भूमिः, धरित्री, धरणी, रत्नगर्भा, वसुन्धरा, महि आदिषु सुपरिचिता अस्ति । अनायासु भाषासु अपि परिचिता यत् आङ्ग्लभाषायाम् –पृथ्वी –Earth , लेटिनभाषायां –Terra यां विश्वं अर्थात् ‘The World’ फ्रांसीसीभाषायां Terra इति कथ्यते ।

सौरमण्डलेषु स्थितेषु नवग्रहेषु ‘पृथ्वी’ एकम् एवं ग्रहः वर्तते, यत्र केवलं जीवनधारणं कर्तुं शक्यते, जीवाः अत्रैव जीवत्वं प्राप्यन्ते । सर्वेषां जीवानाम् आश्रयस्थले वर्तते इयं पृथ्वी । इतिहासः –1970, 11 अप्रैल इत्यस्मिन् दिनाङ्के सर्वप्रथमं पृथ्वीदिवसरूपेण पालितम् आसीत् । अस्य दिवसस्य स्थापना अमेरिका सीनेटर/सांसद जेराल्ड नेल्सन कृतवान् । इमं दिवसं 193 राष्ट्रः स्वस्य सहयोगं प्राददत, तस्मात् दिवसात् अद्यावधिपर्यन्तं प्रतिवर्षं अप्रैल 22 तमे दिनाङ्के पृथ्वीदिवसं पालितम् अस्ति ।

उद्देश्यम् –पृथ्वीं सुरक्षाप्रदानार्थम् अयं दिवसः परिपाल्यते । इयं पृथ्वी विविधासु प्राणीजरात्सु उद्भिदजगत्सु, नदी, समुद्र, ह्रद, सरोवर, पर्वत, वन्यसम्पदेषु परिपूर्णा अस्ति । एतत् सर्वं पर्यावरणम् अस्ति । पर्यावरणस्य आधारः पृथ्वी, तर्हि यदा पर्यावरणं सुरक्षितं भविष्यति, तदा पृथ्वीम् अवश्यं सुरक्षां प्राप्स्यति ।

अद्यतनकाले पर्यावरणस्य प्रदूषणं सर्वत्रैव परिलक्ष्यते, अस्य मुख्यकारणं भवति मनुष्यस्य अनादारभावेन तथा उपेक्षापूर्वकं कार्यम् । अतः पृथ्वीदिवसस्य प्रमुखोद्देश्यानि ये सन्ति – पर्यावरणसंरक्षणम् ।

अतः पृथ्वीदिवसस्य पालनस्य उद्देश्यं यत्– असन्तुलितपरिवेशं तथा प्रकृतिं सुरक्षाप्रदानम् । जनमनसि सचेतनभावजागरयित्वा विश्वस्तरे एकत्रीभूत्वा च सकारात्मकचिन्तनं तथा कार्यकरणं

यद्वारा भविष्ये नागरिकानां कृते एक सुरक्षितपर्यावरण निर्माणम्।

Save Earth, Save life

पृथ्वीदिवसस्य महत्त्वम् –पृथ्वीदिवसस्य महत्त्वं सर्वाधिकं वर्तते जीवनजगतः आधारः इयं पृथ्वी अस्माकं जननी अस्ति। जीवानां सर्वासाम् आवश्यकतानां परिपूर्तिः पृथ्वीमाता करोति। अस्याः सुरक्षाविषये सर्वे सचेतन भवेयुः। पृथ्वी सुरक्षितं भवेत् चेत् वयं सर्वेऽपि सुरक्षां प्राप्स्यामः। प्राकृतिकसंसाधनानां दुरुपयोगः, वनक्षय, औद्योगिकीकरणम् आदिकारणात् Global warming तथा ओजनपरते यत् ओजनगैस विद्यमानं भवति तस्य ह्रासः, आदि घातकः प्रभावः परिलक्ष्यते। एतेषां नकारात्मकप्रभावात् केन प्रकारेण इमं पृथ्वीं सुरक्षितं प्रदास्यते तस्य उपरि चिन्तनम् तथा सचेतन भूत्वा पदक्षेपं नीयेत्।

अतः कारणात् विश्वस्तरे सर्वे राष्ट्राः मिलित्वा अस्योपरि विचारं कृतवान् एवं प्रतिवर्षं 22 अप्रैल इत्यस्मिन् दिनाङ्के पृथ्वीदिवसं पालितम् अस्ति।

पृथ्वीदिवसस्य विषयः -International mother Earth Day.

विषयः 2019 – Theme 2019 - Perfect our Species.

अस्माकं प्रजातीनां सुरक्षा

विषयः 2018 –Theme 2018 - End Plastic Pollution

प्लास्टिकप्रदूषणस्य अन्तः

विषयः –2017 –

Theme 2017 - Environmental and climate Literacy.

पर्यावरणम् एवं जलवायु-साक्षरता

World Earth Day अस्योपरि दार्शनिकानां विचारः –

(1) According to Jackie Spien -Every day is Earth day and I vote we Start investing in a secure climate future night now.

प्रत्येकं दिवसं पृथ्वीदिवसं भवेत्, प्रतिदिनं अस्मान् सुरक्षितजलवायुनिमित्तं भविष्यकालं सुरक्षाप्रदानार्थं ये निवेश करणीयम्। एतदर्थम् अहं सर्वदा Vote प्रदानार्थं सन्नद्धा अस्मि।

(2) According to Rabindranath Tagore -There are Earths endless effort to speak to the listening heaven.

रविन्द्रनाथ टैगोरमहोदयानुसारम्- पृथ्वी वृक्षेषु सज्जीकरणं कृत्वा स्वर्गः इव निर्माणार्थं प्रयासः करणीयम्। वृक्षेण सह वार्तालापः तथा श्रवणं एते सर्वाः अनुभवाः हि स्वर्गानुभूतिः प्रददाति।

उपसंहारः –अन्तिमे एवं विचारं मनसि आयाति यत् –पृथ्वी यदि न स्थीयते तर्हि वयम् अपि न स्थास्यामः। सर्वेषां जीवानां जीवनम् अस्ति इयं पृथ्वी। आधाररूपेण पृथ्वी अस्मान् धारयति, सुरक्षा प्रददाति च तर्हि अस्माकं अपि प्रमुखदायित्वं वर्तते तां सुरक्षाप्रदानम्, कारणं सा सुरक्षितं भविष्यति चेत् वयम् अवश्यं सुरक्षां प्राप्स्यामः। अतः पृथ्वीं सुरक्षाप्रदानार्थं प्रतिवर्षं 22 अप्रैल इत्यस्मिन् दिनाङ्के Earth Day /पृथ्वीदिवसः पालयति। केवलम् एकं दिवसस्य कृते न वयं सर्वदा अर्थात्

प्रतिदिनं प्रतिक्षणं यदि एतस्याः सुरक्षार्थं चिन्तनं कुर्मः तर्हि अद्यतन काले पर्यावरणीय समस्या न भविष्यति तथा वयमपि सुखेन स्वस्थभूत्वा जीवनं निर्वाहं करिष्यामः। भविष्यनागरिकानां कृते अपि कोऽपि समस्या उपस्थितं न भविष्यति। अतः कारणात् सर्वेः अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति तः प्रारम्भं कृत्वा विश्वस्तरपर्यन्तम् एतस्मिन् विषये चिन्तनीयम् कार्यं करणीयम् च।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।

Earth is my mother, I am her child.

अहिंसा परमो धर्मः

स्नेहलता

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

संसारे यदि मनुष्यः सुखं वाञ्छति तदा तेन सर्वभावेन अहिंसा पालनीया। अहिंसायाम् आश्रित्य एव सः स्वयं सुखं प्राप्नोति तथा सर्वेभ्यः सुखं ददाति च। हिंसायाः अर्थः न केवलं हननं किन्तु परपीडनं परदुःखप्रदानमपि हिंसा एव। हिंसा त्रिविधा वर्तते। मनसा, वाचा, कर्मणा च कृतं हिंसनं हिंसा भवति। परेषाम् अहितचिन्तमपि हिंसा वर्तते। अतः एतासां हिंसानां त्यागः अहिंसा इति उच्यते।

यदि अहिंसायाः पालनं सर्वे मानवाः कुर्युः तदा सम्पूर्ण विश्वं शान्तिं भवेत्। सम्प्रति कलियुगे अनेके जनाः मांसाहारं कुर्वन्ति। प्राणीनां हत्वा कृत्वा ते मांसभक्षणं कुर्वन्ति एतत् महत्पापम्। जनाः गवादीनां पशुनाम् अपि हननं कुर्वन्ति। धेनवः तु देवसदृशाः सन्ति। तेषां हननं कादपि उचितं नास्ति। पशवः अहिंसाया वशीभूताः भवन्ति। अहिंसामार्गेण रिपवः अपि मित्राणि भवन्ति।

राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी महोदयः अहिंसादूतः आसीत् अहिंसामार्गमनुसरन् सः जनेभ्यः अपि अहिंसायाः उपदेशः प्रायच्छत्। सः अहिंसामाश्रित्य एव आङ्गलशासकान् अस्माकं देशात् निःसारितवान्।

हिंसया किमपि साधयितुं न शक्यते हिंसा कस्यचिदपि रोगस्य निदानं नास्ति। हिंसया हिंसा प्रवर्धते। जनेषु शत्रुभावना विकसिता भगवान् बुद्धः भगवान् महावीरः एतौ अहिंसा प्रवर्तकौ आस्ताम् भगवता महावीरेण सर्वेभ्यः अहिंसा संदेशः दत्तः। राजा अशोकः अपि युद्धस्य पश्चात् पश्चात्तापदग्धः अहिंसा मार्गः अनुसरितवान्।

सम्प्रति वैज्ञानिके युगे शस्त्राणां आविष्कारः भूतः किन्तु तेषाम् आविष्कारेण हिंसा एव प्रवर्धते। विनाशकैः शस्त्रैः निर्दोषप्राणिनामपि हिंसा भवति। अमेरिका इराकदेशयोः मध्ये महायुद्धं जातम्। तत्र अनेके निर्दोषः जनाः हताः युद्धेन किमपि न साध्यते। अहिंसया एव विश्वशान्तिः भवति। अतः सर्वे अहिंसामार्गः एव अनुसरणीयः। अहिंसापरायणः मानवः सर्वत्र सुखं लभते। यत्र अहिंसा भवति, तत्र सत्य, त्याग, तपस्या, प्रेम, पवित्रतादयः सद्भावनाः वसन्ति। अतः 'अहिंसा परमो धर्मः' इति सर्वस्वीकृतः। सत्यमुच्यते यत् -

न पापं हिंसातः परम्।

न धर्मः अहिंसात् परम्।

त्रिभाषासूत्रं संस्कृतं च (शिक्षाक्रमे संस्कृतस्य स्थानम्)

रस्मिता परिङ्गा

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्षम्

त्रिभाषासूत्रम् - भारतीयसर्वकारस्यादेशमनुसृत्य कैश्चिद्विपश्चिद्भिः त्रिभाषासूत्रं समर्थितम्। भारतसर्वकारेणापि समर्थितमनुमोदितं च तत् त्रिभाषासूत्रं भारतवर्षस्य सर्वेषु प्रान्तेषु प्रवर्तितम्। त्रिभाषासूत्रस्य (Three Language Formula) किन्निमित्तं, कोऽत्र हेतुः किमपि प्रयोजनञ्च। भारतवर्षे शिक्षाक्रमे भाषाणां पौर्वापर्यम्, उच्चावचत्वं, न्यूनाधिकत्वश्चाश्रित्य विविधाः विषादः प्रादुर्भूवन्। तद्विवादशान्तये, समरूपताऽऽकलनाय च त्रिभाषासूत्रस्य जानिरभूत्। त्रिभाषासूत्रप्रवर्तकानामभिमतमेतद् यत् शिक्षाक्रमे भाषाणां तथा समन्वयः सङ्कलनञ्च स्याद् यथा राष्ट्रहितसम्पादनेन सममेव अध्येतृणां वैज्ञानिकी, भौतिकी चोन्नतिः समजायेत्। एतद् विमृश्य राष्ट्रभाषारूपेण आर्यभाषाया हिन्दीभाषाया वा प्रथमं स्थानं निर्दिश्यते। एवं हिन्दीभाषा सर्वोत्कृष्टत्वमाश्रयते। अन्ताराष्ट्रियज्ञानोपादनार्थं वैदेशिक्याः कस्याश्चन भाषाया अनिवार्यरूपेणाध्ययनमन्वभूयत्। तत्राङ्गलभाषाया अन्ताराष्ट्रियख्यातिमुद्दिश्य पराधीनताकालिकं च तत्प्रसूतिमाश्रित्य द्वितीयाऽनिवार्य भाषारूपेणाङ्गलभाषा समर्थिता। भारते विविधाः प्रादेशिका भाषाः, यासां साहित्यमपि प्रचुरं, प्रशस्तं, लोकोपयोगी, ज्ञानविज्ञानवर्धकञ्च। सर्वेषां भारतीयानां प्रादेशिकभाषाज्ञानमपि नितरामनिवार्यम् अनुदिनं तत्प्रयोगोपपत्तेः। एवं प्रान्तीय भाषाः तृतीयं स्थानमलभन्त। अत्र राष्ट्रभाषा-अन्ताराष्ट्रियभाषा-प्रान्तीयभाषाणां समाहारः समन्वयश्च अभीष्टते।

त्रिभाषासूत्रे संस्कृतम् -

त्रिभाषासूत्रं सूक्ष्मेक्षिकया परीक्ष्यते विविच्यते चेत् संस्कृतभाषा भर्तृविरहिता नारीव, पुत्रादिपरित्यक्ता मातेव, निर्वसना अवधूता, अवहेलितेव संदृश्यते। न भारतीयानामध्येतृणां तादृशं श्रमाभिमुखत्वं विविधभाषाज्ञानाभिरुचित्वं च, येन भाषातत्रयाध्ययनम्।

अनन्तरं तृतीयभाषाध्ययनं सम्भाव्येत्। यद्यपि विदेशेषु सन्ति तादृशाः प्रदेशाः जर्मनी-प्रान्स-स्वीट्जरलैण्डप्रभृतयः यत्र भाषात्रयं भाषाचतुष्टयं वा सामान्यजनैरपि अधीयते, शिक्ष्यते, व्यवहियते च। परं न भारते वर्षे तादृशी भाषा - जिज्ञासा, अभिरुचिश्च। अतः कृतेऽपि प्रयत्ने भारते चतुर्थभाषाध्ययनं सर्वथोपेक्ष्यते। येषां प्रदेशानां न प्रान्तीय भाषा हिन्दी-भाषा, ते स्वप्रान्तीयभाषाध्ययने प्रवर्तन्ते। अन्तराष्ट्रियभाषारूपेण स्यपि जर्मन-फ्रेन्च-रूसी-भाषाणां संग्रहे आङ्गलभाषैव सर्वकारस्याभिप्रेता, समर्थिता, प्रचारिता च। राष्ट्रभाषारूपेण हिन्दीभाषाध्ययनं तेषां कृते अनिवार्यम्। एवम् अहिन्दीभाषासु प्रान्तेषु संस्कृतस्य शिक्षाक्रमे स्थापनमध्यापनं च दुष्करमिव प्रतीयते। हिन्दीभाषिषु प्रदेशेषु राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वितीयभाषारूपेण पाठ्यते। तृतीयभाषारूपेण दाक्षिणात्यभाषा, संस्कृतभाषा वा वैकल्पिकरूपेण स्वीक्रियते, यत्र कुत्रापि दाक्षिणात्यभाषाध्ययने दुराग्रहो निधीयते तत्र गीर्वाणवाण्याः कृते प्रवेशो

निषिद्ध एवावगन्तव्यः। कियन्तः सन्ति तादृशाः संस्कृतानुरागिणो ये धर्मभावनाय कर्तव्यबुद्ध्या तत्त्वार्थज्ञानाधिगमया वा संस्कृतभाषाध्ययनं प्रवृत्ताः। एवं सुकरमेतदुक्तं यत् त्रिभाषासूत्रं संस्कृतभाषाध्ययने प्रत्यवायरूपमेव, न तु साधकम्, त्रिभाषासूत्रेण आङ्ग्लभाषा प्राचरे महत्साहाय्यमदायि इति निर्विवादम्। राष्ट्रभाषायाः कृते प्रान्तीयभाषाणां च कृते मार्गाः प्रशस्यते।

शिक्षाक्रमे संस्कृतस्य स्थानम्—

साम्प्रतिकः शिक्षाक्रमे भारतसर्वकारादेशानुसारं प्रवर्त्यते। यद्यपि त्रिभाषासूत्रानुसारं शिक्षाक्रमे प्रतिप्रदेशमायोज्यते प्रचार्यते च। सन्ति केचन् प्रदेशाः यत्र संस्कृतस्य गौरवमनुरुध्य तत्संरक्षणं बुद्ध्या च हिन्दीभाषापाठ्यक्रमे एव न्यूनाधिकरूपेण संस्कृतस्य समावेशो विधीयते। एवं क्षतविक्षताया अपि देववाण्याः वाङ्मात्रोपचारः शुश्रूषणं च सम्पाद्यते। एवमेवोच्चकक्षास्वपि संस्कृतस्य यत्र तत्र समन्वय आधीयते। परं सर्वमेतत् संस्कृतभाषा प्रचारदृष्ट्या न पर्याप्तम्, न च श्रेयोवहम्। हिन्दीभाषिसु प्रान्तेषु तृतीयभाषारूपेण संस्कृतस्य शिक्षाक्रमे स्थानमनिवार्यत्वेन सम्भव्यते, आशास्यते च। अहिन्दीभाषिसु प्रदेशेषु तथाविधौ विधिर्विधेयः यथा अनिवार्यरूपेण संस्कृताध्ययनं सम्भाव्येत्। तदर्थं हिन्दीभाषापाठ्यक्रमे प्रान्तीयभाषापाठ्यक्रमे वा न्यूनाधिकरूपेण संस्कृतस्य समाहारो विधेयः।

संस्कृत हि परमो निधिर्भारतस्य। कथमप्युपेक्षिता संस्कृतभाषा राष्ट्रस्य विनाशयैव भविता। यदा संस्कृतस्य गुणगौरवमुग्धाः पश्चात्यपि देशाः संस्कृताध्ययने प्रवर्तन्ते, विश्वविद्यालयादिषु संस्कृताध्ययनाध्यापनादेर्व्यवस्थामातिष्ठन्ते, तदा किं नैतद् दुःखावहं, खेदजनकं च यद् भारते संस्कृतभाषा अपेक्ष्यते। प्राचीनसंस्कृतिसंरक्षणार्थम्, भारतवैभवज्ञानार्थम्, अध्यात्मतत्त्वावबोधाय, विविधशास्त्रावगाहिज्ञानोपादानाय च, वीणापाणिवाङ्मधुरं संस्कृतवाङ्मयं सर्वथा शिक्षाक्रमे प्रवेश्यम् आधेयं च।

चतुर्थ भावफलाध्याय

सरिता प्रज्ञा बेहेरा

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्ष

चतुर्थ स्थान में सुखेश या लग्नेश हो तो वह स्थान शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो पूर्णरूप से गेह सौख्य होता है। सुखेश अपने ग्रह स्वनवांश, अथवा अपने उच्चगत हो तो जातक को घर, जमीन, वाहन, माता तथा गीत वाद्यादि का सुख प्राप्त होता है। केन्द्र या त्रिकोण में सुखेश एवं राज्येश की सहावस्थिति हो तो जातक राजयोग्य प्रासाद में निवास करता है। शुभग्रह चतुर्थे शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हों और बुध लग्नगत हों तो जातक बन्धु पूज्य होता है।

चतुर्थ भाव शुभग्रहयुक्त हो, चतुर्थेश अपने उच्च में रहे, और मातृकारक ग्रह सबल हो तो जातक की माता दीर्घायुष्य वाली होती है। सुखेश तथा शुक्र केन्द्रस्थ हों बुध अपने उच्च में रहे, तो वाहन-सुख कहना चाहिए। चतुर्थ स्थान में शनि तथा सूर्य रहें चन्द्रमा भाग्यभाव गत होता है, मंगल एकादश स्थान गत हो तो जातक को बैल, भैंस आदि पशुओं का लाभ प्राप्त होता है। सुख स्थान चर राशि का हो, सुखेश मंगल के साथ स्थान चर राशि का हो, सुखेश मंगल के साथ छठे या वाहरवें स्थान में हो तो जातक मूक होता है। लग्नेश शुभग्रह हो, सुखेश नीच राशिगत पड़ जाय, चतुर्थ भाव कारक 12 वें में हो, सुखेश लाभस्थान में रहे तो बारहवें वर्ष में वाहन-सुख कहना

चाहिए। रवि युक्त वाहन स्थान हो चतुर्थे अपने उच्च में शुक्र-संयुक्त हो तो बत्तीसवें वर्ष यान की प्राप्ति होती है। सुखेश अपने उच्चाष मे कर्मेश से संयुक्त हो तो 42 वें वर्ष में वाहन-सुख होवे। लाभेश चतुर्थ स्थान में और चतुर्थेश लाभस्थान में हो तो 12 वें वर्ष में मनुष्य यान प्राप्त करे। इस प्रकार भाव की सम्पुष्टि रहने पर उस भाव से विचारणीय सभी पदार्थों की प्राप्ति और भाव भी दुर्बलता में उनका अभाव कहना चाहिए।

॥ चतुर्थभावफलाध्यायः समाप्तम् ॥

कथा कहानी

प्रिया चौहान

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्ष

कथा केवल उपदेशात्मक ही नहीं वरन् क्रियात्मक भावात्मक तथा संज्ञानात्मक भी होती है। कथा जीवन का वह आधार, तत्व, ज्ञान या भाव है जो सरलता से जीवन को परिवर्तित करने में सहायक है। जब विद्यार्थी बाल्यकाल में मातामही, पितामही, माता-पिता इत्यादि सम्बन्धियों के माध्यम से कथा का श्रवण करता है तो वह विद्यार्थी व बालक जीवन के मार्गों को समझने में समर्थ होता है, वह ग्रहण करता है कि उसे किस मार्ग का चयन करना है तथा वह ग्रहण करता है कि कौन सा मार्ग या दिशा सम्यक् है और परिवार तथा कुटुम्बियों के आदर्श संस्कार उस बालक-विद्यार्थी को प्रेरित-प्रोत्साहित करते रहते हैं। भारत एक महान् आध्यात्मिक राष्ट्र है जहाँ विभिन्न संस्कृतियों का समावेश निहित है। जिनमें हिन्दु संस्कृति से तो कोई भी अपरिचित नहीं है हिन्दू पौराणिक ग्रन्थों में जो कथाएँ हैं उन कथाओं का अध्ययन आज विश्व के विद्वान्-विदुषी करते हैं। उनका उद्देश्य कथाओं के माध्यम से हमारी संस्कृति हिन्दु को जानना समझना और पालन करना होता है कथाएँ मानवनिर्माण, राष्ट्रनिर्माण, समाजनिर्माण, विचारनिर्माण इत्यादि में अत्यन्त सहायक हैं।

शिक्षा का महत्व

क्षिरलता किसान

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्ष

शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण तंत्र है जो व्यक्ति के जीवन के साथ ही देश के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आजकल यह किसी भी समाज की नई पीढ़ी के उज्ज्वल भविष्य के लिए एक महत्वपूर्ण कारक बन गयी है। शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखने हुए, सरकार के द्वारा 5 साल से 15 साल तक की आयु वाले सभी बच्चों के लिए शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया है शिक्षा सभी के जीवन को सकारात्मक तरीके से प्रभावित करती है। और हमें जीवन को सभी छोटी और बड़ी समस्याओं का सामना करना सिखाती है, समाज में सभी के लिए शिक्षा की ओर इतने बड़े स्वर पर जागरूक करने के बाद भी, देश के विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षा का प्रतिशत अभी भी समान है।

पिछड़े क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए अच्छी शिक्षा के उचित लाभ प्राप्त नहीं हो रहे हैं

क्योंकि उनके पास धन और अन्य साधनों की कमी है यद्यपि, इन क्षेत्रों में इस समस्या को सुलझाने के लिए सरकार द्वारा कुछ नई और प्रभावी राजनीतियों की योजना बनाकर लागू किया गया है, शिक्षा ने मानसिक स्थिति को सुधारा है और लोगों के सोचने के तरीके को बदला है, यह आगे बढ़ने और सफलता और अनुभव प्राप्त करने के लिए आत्मविश्वास लाती है और सोच को कार्य रूप में बदलती है।

बिना शिक्षा के जीवन लक्ष्य रहित और कठिन हो जाता है इसलिए हमें शिक्षा के महत्व और दैनिक जीवन में इसकी आवश्यकता को समझना चाहिए। हमें पिछड़े क्षेत्रों में लोगों को शिक्षा के महत्व को बताकर उन्हें प्रोत्साहन देना चाहिए। विकलांग और गरीब व्यक्तियों को भी अमीर और सामान्य व्यक्तियों की तरह वैश्विक विकास प्राप्त करने के लिए शिक्षा की समान आवश्यकता है। और उन्हें समान अधिकार भी प्राप्त हैं, हमें सभी को उच्च स्तर पर शिक्षित होने के लिए अपने सबसे अच्छे प्रयासों को करने के साथ ही सभी को शिक्षा तक पहुँच को संभव बनाना चाहिए जिसमें सभी गरीब और विकलांग व्यक्ति वैश्विक आधार पर भाग ले सकें।

कुछ लोग ज्ञान और कौशल की कमी के कारण पूरी तरह से अशिक्षित रहकर बहुत दर्दनाक जीवन जीते हैं। कुछ लोग शिक्षित होते हैं लेकिन पिछड़े इलाकों में उचित शिक्षा प्रणाली के अभाव के कारण अपने दैनिक कार्यों के लिए धन जोड़ने में भी पर्याप्त कुशल नहीं होते, इस प्रकार हमें सभी के लिए अच्छी शिक्षा प्रणाली को प्राप्त करने के समान अवसर देने की कोशिश करनी चाहिए चाहे वो गरीब हो या अमीर एक देश नागरिकों के वैयक्तिक विकास और वृद्धि के बिना विकसित नहीं हो सकता इस प्रकार एक देश का व्यापक विकास उस देश में नागरिकों के लिए उपलब्ध प्रचलित शिक्षा प्रणाली पर निर्भर करता है, देश में हर क्षेत्र में नागरिकों के लिए अच्छी और उचित शिक्षा प्रणाली को उपलब्ध कराए जाने के सामान्य लक्ष्य को निर्धारित किया जाना चाहिए और शिक्षा प्राप्ति के रास्ते को सुगम व सुलभ बनाए जाने की कोशिश की जाती चाहिए, इस तरह देश अपने चहुँमुखी विकास की और अग्रसर होगा।

मनोविज्ञान में स्मृति

नरेन्द्र कुमार

शिक्षाशास्त्री द्वितीयवर्ष

स्मृति- स्मृति एक मानसिक क्रिया है स्मृति का आधार अर्जित अनुभव है। इसका पुनरुत्पादन परिस्थिति के अनुसार होती है। इससे व्यक्ति के द्वारा धारण की गई विषय वस्तु का पुनः स्मरण करने चेतना में लाकर उसका प्रयोग करता है किसी विषय वस्तु के धारण के लिये सर्वप्रथम विषयवस्तु का सीखना आवश्यक है। अधिगम के बिना धारण संभव नहीं है। अधिगम के फलस्वरूप प्राणी में कुछ परिवर्तन होता है। स्मृति चिन्ह कहते हैं ये स्मृति चिन्ह तब तक निष्क्रिय मस्तिष्क में पड़े रहते हैं जब तक कोई बाहरी उद्दीपक उन्हें जाग्रत नहीं करता है हमारी स्मृति कैसे काम करती है या फिर किसी भी चीज को कैसे याद रख पाते हैं? हमारे मस्तिष्क में किस प्रकार

संग्रहीत होती है? हम किसी चीज को क्यों भूल जाते हैं और कुछ चीजे भुलाए नहीं भूलते। इन मूलभूल प्रश्नों में मानव मन को सदा से ही आंदोलित किया है।

बुडवर्थ-पूर्व में सीखे गये ज्ञान का प्रत्यक्ष उपयोग ही स्मृति है।

स्टाउड- स्मृति एक आदर्श पुनरावृत्ति है।

मैक्डूगल- स्मृति से तात्पर्य अतीत की घटनाओं को कल्पना। और इन तत्वों को पहचान लेना कि ये अतीत के तत्व हैं यही स्मृति है।

स्मृति कि प्रकार

स्थायी स्मृति- सीखी गई बातों को लम्बे समय के उपरान्त बताने की क्षमता ही स्थायी स्मृति है।

अस्थायी स्मृति - इसको लघु अवधि स्मृति कहते हैं। इस प्रकार की स्मृति से तात्पर्य सीखने के थोड़ा समय पश्चात विषय वस्तु को दोबारा दोहराने से है।

भाषाई स्मृति- यह स्मृति विचारों सिद्धान्तों नियमों तथ्यों की पुनः प्रस्तुती से सम्बन्धित है

रटन्ट स्मृति- किसी विषय वस्तु को बिना अच्छी तरह से समझे धारण कर लेना, आवश्यकता पड़ने पर पुनः स्मरण कर लेना रटन्ट या यान्त्रिक स्मृति कहलाती है।

तार्किक स्मृति- किसी विषय वस्तु को अच्छी तरह समझकर सीखना धारण करना पुनः स्मरण करना तार्किक स्मृति के अन्तर्गत आता है

निष्क्रिय स्मृति-पूर्व अनुभवों को अत्यधिक प्रयास अथवा क्रिया के द्वारा पुनः स्मरण करना निष्क्रिय स्मृति कहलाती है।

सक्रियस्मृति- पूर्व अनुभवों को किसी प्रयास से पुनः स्मरण करना ही सक्रिय स्मृति है।

स्मृति के अंग

सीखना- यह स्मृति का पहला अंग है हम किसी बात को याद करना चाहते हैं उसको हमें सबसे पहले सीखना पड़ेगा।

गिलफोर्ड- किसी बात को भली भाँती याद रखने कि लिये अच्छी तरह से सीख लेना आधे से ज्यादा लड़ाई जीत लेना है।

धारण- स्मृति का यह दूसरा अंग है इसका अर्थ है सीखी हुई बातों को मस्तिष्क में संचित रखना जब हम किसी बात को हम सीखते तो कुछ समय पश्चात वह हमारे अचेतन मन में चली जाती है इस दशा में वह कितने समय तक संचित रह सकती है।

पुनः स्मरण-स्मृति का यह तीसरा अंग है इसका अर्थ है। सीखी हुई बात को चेतना मन में लाना।

पहचान- स्मृति का यह चौथा अंग है किसी याद की जाने वाली किसी बात गलती न करना पहचाना कहलाती है।

अच्छी स्मृति के लक्षण

1. शीघ्र अधिगम
2. उत्तम धारण शक्ति
3. अनावश्यक बातों की विस्मृति
4. शीघ्र पहचान
5. उपयोगिता

स्मरण करने कि विधियाँ पूर्ण विधि- इसमें याद जाने वाला पाठ को आरम्भ से अन्त तक पढ़ा जाता है। यह विधि केवल छोटे व सरल पाठों या कविताओं के लिये ही उपयुक्त है

खण्डविधि- इस विधि में याद किये गये पाठों को कई खण्डों व भागों में विभाजित कर दिया जाता है। यह विधि छोटे व सामान्य बच्चों के लिये लाभदायक है।

मिश्रित विधि- इसमें पूर्ण खण्ड विधि का साथ- साथ प्रयोग किया जाता है फिर पाठ को खण्डों में विभाजित करके पढ़ाया जाता है।

प्रगतिशीलविधि- इसमें पाठों को कई खण्डों में विभाजित कर लिया जाता है। सर्वप्रथम पहले खण्ड को पढ़ाया जाता है। फिर पहले के साथ दूसरे को जोड़ दिया जाता है फिर दूसरे के साथ तीसरे को जोड़ दिया जाता है।

अन्तर्युक्त विधि- इसमें पाठों को छोटे-छोटे अन्तर या समय के बाद या किया जाता है यह अन्तर एक मिनट का हो सकता है 24 मिनट का भी हो सकता है यह विधि स्थाई स्मृति कि लिए सबसे उत्तम विधि है।

अच्छी स्मृति लिये मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य जरूरी है। इसके भावात्मक लगाव भी आवश्यक है कुछ एकाग्रता बढ़ाने वाली विधियां जैसे कि ध्यान और प्रणायाम् आदि भी स्मृति की क्षमता बढ़ाने में उपयोगी सिद्ध हुई है।

॥ इति ॥

Language Skills

Batakrushna Mandal

B.ed. II

Languages are generally taught and assessed in terms of 'four skills' listening, speaking, reading and writing. The proper order or procedure involved in learning a language is Listening (L), Speaking (S)' Reading (R) and Writing(W). Thus, LSRW is the process of language acquisition. Listening and reading are known as receptive skills while speaking and writing are known as productive skills. All language learners will need to develop their skills in each of these areas and language class should incorporate activities related to all these skills.

According to NCF 2005 speech and listening, reading and writing, are all generalized skills and children's mastery over them becomes the key factor affecting success at school.

Listening - Listening comes first in the natural way of learning a language and forms the foundation for communicative competence in the new language. Listening is receiving language through ears when we listen something, we have to identify sounds of speech and process them into words and sentences. Speech, rhythm listening to appropriate language models.

Listening in any language requires active engagement of learners, focus and attention. Listening skills provide strength to our pronunciation skills. Additionally, we really mean what we listen to and understand.

Speaking - Speaking is a productive or expressive skill in oral mode and a crucial part of learning. Speech is normally produced by manipulating the airstream coming out of the lungs, speaking is an act of conversing or expressing one's thoughts and feelings in spoken language. It like the other skills, is more complicated than it seems at first and involves more than just pronouncing words.

Reading - Reading is readily accepted as a focus area for language education. A child's education is considered incomplete if the child does not have the ability to read. But in India reading does not get as much importance as it should get. According to NCF 2005 our school syllabi are burdened with information absorbing and memorizing tasks so pleasure of reading is missed out. Opportunities for individualized reading need to be built and all stages in order to promote a culture of reading and requires nurturing of school and community libraries.

Reading can be classified into the following types.

1. Silent Reading
2. Aloud Reading
3. Intensive Reading
4. Extensive Reading

Writing - Writing is the productive skill in the written mode. It too, is more complicated than it seems at first and often seems to be the hardest of the skills, even for native speakers of a language, since it involves not just a graphic representation of speech, but also the development and presentation of thoughts in a structured way. Writing skill is an important aspect of language teaching as writing skills reinforce oral and reading work.

According to NCF 2005, writing ability should be placed in the same domain as artistic expression and not to receive it as merely a skill developed for office work. During the primary years writing abilities should be developed holistically in conjunction with sensibilities associated with talking, listening and reading. At secondary level routine tasks like letter writing or essay writing should be less emphasized so that imagination and originality are allowed to play a more prominent role in education.

LIFE IS A PUZZLE

DEBIKALAPATI

2nd year

World is like a mirror
Glance it with a smile
Smile will return like Flowring River
To keep you happy all the while.
Life is a garden of roses
But thorns and take the roses
So that only good things you can find.
Goal is like a high peak
But hurdles are on the way
Guidance, Sincerity and hand work
will make them go away.
Feelings are like an ocean
Waves come and go by,
They bring you love, joy and pain
And never allow beaches to be dry.
Life is a picture puzzle
You have to solve it giving others joy.
You works in life will be like pearl
so that people will cry when you die.
Your absence made me realize.

CONVERSATION BETWEEN PENCIL & ERASER

PADMAYA PATRA

(B.Ed.2nd year)

Pencil- I am Sorry
Eraser- For what you don't do anything wrong.
Pencil- I am Sorry as you get hurt because of me. Whenever I make any mistake, you are always there to erase it, but as you make my mistake. You get smaller and smaller each time.

Eraser- That's true, But I don't really mind you see. I was made to help you. Whenever you do something wrong, though one day, I know you will be gone & you will replace me with a new one. I am actually happy with my job. So please Stop, I hate seeing you sad.

We found this conversation between the pencil and the Eraser, very inspirational. Parents are like an Eraser where as their children are the pencil. They are always there for their children, cleaning up their mistakes. Sometimes along the way..... They get hurt and become weaker and older and eventually pass way. This is parents. Children must, take care of their parents.

SELF EVALUATION

SANTOSH KUMAR MOHAPATRA

(B.Ed 2nd year)

Concept of Evaluation: -

Evaluation may be considered as the last stage in the teaching learning process. Learning may remain incomplete, if the teacher doesn't evaluate the outcome of learning experiences with the help of evaluation procedures. The teacher is in a position to judge the adequacy of subject matter, efficiency of the methods of presentation of materials and competence of himself as an instructor

Measurement and evaluation are not similar in sense. Measurement answers the question 'how much?' where as evaluation gives answer to 'what value?'. Evaluation therefore, implies pupil growth and development in context with educational goals that are set up. The major purpose of evaluation is to improve instruction. Hence it is necessary to examine how much of effective and worth while learning has taken place.

DEFINATION –

Educational evaluation is the evaluation process of characterizing and appraising some aspects of educational process.

PURPOSE OF EVALUATION-

The purpose of evaluation may be enumerated as follows-

-
- Evaluation helps in clarifying and redefining the objectives of education such as- what are the desirable objectives? How much has been achieved?
 - Evaluation helps in motivating students learning.
 - Evaluation assists in appraising pupil growth and development by interpreting this developmentally
 - Evaluation helps in providing and adopting courses and programmes to the needs of individual students.
 - Evaluation helps in framing adequate and reliable tools of measurement.

SELFEVALUATION

Self evaluation is defined as judging the quality of one's work based on evidence and explicit criteria for the purpose of doing better work in the future.

It is one of the best methods of performance appraisal, if it can systematically introduce. Self evaluation is the way in which an individual views himself.

BENEFITS OF SELFEVALUATION-

- Increase confidence in their own learning in trying out new ideas, in changing their practice and in their power to make a difference.
- Enthusiasm for collaborative working , despite initial anxieties about being observed and receiving feedback.
- Improve team-work and greater flexibility in their use of own skills.
- Increases awareness of new techniques and greater insight into thinking.
- Enhances planning skills to ensure more effective task management.

IMPACT OF MODERNISATION ON EDUCATION

CHITTARANJAN PADHAN – SIKHASASTRI
(B.Ed. 2nd year)

We are living in 21st century and this century acquainted as modern era. Now human claim himself and era as modern. Through modernisation

human makes impossible as possible. Dreams became true through this process. We making our life easy. Fast and easier through modernization. Day to day increase of modernization growing on and human also wants to increase it.

WHAT IS MODERNISATION?

Modernization is the process of change and development in social, economical, political and educational system. When we talk of modernization it refer to change the way of living (better life style) communication, literacy, urbanization, profession, education etc. so obviously it have great impact on society and our life style.

IMPACT ON EDUCATION-

Now a days the disease of modernization already effected o education. Education and modernization are both side of a coin. There was a time in India when education was giving in gurukul or ashram where guru(teacher) staying with students and directly connected with them but a time has come and now education is giving without teacher. Through impact of modernization. Education is giving by computer, projector, or light pen in absence of teacher. Obviously through computer, projector etc. Education became easy and interested within a second we can calculate big math. Through several type of ppt. or video education became so interested. Therefore in every educational institution like school, college or university there is heavy impact of modernization. Even little Childs or primary schools are effected with this modernization and if we think about university level education totally depend and effected on modernization because use of smart class, smart board etc.

Obviously this process giving some merits but now students have moral value no heart and no feeling because of this modernization. Now the mind of students is like a machine what do work according to instruction but less of moral value. Guru(teacher) is not only a provider of morality, spirituality and humanity. So now students have lack of these values. From childhood child effected with this modernization but less relation with family or society which creates obstacle in the real development of child.

CONCLUSION-

While a cool understanding response to modernization likely to yield a successful society the mad and vague response without understanding to modernization is likely to create trouble which in lieu is likely to ruin and spoil the life and hence the society.

Our society was believed on the bless of Guru and think guru a superior but now we are believe on the bless of modernization.

Life is ours and modernization is a concept, it's our choice how to think about modernization. – Choice is Ours.

NATIONAL HEALTHCARE

SUNIT KUMAR NAIK

(B.Ed. 2nd year)

India , a country of more than 1 billion, Spends only 5.2% on healthcare with more than 80% of this being spent in the private sector Indians have to depend on private sector, making a huge a dent in their personal resources. While India ranks among the top 10 countries for communicable disease. It is a world leader in disease like diabetes, hypertension and cardial ailments.

Malnutrition of children is a matter of major concern: 15% Death among children is caused by malnutrition. The latest UNICEF report says that 5000 children under the age of five die daily due to preventable diseases 900 people die of tuberculosis daily. Taking into account the magnitude of public health problems, spending on healthcare is negligible. India ranks at 171 out of 175 countries in public health spending (WHO).

National health policy in India was not framed until 1983. The objectives of the draft National health policy 2015 are as follows:

- It proposes a target of raising public health expenditure to 2.5% of the GDP in five year.
- It also suggests making health a fundamental right; a national health Rights act would be enacted.
- The government also plans to rely on general taxation for financing healthcare expenditure.

-
- Plans are also about for creation of a health less, similar to education less, for raising funds.

The draft document highlights the urgent need to improve the performance of the health system with focus on improving maternal mortality rate, controlling infectious disease, tackling the growing burden of non-communicable disease and bringing down medical expenses.

Earlier, National Rural Health Mission (NRHM) was set-up with special focus on 18 states which were backward in health status. The NRHM covered these states through 2.5 lakh villages based on “Accredited Social Health Alternatives (ASHA). These acted as a link between the health centers and the villages. The ASHA workers were trained to advise villagers about sanitation, hygiene, contraception and Immunization. They received performance based compensation for promoting universal immunization. In fact, rural Indians spend nearly 27 percent of their income on health care. The union cabinet with its decision dated 1st may 2013, approved the launch of National Urban Health Mission (NUHM) as a sub-Mission of an overarching. National Health Mission(NHM), which the NRHM being the other sub- mission of the NHM. The NRHM will receive Rs. 15000 crore to put the crumbling public health infrastructure in order these are significant development, but are, Hardly adequate because they touch only the fringes of the problem. Population growth rate is still a Challenge, as it has taken political beating. We know well that medical care is not all about curative measures. Preventive measures in the form of providing safe water, better sanitation, nutritious foods to children and mothers and preventing the onset of preventable disease are also required.

Memory

BhagyaShree Biswal
B.Ed 2nd year

I feel a thing
which gives no pleasure.
If only gives pain
Only who remembers in native.
That is an ugly thing

The person wants not to mind
But it stands very close
By which he falls sorrow in mind
It gives message of life
Which he forced in present and past.
Those activities have passed
The pict wiled in the heart
Every one tries to forges
But it refelect again is soul.
That is our memory
Which still alives for whole.

A land of unity in Diversity ‘India’

Anusaya Behera

B.Ed. 2nd year

We all know less or more about the ‘unity in Diversity’ system in India. People of different religions, different languages, different cultures stay here together in one country. The amezing fact is they all not only just have in one land in peace. They all celebrate all the festivals togather and cooperate each other.

In 1950, 26th of January India got its own constitution after freedom. Dr. V.R. Ambedkar was the head of the team. Here this point had included that, ‘In India people can live with different religions..... But long ago, before 1950 in India’s ancient scripts means in ‘vedas’ and ‘Puranas’ also, this rule to stay togather had written by our ‘Rishis’ (Monks). one saying in Sanskrit –

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।

means that we should treat everyone like a friend. like this another Saying

—

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

which means that the earth is like our home and the all the huma race is like our family.

so not from 26th Jan 1950 before that also, from the beginning India has a broad mind to love and respect everybody, to live with everyone

peacefully beyond the difference. The world would be a better place if we look beyond the differences and live peacefully.

EDUCATE A GIRL EDUCATE A NATION

MESHLAL PANDEY
SHIKSHA SHASTRI 1ST YEAR

We must educate a girl for development of the country. In the early Vedic age, the birth of male child was no doubt eagerly awaited. At the same time female child was never neglected. In later Vedic age mind set of the people changed it is considered that daughters as a social burden. Later in medieval period, the situation became worse.

Now-a-days a female child is less taken care of the Indian family system that a male child. Some parents of the country think it unnecessary and unreasonable to spend for a daughter only a few people have actually realized the importance of educating a girl. The infamous dowry system is a major problem in girl child education. That's why families often think of a girl as a burden and want to save the money for their dowry rather than spending it on her education and other privileges. The reality is if you educate a man you educate a country. We believe goddess Saraswati is the goddess of learning. But it is a sorrowful thing that women were denied from getting education. In rural area people still believe that women must stay in closed houses serve the husband and family and give birth to the children's. Particularly early marriage has been responsible for depriving girls from attending schools. Moreover social economical reasons. Women in India are still not coming in as much in number in the educational institutions. We should think of highly about educating the girl child. Unless our country and the world also can't be developed. The government should work to achieve will be stopping stone towards the rapid development of the country. The government of India decided 2001 as the year of women's empowerment. Child marriage, child labour dowry system and other social evils can be eliminated through girl's education. If the girl child in every

family is educated social reforms cannot only achieved. According to swami Vivekananda, 'Educate your women first and leave them to themselves, then they will tell what reforms are needed.

We should change the freezing mind and follows the great achievements of the great man, Now we look. In India the defence ministry in the hand of a woman. So we must salute the second mentality of the people and effort of the government for making different of the policies of programmes for the benefits of the women. We notice all the world class famous personalities are women so girls should not be neglected by the society for a developed and prosperous country.

TEACHER-STUDENT RELATIONSHIP A CURTAIN-RAISER

SNEHAMAYEE SWAIN
(B.Ed. 1st year)

Without proper education, student's are just like a bag lady, a homeless woman who carries all her possessions in her shopping bags. It is said that charity begins at home and so does education. A teacher is just like a centre to be near to nearer and to be dear to dearer for the all-round development of the student's character. He acts like an alchemist through which a piece of glass turns into diamond. But centrifugal day by day, they try to maintain an arm's length from their concerned teacher's. they intend to be aloof from their teachers teaching in the class room, as a result of which they go astray and get lost without guidance. Thus, a teacher acts like a centre of gravity and plays a vital role in the formation of students character and career, indeed, a teacher, for them, is a moral force to reckon with.

Every society is essentially patriarchal. But there is a paradigm shift today with our society becoming increasingly matriarchal as women are given proper education with utmost care and affection.

In this context a teacher's role is vital. He is a friend, guide, philosopher, director, mentor, caretaker, proctor, critic and trusted moral adviser for his student. Without proper guidance a student cannot improve in his life. Thus, to clarify this point, the relationship between a student

and teacher is just like a 'Bhakta' and 'Bhaghaban'. Without a teacher, a student cannot develop his permanent elements of life. All the doubts are cleared by the proper guidance of the teacher.

The relationship between 'guru' and 'shishya' is that of two parallel lines which never meet. That means two lines start pursuing and searching for an infinite knowledge of the almighty God, which creates a sense of philosophical and technological aims and goals of human life. Education is never ending process as we learn it till death. It changes from time to time and it is what makes us from.

WHO IS YOUR LIFE PARTNER?

JAIKISHAN
(B.Ed. 1st year)

A. Mom B. Dad C. Wife D. Son
E. Husband F. Daughter G. Friends. ?

Not at all. Your real life partner is your Body. Once your body stops responding no one is with you. You and your body stay together from birth till death what you do to your body is your responsibility and that will come back to you. The more you care for your body, the more your body will care you. What you eat, what you do for being fit, how you deal with stress, how much rest you give to it. Will decide how your body gonna respond.

Remember your body is the only permanent address where you live. Your body is your asset/liability, which no one else can share. Your body is your responsibility. Because, you are the real life partner. Be fit forever, take care of yourself, money comes & goes, relatives and friends are not permanent. Remember, no one help your body other than you. You must do

Pranayama -for lungs; **Meditation** -for mind;
Yoga-asanas -for body; **Walking** -for Heart;
Good food -for intestines; **Good thoughts** –for soul;
Good karma -for World.

Right to Education

SOUROPKUMAR PATTANAYAK

The Right of children to free and compulsory Education Act, 2009 came into effect on 1st April 2010, the coming into effect of the right to education (RTE) Marks a historic moment for all the children of India. The Right of the children to free and compulsory Education had been recognized in 2002 by passing the 86th constitutional Amendment. The 86th Constitutional Amendment added a new article 21(A) making education free and compulsory to all children of the age- group of 6 to 14 year. A new fundamental duty was also added making it mandatory for parents to send their children to school. The act is likely to serve a launching pad to ensure that every child has the right to guaranteed quality elementary education. The best part of the legislation is that the parents and the society have a legal obligation to fulfill this duty.

The act is quite a wide ranging document and all pervasive to ensure quality compulsory and free education to children in the age-group of 6-14 years. The world had set itself the millennium development goal of educating every child by 2015. In India alone there one about 32 million children out of schools and about 220 million children get very poor quality of education. The world cannot achieve the millennium development goal as long as Indian children are out school.

The private Schools have also been roped in as a joint effort, 25% of seats in private schools are required to be reserved for disadvantaged students. The minority schools are allowed to allot 50% of seats to their own communities. Besides, the schools need to maintain pupil-teacher ratio 40:01. The urban-rural divide among students and teachers has to be bridged. So, a provision has been made to impart elementary education in the Child's mother tongue. Few countries in the world have such a huge national agenda to ensure both free and child friendly education to all children. So far our stress has been on quantity rather than on quality. Government has so far directed efforts to increase enrolment numbers without ensuring quality learning. But RTE would not only help bring all

our children into schools but also ensure quality education for all of them, the half of whom continues to be pushed out of the system.

However, the success of the RTE hinges on the crucial question of quality teachers. Educational reforms are meaningless unless teachers are geared up to implement them, as to educate a child we need good teachers. The RTE would yield results only if we have dedicated and qualified teachers. The right to education act, indeed, poses a serious challenge to all of us.

ENVIRONMENT IS OUR LIFE

INDRAJIT SAHOO

Today about 7.5 million of people are live in the world. All are live in different places like urban area, rural area and hill area etc. maximum people are not know about our environment. And in our environment many types of animals, birds and these are found. And also many types micro-organism are there which are found in different medium such as soil air and water. The main components of our environment are soil air and water. Everyone cannot live without these component. Three components are almost valuable for all living animals, birds and minerals organisms etc. but day today our environment became polluted. We all are the main cause of this pollution. Many types of waste materials are occurs here and there by us. when waste materials are mixed in these three components then they became polluted, and we say that when waste materials are mixed with soil called “soil pollution” such as in water is called “water pollution”. And in air we say air pollution. So pollution is various types. The pollution may be either natural or artificial.

Air is a mixture of all types of gases in which many types waste particles and water drops mixed and became polluted. The air is basically a mixture of nitrogen (N_2) , oxygen (O_2) and carbon-di-oxide (CO_2) in definite ratio and various types of harmful gases mimed from different areas by the industries, pollen grains, vehicles etc. the gases are such as SO_2 (Sulphur Di oxide), Nitrogen-di-oxide (NO_2), carbon monoxide (CO), Chloro fluoro carbon (CFC) etc. by which we affected by different disease.

The excess amount of 'CO' are present in air due to burning of fuel in vehicles. This poisonous gas when mix with our blood it makes a compound called carbonoxide. Which became the cause of irritation, headache and heart-attack and many more respiration disease which we can go to die. And due to the increase of harmful gases in air it damages the ozone layer which protect us from UV Rays by this we must affected by skin cancer in few days. And we know about Bhopal gas tragedy took place in December, 1984 by which nearly 3000/peoples are dead and thousands of people are injured due to the leakage of (MIC) methyl-isocyanate harmful gas.

In water different types of waste materials likes sewage, garbage and some waste particles are mixed from industries. Which are very dangerous for aquatic animals.

And the soil is polluted by the mixture of solid wastes like ashes, residue of fruits and vegetables, rubber, plastics, old clothes, paper, bricks, stone etc. which are use by us by which the soil became less fertile. And the mosquitoes and flies are increased. And we affected by different diseases like dengue, T.B.(Tuberculosis), Mp(Malaria parasites, brain tumor, H.P etc. which is by soil and water pollution. So if we start/create a new life then take action of prevention from pollution because pollution prevention is any small or large action that reduces the amount of pollutants, which are released by us and environment so that "better environment is better life".

THE VALUE OF DISCIPLINE IN LIFE

ASHALATA RANA

(B.Ed. 1st year)

Nature abhors Indiscipline just look at the sun, that rises in the east and sets down in the west in a particular time. Similarly the planets in the solar system are rotating around the sun in a particular orbit. Trees grow naturally towards the sky. These are the examples in nature that shows how nature does follow the discipline.

We know that without discipline the human civilization cannot exist. We have to understand the value of discipline that makes a common person

uncommon, ordinary an extra ordinary and makes an unknown towel known. All the famous personalities of the world in their personal life are highly disciplined. Discipline does not mean to stop talking and silently. We should do all the work with discipline.

In fact, one should understand this discipline in the manner of orderliness. Sincerity, punctuality, doing the work with complete dedication. A person who values discipline in the life can grow like a full blooming flower.

The very word ‘discipline’ consists of ten letters. Each letter refers to as such-

D- Devotion

I-Impression

S-Spirituality

C-Character

I-Inspiration

P-Punctuality

L-Law binding

I-Integrity

N-Naturality

E-energy

Hence, “Be Discipline and be good

EDUCATION

DEBASMITA SAHOO

SIKHY SHASTRI 1st year

Education is a process which is ever changing not static. It changes with the change of time adjusting itself to the tendencies and urges of life. Value of life changes with the changes of times and age. Education which aims at inculcating the value of the generation changes its methods and course.

Importance of education:-

Education is so much important for success in life. It is important for the personal, social and economic development of the nation. It is

important to live with happiness and prosperity. It enables students to do the analysis while making the life decisions. It is the only one thing that can remove corruption, unemployment and environmental condition.

According to Nelson Mandela, education is the most powerful weapon which you can use to change the world.

Aims of Education During Vedic Period:-

- The aim of Vedic education was to realize the supreme and achieve supreme consciousness.
- Preservation and spread of ancient culture was one of the aim of ancient educational system.
- Formation of good and moral character was also another aim of Vedic education.

Hierarchical structure of education is followed by the education system in almost all the countries over the globe through which children are educated with similar set of knowledge depending on their age group following are the major levels the compose the education system hierarchy.

Primary Education:-

Primary education is the first set of academic learning that a child receives in the initial years of his/her age. This education is quite important as it is the initial step of a child in the education.

Middle School Education:-

This is the second level of education system hierarchy which accommodated right after the primary education. The education delivered at this stage is considered as a part of secondary education. Child receives the elementary education related to different subjects.

Secondary Education:-

It is the normal education with which a candidate is introduced after he completed 8-9 year of school education at this stage, child is taught about the particular subject in detail.

College Education:-

At this stage a student is introduced to the professional education. He/She is taught the detailed technicalities of the particular profession and is made to learn the skills in his or her professional career.

The System of Modern Education:-

Our education is liberal not technical or vocational. Man is a complex being with blood, brain and spirit and requires fulfillment. Literature, Philosophy and history are much needed to make us complete man. In spite of the above the study of science is very necessary. The study of arts leads to want disease and poverty while science leads to a material life.

The educated in India are poor and unemployed because our system of education is defective. Its very foundation is defective. It should be completely overhauled it should be scientific, technical and vocational.

Education is definitely important in one's life. It leads us to the right path and gives us a chance to have a wonderful life. We should always remember that getting a good education is imperative in today's society as it is a foundation of our successful future.

Value of Time

शुभश्री साहू, शिक्षा.शा.-1

To know the Value of year

ASK the boy who has failed in the examination.

To know the value of months,

ASK the mother who has delivered a Premature baby.

To know the Value of day.

ASK a daily wage labourer.

To know the Value of an hour,

ASK the Persons, who wait to meet each other.

To know the Value of a minute.

ASK the Person, Who has missed the train.

To know the Value of a Second,

ASK a Person, who has escaped a major accident.

To know the Value of a millisecond,

ASK a person, who has missed a gold in Olympics.

To know the Value of time

ASK those tsunami victims who could have been Saved

But owing to dearth of time they Couldn't.

ज्ञान

केशव शर्मा

शिक्षाशास्त्री- प्रथम वर्ष

नैतिक गुणों का शिक्षा में, न नाम न निशान है,
डिग्री संचय मात्र ही, हर छात्र का अरमान है।
मैकाले की जिस पद्धति को, संज्ञा दी गई 'ज्ञान' की,
नहीं ज्ञान वह सुप्त सिंहो, राष्ट्रहत्या का सामान है॥

वस्तुतः है नाश देश का जो लग रहा निर्माण है,
अधोपतन है राष्ट्र का जिसे, हमने कहा उड़ान है।
कुसंस्कारों की आहुति से नष्ट करते स्वत्व को,
उस पर भी देखो गर्व से हम, कहते यही तो ज्ञान है॥

महापुरुषों के-शवों से अब यह धरा लहुलुहान है,
करुण रूदन में डूबी भूमि, शाप देता आसमान है।
विदेश भागता हर युवा धन और शिक्षा के नाम पर
यही पश्चिमी ज्ञान देश को कर रहा वीरान है॥

राष्ट्र गरिमा की जगह, धनधान्य का अभिमान है।
लोभ-लालच, स्वार्थपरता और घृणायुक्त इंसान है।
दुगुणों की खान विनयहीन हुई सारी प्रजा
संस्कृति लील गया पश्चिमी-शिक्षा रूपी शैतान है।

अन्तर्युद्ध में सारथी है केशव, गुरु चाणक्य से महान है,
'विवेकानन्द' राष्ट्रभक्ति और अध्यात्म की पहचान है।
उदित होता ज्ञानरूपी सूर्य भी जब पूर्व से,
पश्चिम से आशा कर रहा, तू सत्य ही नादान है॥

हो खुशबू जिसमें संस्कृति की, प्रत्येक जीव समान है,
आस्था गुरु के उपदेश में माँ-बाप का सम्मान है।
कर्म हों निष्काम भाव से, लक्ष्य केवल मोक्ष हो,
वेदों-पुराणों का सारभूत, यही वास्तविक 'ज्ञान' है॥

संस्कृतमेव अस्माक जीवन्म्

कार्तिकेश्वर मिश्र

शिक्षाशास्त्री प्रथमर्ष

संस्कृतिवहुले भारतवर्षे जायमानाः सर्वे जनाः स्वाभावतः संस्कृतभाषाश्रिता भवन्तीति परिहृष्यते। इदानीन्तने विज्ञानाधारितायुगे विषयेऽस्मिन् व्यतिक्रमः परिलक्ष्यते। एवं सत्यपि भारतवर्षे केचन मम्मज्ञाः जनाः ये कदाचिदपि संस्कृतात् संस्कृतेश्च विच्युत न भवन्ति। अस्मिन् सन्दर्भे अस्माकं संस्कृतभाषायां रुचिः भवेयुः। फलतः अनुभूतमेतद् यत् संस्कृतमेव अस्माकं जीवनम् इति विषये कतिपयानां शिक्षणीयानां वाक्यानां सम्मेलनमत्र प्रस्तौमि।

भारतीयसंस्कृतिः संस्कृतभाषाया लिपिवद्धा वर्तते। अतः संस्कृतज्ञानं विना भारतीयसंस्कृतिः नावगम्यते। भाषेयम् अति पवित्रा, सरला श्रुततिमधुरा च। अस्याः भाषायाः उच्चारणे मनः पवित्रता प्राप्नोति। अतः सकल देवालयेषु इयं भाषा प्रचलते। इयं भाषा देवभाषा इति कथ्यते। अर्थात् देवानां भाषा। परन्तु अन्यार्थे वक्तुं शक्नुमः यत् यः संस्कृतभाषा वदति सः देवरूपः इति।

एकदा जवाहरलाल नेहरू महोदयेन उक्तं यत्- “भारतस्य पृथिवीं प्रति महत्दानं संस्कृतभाषा एव। संस्कृतभाषायां बहूनि आदर्शवाक्यानि विद्यन्ते। येषां अनुकरणेन मानवीय जीवनं सुसंस्कृतं भवति।

संस्कृतभाषायाः महत्त्वं न केवलं भारतवर्षे अपितु विदेशे अपि सम्यगनुवर्तते। इदानीम् इंग्लण्डेदेशे तथा अन्येषु बहुषु पाश्चात्यदेशेषु संस्कृत अनिवार्यरूपेण विद्यालयतः आरभ्य विश्वविद्यालय यावत् पाठ्यते। संस्कृतज्ञानं विना नैतिक ज्ञानं न सम्भवेत्। भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा।

यावत् भारतवर्षं स्यात्

यावत् विन्ध्या हिमाचलौ।

यावत् गङ्गा च गोदा च

तावदेव हि संस्कृतम्॥

संस्कृते संस्कृतिज्ञेया संस्कृते सकलः कलाः

संस्कृते संकल ज्ञानं संस्कृते किन्न विद्यते।

संस्कृतं संस्कृतेर्मूल ज्ञान-विज्ञानवारिधिः।

वेद तत्त्वार्थं संजष्टं लोकलोककरं भिवम्॥

संस्कृतेन सुसम्पन्नं भारत भारतमुच्यते।

संस्कृतेन विना देशः केवल चेण्डियोच्यते॥

विश्वसिंहासने भारतं प्रतिष्ठापयितुं संस्कृतभाषया तथा तया भाषया लिपिवद्धाः संस्कृते

आवश्यकता नूनम् अनिवार्या। अस्याः भाषयाज्ञानेन सुमहत भारतीय संस्कृतिज्ञानं भवति चेत् भारतवर्षं सर्वेषां देशानां आदर्शभूतः भविष्यति। तथैव वेदः खलु सकलविद्यानां नियमकः। इदानीन्तने समाजे प्रसारित, सकलविद्याः वेदेभ्यः आविष्कृता।

अमेरिकायां स्थित गवेषणाकेन्द्रः अपि यत्र संस्कृतभाषा हि संगणक, तथा वैज्ञानिकभाषा भवति।

अधुना नैतिकज्ञानाभावात् सर्वत्र नरकीय अत्याचारं प्रचलितम्। यदा तु संस्कृति सर्वराढतमासीत् तदा सामाजिकी अवस्था निर्मला इति परिलक्ष्यतेः कालक्रमेण एषा भाषा अवोध्या जाता। इदानीमपि केवलं संस्कृताध्यायेन विना इयमेव भाषा नश्यति। केवलं शास्त्रीयस्वरूप एव विद्यते। अस्याः भाषायाः अभ्युत्थानार्थं सरलसंस्कृतभाषायाः रचनीयाः। येन साधारणजनः अपि अनयासेन इमां भाषावोद्धुं वक्तुं च शक्नुयुः। एतदर्थं प्रयासः विधेयः। इतिधिया संस्कृतमेव अस्माकं जीवनं भवेयुः इति प्रयासं कुर्याम।

शैक्षिकचिन्तकः स्वामी दयानन्दसरस्वती

पद्मावती महनी

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्ष

स्वामिदयानन्दस्य जन्म गुजरातप्रान्तस्य काठियावाड-क्षेत्रस्य टङ्केरानगरे 1824 तमेऽऽब्दे फरवरी मासस्य द्वादशतमे दिनाङ्के भवत्। अस्य पिता कर्षणलालतिवारी माता च। आस्ताम्। मूलनक्षत्रे जन्मकारणात् स्वामिदयानन्दस्य वाल्यावस्थायां मूलशंकर इति अभिधानमासीत्।

स्वामिदयानन्दस्य जीवनदर्शनम्— आर्यसमाजस्य संस्थापकः स्वामिदयानन्दः महान् दार्शनिकः आसीत्। आदिशंकराचार्यः इव स्वामिदयानन्दो वेदस्य प्राचिनकाले विद्यमानं गौरवं पुनः प्रतिष्ठापितवान्। स्वामी दयानन्दः जीवात्मा ब्रह्म चेत्यनयोः गुणयोः पार्थक्यं मनुते स्म। तन्मते ब्रह्म तु सर्वशक्तिमान् वर्तते। ब्रह्म जीवात्मने तत् कर्मणः फलं प्रददाति। जीवात्मा च तस्य कर्मफलस्य उपभोगं करोति। स्वामी दयानन्दः ईश्वरस्य निर्गुणम् इति रूपं स्वीकरोति स्म।

शिक्षायाः अर्थः— स्वामिदयानन्दस्य मते शिक्षा गर्भावस्थायाः प्रारभ्य मृत्युपर्यन्तं प्रचलति। सः शिक्षाम् आन्तरिकशुद्धि इति रूपे स्वीकृतवान्। स्वामिदयानन्दमहोदयः शिक्षायाः स्वरूपसन्दर्भे लिखितवान् यत्—

शिक्षा हि सत्याऽऽचरणस्य योग्यता नाम इति। विद्य चरित्रनिर्माणेऽपि सहायिका भवति।

शिक्षायाः उद्देश्यानि— स्वामिदयानन्दस्य मतानुसारं शिक्षायाः प्रमुखमुद्देश्यं धर्माचरणं वर्तते। यथा—

1. वैदिकसंस्कृतेः पुनरुत्थानम्।
2. राष्ट्रिय विकासः।
3. विश्वबन्धुत्व भावनायाः विकासः।
4. सांस्कृतिक वैयक्तिकतायाः विकासः।

5. विशुद्धचरित्रस्य निर्माणम्।

पाठ्यचर्या: -

1. प्रथमतः बालकेभ्यो बालकाभ्याश्च पाणिनिना विरचितस्य ध्वनितत्वस्य बोधः करणीयः।
2. ध्वनिविज्ञानात् परं छात्रेभ्यः निधण्टुः निरुक्तम् इति ग्रन्थद्वयं शिक्षणीयम्।
3. व्याकरणभ्यासानन्तरं छात्रेभ्यः पिंगलछन्दोग्रन्थः अध्यापनीयः।
4. उपवेदः अपि शिक्षणीयाः।

शिक्षणविधयः- स्वामिदयानन्दस्य शिक्षणविधिः पाश्चात्यपद्धत्याश्रितः भवति। यथा-शब्दार्थविधिः व्युत्पत्तिविधिः अनुवादविधिः व्याख्यानविधिः, प्रवचनविधिः, व्याकरणविधिः, कथोपकथनविधिश्च।

गुरुशिष्ययोः सम्बन्धः- आचार्यविशिष्टगुणसम्पन्नः भवेदिति दयानन्दस्य आशयः। सः शब्दार्थयोः सम्बन्धम् अधिगच्छति, मिथ्याभिमानात् मुक्तः आदरवाञ्छ भवति। न केवलम् अध्यापकः अपितु छात्रोऽपि विशिष्टगुणसम्पन्न-शान्तस्वभाव-गुरुभक्त विचारशील-इत्यादयः भवेत् इति।

निष्कर्षः- भारतस्य ये महान्तो विभूतयः स्वकीयेन स्वतन्त्रचिन्तनेन एतस्य देशस्य शिक्षायाः स्वरूपस्य निर्धारणाय प्रयासं कृतवन्तः। तेषु स्वामिदयानन्दस्य नाम विशिष्टं वर्तते। भारतीयसंस्कृतेः हिन्दुधर्मस्य च प्रबलसमर्थत्वात् सः समकालिकायाः शिक्षापद्धत्याः सूक्ष्मातिसूक्ष्मालोचनां कृतवान्। अत एव शिक्षायाः क्षेत्रे स्वामिदयानन्दस्य योगदानं भारतीयानां हृदि सदैव राराजते।

शिक्षायाः स्वरूपम्

निक्सन प्रधानः

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

अस्मिन् संसारे बहूनि धनानि परमकारुणिकेन परमेश्वरेण मानवकल्याणाय प्रदत्तानि। परन्तु तेषु शिक्षायाः महत्त्वं सर्वतोपरि वर्तते। यतोहि शिक्षया एव मानवः मानवत्वं प्राप्नोति। शिक्षा मातेव मनुष्यं रक्षति पितृवत् सत्कर्मणि नियोजयति, मनोरमा रमणीव सुखपूर्वकं रमयति चित्रं च रचयति। श्रियं संतनोतिः सर्वासु दिक्षु सुकीर्तिं वितनोति, संस्कारेण जनं पुनीते, बुद्धिं प्रमार्ष्टि, विपत्तिम् अवरूढि, पापात् अपाकरोति दुर्गुणं च अपनयति। एवमियं सर्वकाम पूरणात् कल्पलतेव विराजते-

मातेव रक्षति पितेवहिते नियुङ्क्ते
कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदम्।
लक्ष्मी तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिं
किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या॥

शिक्षायाः अर्थः

शिक्ष-विधोपादाने इत्यस्मात् धातोः गुरोश्च हलः 3.1.103 इति पाणिनीय सूत्रेण अ-प्रत्यये सति। अजाद्यतष्टाप् 4.1.4 इति टापि शिक्षाशब्द निष्पद्यते। शिक्षाशब्देन प्रमुखतया विद्याग्रहणमेव

ध्वन्यते। आंग्लभाषायां शिक्षा इति शब्दः Education नाम्नाभिधीयते। Education इति शब्दः लेटिन् भाषायः Education, Educare तथा Educare इति पदत्रयस्याधारेण उत्पन्नः इति शिक्षाशास्त्रिणामभिमतम्। यस्याधारेण स्पष्टमिदं यत्-

शिक्षा आन्तरिकशक्तेः बहिरानयनम् अथवा अन्तस्थशक्तीनां बहिर्निष्क्रमणमित्यर्थः।

शिक्षायाः व्यापकार्थः- शिक्षानाम् आजीवनं प्रचल्यमाना काचित् गतिशीला प्रक्रिया? शिक्षा विकासस्य तादृशः क्रमः येन शक्तिः क्रमशः भिन्न-भिन्न प्रकारेण भौतिक-सामाजिक-आध्यात्मिक वातावरणानुकूला भवितुम् आत्मानं नियोजयति। शिक्षाया व्यापकार्थं ते सर्वे प्रभावाः अन्तर्भवन्ति ये हि व्यक्ति जन्मनः आरभ्य मृत्युपर्यन्तं प्रभावयन्ति।

शिक्षायाः संकुचितार्थः- शिक्षाया संकुचितार्थः विद्यालये प्रदीयमाना शिक्षा इति अवधेयम्। अस्यायमभिप्रायः यत् बालकः निश्चित योजनानुसारं निश्चितसमयानुगुणं, निश्चित पाठ्यक्रमानुसारं निश्चितविधिमाश्रित्य निश्चितोद्देश्यमाधारीकृत्य च शिक्षां प्राप्नोति। अत्र सर्वमपि पूर्वयोजनानुगुणं भवति। अत्र शिक्षा कस्मिन्नपि विषये सीमिता भवति न तु व्यापिका।

भारतीयदृष्ट्या शिक्षायाः परिभाषाः-

1. साविद्या या विमुक्तये। तैत्तिरीयोपनिषद्
2. न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। गीता
3. शिक्षा नाम आत्मसाक्षात्कारः। श्रीशङ्कराचार्यः
4. अविद्याद्यशुभगुणानां परित्यागपूर्वकं विद्यादि शुभगुणानां स्वीकारेण सदानन्दमय जीवनयापनं नाम शिक्षा। स्वामी दयानन्दः
5. मानवान्तर्निहित पूर्णताया अभिव्यक्तिरेव शिक्षा। स्वामी विवेकानन्दः
6. बालके मनुष्ये च शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक-शक्तीनाम् उत्तमोत्तमसर्वांगीण विकास एव शिक्षा। महात्मागान्धीः
7. अस्माकं जीवनस्य सर्वासामपि समस्यानां समाधानार्थं विद्यमानः पथप्रदर्शकः राजपथ एव शिक्षा। रवीन्द्रनाथ टैगोरः
8. मानवान्तर्निहित-मानसिक-आध्यात्मिकशक्तीनां निर्माणमेव शिक्षा वर्तते। श्री अरविन्दः
9. शिक्षा नाम व्यक्तेः समाजस्य च निर्मात्री स्यात्। डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्
येऽपि महापुरुषाः संसारे ख्यातिं प्रापुः ते सर्वे विद्ययैव। विद्वांसस्तु सर्वत्र खलु पूज्यन्ते राजानस्तु स्वदेशे एव। उक्तं च-

विद्वत्त्वं च नृपत्वं च नैवतुल्ये कदाचन।

स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

बुधा एव जगतो दुःखानि दुरीकुर्वन्ति। त एव उपदेशकाः, विचारकाः, मननशीलाः मन्त्रिणो नेतारश्च भवन्ति। अथ अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा, विद्ययाऽमृतमश्नुते ईष.11 इति खलु वेदघोषः। सा विद्या एव प्रकृष्टा या विद्या मुक्तिं प्रददाति। अत एव कपिलमुनिना उक्तम्-

अज्ञानान्धतमः प्रणोदप्रवणा लोकोपकृत्यैकदक्

पाषण्डादिनिवारणैकमितदा मोदावहा मानिनाम्।

सद्वृत्तेन विवर्धिताखिलगुणा या शस्यते ज्ञानिषु
या देहात्मनोविकास रूचिरा शिक्षास्तु सा श्रेयसे ॥

संस्कृत में संगीत शिक्षा

देबस्मिता मिस्त्री
शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्ष

“नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिना हृदयं न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद”

ज्ञान का मुख्य श्रोत वेद माना जाता है। वेद अनादि हैं, संगीत का सम्बन्ध वेदों से है, अतएव संगीत भी अनादि है, इसका ना आदि है, न अन्त, इसलिए निश्चित रूप से यह कहना कठिन है कि संगीत का प्रारम्भ कब से हुआ, परन्तु भारतीय धर्म परम्परानुसार जिस प्रकार वेदों के रचयिता ब्रह्माजी माने गये हैं उसी प्रकार संगीत के अवतारक के रूप में दो आदि देव भगवान् शंकर और सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी माने गये हैं। संगीत ईश्वरीय वाणी है। अतः यह स्वयं ब्रह्मरूप ही है। शास्त्रों से ज्ञात होता है कि ब्रह्मा एक, अखंड एवं अद्वैत होते हुये भी परब्रह्म और शब्दब्रह्म-इन दो रूपों में कल्पित होता है। शब्द-ब्रह्म के भलीभाँति जान जाने से परब्रह्म की प्राप्ति होती है।

संगीतताललयवाद्यवशं गतादि।

मौलिस्थ कुम्भपरिक्षणधीनटीव ॥

संगीत की जब सम्यक् गीतम् के अनुसार व्युत्पत्ति करते हैं तो इसमें गीत, वाद्य तथा नृत्य का अभिन्न सहचार्य सा प्रतीत होता है। नाट्यशास्त्र के अनुसार गीत, नाटक के प्रमुख अंगों में से अन्यतम है, तथा वादन और नृत्य इसके अनुगामी हैं, कालिदास के मेघदूत में संगीत के उपादानों में गीत, वाद्य तथा नृत्य तीनों की आवश्यकता निर्देश है, कौटिल्य के अर्थशास्त्र में गीत, वाद्य तथा नृत्य का उल्लेख सहचरी कलाओं के रूप में किया गया है।

आधुनिकभारते संस्कृतभाषायाः उपहृतयः

योगेश पाण्डेय

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

वेदशास्त्रादीनां संरक्षणम्- आधुनिकसमये वयं पश्यामः भारतदेशस्य युवानः वैज्ञानिकीं भाषां प्रति आकर्षिताः सन्ति आंग्लभाषामेव पठन्ति तथा च वेदशास्त्रादीनां च संरक्षणार्थं संस्कृतस्य बहु-आवश्यकता वर्तते। अतः इयं एका बहु दीर्घा उपहृतिः वर्तते।

जनेषु गत्वा संस्कृतं प्रति ध्यानाकर्षणम्- वेदादीनां ज्ञानं प्रसारणम् अस्य महत्त्वं च ज्ञापनीयं तदा इयमुपहृतिः संलक्ष्यते अभिभूयेत वा।

जनानामवधारणा- अस्मिन् समये वयं कुत्रापि गच्छामः चेत् तत्रस्थ जनाः पश्यन्ति अयं तु धौतवस्त्रधारी पण्डितः अस्ति। अस्य भाषासंस्कृतं इत्यादि चिन्तनं कुर्वन्ति। अतः जनानां यत्

चिन्तनमस्ति तस्य निराकरणस्य आवश्यकता वर्तते एवञ्च स्वज्ञानेन मार्जनं करणीयम्।

विशिष्टोपहुतिः- पूर्वस्मिन् काले भारतस्य ये ऋषयः आसन् ते एव महान्तः संस्कृतज्ञाः तथा च महान्तः वैज्ञानिकाश्च भवन्ति स्म। आधुनिकसमये वयं पश्यामः यत् यः संस्कृतं पठति अथवा वेदशास्त्राणं ज्ञानं प्राप्नोति। सः वैज्ञानिकः न मन्यते जनैः। तथा च यः वैज्ञानिकः भवति सः कदापि संस्कृतं न पठति न च सः संस्कृतभाषां प्रति चिन्तयति। आधुनिक वैज्ञानिकेषु दृष्यते। अतः इयं दीर्घा महती च उपहुतिः। संस्कृतानुरागिणां समक्षे अस्ति। अस्याः निराकरणमपि शीघ्रं करणीयम् अस्माभिः।

उपसंहारः- संस्कृतभाषायाः प्रचारं-प्रसारं करणीयं तथा च बालकं जन्मतः प्रथमकक्षातः संस्कृतभाषायाः ज्ञानं जनैः जनैः कारणीयं येन उचित् अवस्थायां सः बालकः अन्यान् अपि शिक्षयेत्।

हो रहा अब उनका सम्मान

सुकेशी प्रियदर्शिनी सामल
शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्ष

काल तक जो ही नादान
बना रही आज खुद की पहचान
मिला नहीं उन्हें कभी सम्मान
होता रहा सदा घोर अपमान
शिक्षा से बने रही अब महान
समाज में बढ़ रहा उनका सम्मान
लड़की से आगे हैं नारी
शिक्षा से हर क्षेत्र में बाजीमारी
अपनी भूमिका निभाती सारी
इनसे ही होती दुनिया प्यारी
शिक्षा से आई नई जान
बना रही आज खुद की पहचान
शिक्षा पर अगर न होता विश्वास
न हो पाती जागरूक न हो पाता विकास
न हो पाती दहलीज के पार
मिल नहीं पाता सही आविष्कार
न कर पाती देश का उद्धार
होती रहती शोषण का शिकार
कर न पायेंगे रूढ़िवादी उनका शिकार
समाज में बढ़ रहा अब उनका सम्मान

खत्म होगी पुरुषों पर निर्भरता
आरम्भ होगी शिक्षा से निर्धनता
क्र रही अब कुरीतियों का दमन
मिल रहा उड़ने को खुला गगन
खेलों में भी रहा चमन
संभाल लेगी एक दिन देश की कमान
कल तक जो थी नादान
हो रहा अब उनका सम्मान

अधिगमस्य स्वरूपम्

शुचिस्मिता बेहेरा

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

व्यवहारे उत्तरोत्तरसामंजस्य प्रक्रिया एव अधिगमः”

शिशुः जन्मसमयादारभ्य निःसहायो भवति। स्वावश्यकतानां पूर्तये सः सर्वदा मातरम् आश्रयति। गच्छता कालेन ज्ञानेन्द्रियेषु चेतनाशक्तिः प्रबला भूत्वा विविधान् विभिन्नानुभवान् अर्जयित्वा स्वव्यवहारे परिवर्तनमानयति। अनुभवैः यः व्यवहारपरिवर्तनम् भवति तदेव अधिगमः कथ्यते। ज्ञानकौशलाभिवृत्तिराचाराणाम् च प्राप्तिः अधिगमः। मानवस्य अधिगमार्थं न कोपि निश्चितः समयः न किञ्चित् सुनिश्चितं स्थानं भवति। सः सर्वदा सर्वत्र यत्किमपि अधिगच्छन् भवति। स्थूलरूपेण अधिगम इत्यस्य अर्थः शिक्षणम्, अध्ययनं, व्यवहारपरिवर्तनम् इत्यादि भवति परन्तु सूक्ष्मरूपेण अधिगमेत्यस्यार्थः व्यवहारेण अनुभवेन च जायमानं यत् शास्वतिकं परिवर्तनं तदेव अधिगमः”। आंग्लभाषायाम् अधिगमस्य- LEARNING इत्युच्यते। इमाम् अधिगमप्रक्रियाम् अनुभवः परिपक्वता च अत्यन्तं प्रभावयतः। यथा- लघुबालः दीपं दृष्ट्वा हस्तेन तं ग्रहीतुं प्रयतते, यदा तस्य हस्तः ज्वलति तथा पीडामनुभवति। अनेन अनुभवेन सः भविष्ये न कदापि दीपं स्पृशति। वर्षद्वयात्मकः द्विचक्रिकां चालयितुं न शक्नोति यतः अस्य कृते अपेक्षितशारीरिकविकासः नाभूत्। अर्थात् बालकः शारीरिकपरिपक्वतां न प्राप्तवान्। परन्तु कालान्तरे दशमे अथवा द्वादशवर्षात्मके वयसि बालकः प्रशिक्षणेन द्विचक्रिकाचालने निपुणः भवति। इत्थं दैनन्दिनजीवने वयं बहून् विषयानधिगच्छामः। अधिगमस्य परिभाषा - गेट्समहोदयानुसारेण- अनुभवेन प्रशिक्षणेन च जायमानं व्यवहारपरिवर्तनम् अधिगमः इत्युच्यते”।

स्मिथ एच वि महोदयः- अनुभवेन पूर्वव्यवहारस्य दृढीकरणं दुर्बलीकरणं वा, नूतनव्यवहारस्य प्राप्तिः अधिगमः”

"Learning is a process of development". Woodworth

शिक्षणप्रक्रियायाम् अधिगमस्य महत्त्वं विज्ञाय मनोवैज्ञानिकाः एतस्य बहुविधां परिभाषां प्रदत्तवन्तः। प्रायशः सर्वे एव मनोवैज्ञानिका मनोविज्ञानस्य अन्यतमस्य अधिगमनामधेयस्य सम्प्रत्ययस्थ

परिभाषां कृतन्तः एतासां परिभाषाणाम् आधारेण अधिगमस्य प्रकृति विषयकाः केचन निष्कर्षाः निश्चेतुं शक्नुवन्ति।

1. अधिगमाः एका प्रक्रिया वर्तते यया व्यवहारे परिवर्तनं परिमार्जनं वा जायते।
2. अधिगमप्रक्रिया जन्मतः मृत्युपर्यन्तं सततं प्रचलति। यथा- शिक्षा
3. अधिगमः सार्वभौमिकः भवति।

अधिगमस्य नियमाः -

1. तत्परतायाः नियमः 2. अभ्यासस्य नियमः 3. प्रभावस्य नियमः।
1. **तत्परतायाः नियमः** - अस्य नियमस्यानुसारं यदा काऽपि व्यक्तिः किमपि कार्यं कर्तुं प्रथमतः सज्जः भवति तदा तत् कार्यं सानन्दं एवञ्च-शीघ्रमेव अधिगच्छति। अस्य विपरीतं यदा व्यक्तिः कार्यकरणार्थं सुसज्जितः न भवति अथवा शिक्षणे इच्छा न भवति तर्हि स खिन्नः भवति अथवा क्रुद्धः एवञ्च तस्य अधिगमगतिः अपि मन्दा भवति।
2. **अभ्यासस्य नियमः** - अभ्यासस्य नियमानुसारं मनुष्यः यां क्रियां बारम्बारं करोति तां क्रियां शीघ्रमेव अधिगच्छति। एवञ्च सः यां क्रियां त्यजति अथवा बहुकालपर्यन्तं न करोति तर्हि सः तां क्रियां विस्मरति यथा- द्विचक्रिका, टङ्कणनम्।
3. **प्रभावस्य नियमः** - अस्य नियमानुसारं यथा क्रियया मनुष्यस्य जीवने सुष्ठु प्रभावः भवति अथवा सुखशान्तिं प्राप्नोति, तां क्रियामधिगन्तुं सः प्रययते। एवञ्च यया क्रियया तस्योपरि कुप्रभावः भवति तर्हि सः तां त्यजति।
वेदेषु जीवनस्य शाश्वतमंत्रः अस्ति - चरैवेति चरैवेति - चलते रहो, चलते रहो।
चलते रहना गति है जीवन की, सीखते रहना भी गति है जीवन की।
एक दूरी को कम करता है, दूसरा बुद्धि, सिद्धि के भण्डार को भरता है,
चलना तथा चलाना, सीखना तथा सिखाना काल के अंश है।
इन अंशों का भरपूर उपयोग ही शिक्षा है।
सीखना जीवन की सर्वोत्तम कला है। जो आप नहीं जानते उसे जानना अधिगम है,
उसे जीवन एवं व्यवहार में लाना ही उपलब्धि है।

हमारे जीवन में सोलह संस्कार

अमित कुमार सिंह

शिक्षाशास्त्र प्रथम वर्ष

संस्कार शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत व्याकरण के अनुसार सम् उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से घञ् प्रत्यये होकर संस्कार शब्द की व्युत्पत्ति हुई है। (सम् + कृञ् + घञ् - संस्कारः)।

संस्कार शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया जाता है, मीमांसा दर्शन में इसका अर्थ है यज्ञांगभूत पुरोडाशदि की विधिवद् शुद्धि जो कि प्रोक्षणाविक्षणादि से सम्पन्न होती है। प्रोक्षणादिजन्यसंस्कारो यज्ञांगपुरोडाशादिति द्रव्यधर्मः (वाचस्पत्यम्, बृ.अ.4 पृष्ठ) अद्वैतवेदान्ती

जीव पर शारीरिक क्रियाओं के मिथ्या आरोप को संस्कार मानते हैं। “स्नानाचमनादिजन्याः संस्कारा देहे उत्पद्यमानानि तदभिधानानि जीवे कल्प्यन्ते। (वाचस्पत्यम्) नैयायिक भावों की अभिव्यक्ति के लिए आत्मव्यंजक शक्ति को संस्कार मानते हैं, जिनका परिगणन वैशेषिकदर्शन में चौबीस गुणों के अन्तर्गत किया गया है।

मानव का सम्पूर्ण जीवन संस्कारों का क्षेत्र है। व्यक्तित्व का विकास और परिष्कार संस्कार के द्वारा होता है। इन्हीं संस्कारों से भारतीय संस्कृति का भी जन्म हुआ है, अतएव भारतीय संस्कृति भी उतनी ही पुरानी और साश्वत है जितना कि मनुष्य का जीवन और मानवता है। धर्म शास्त्रों का यह कथन है कि मानव जन्म से एक साधारण मानव ही है और हम उसे अपूर्ण भी मान सकते हैं, मानव में संस्कार के द्वारा ही उसमें द्विजत्व और मनुष्यत्व आता है।

भारतीय संस्कृति में मनुष्य का जन्म से लेकर मरण पर्यन्त तक संस्कार किये जाते हैं, इन संस्कारों से मनुष्य अपने भावी अगले जन्म को सुधार सकता है। यदि मनुष्य सही समय में इन संस्कारों को करते हैं तो जीवन सुख शान्तिमय व्यतीत होता है। इन संस्कारों का प्रभाव हमारे जीवन में चिरकाल तक रहता है। हमारे धर्म ग्रन्थों में सोलह संस्कारों का निर्देशन किया गया है। वैसे याज्ञवल्क्यस्मृति में सोलह संस्कारों का उल्लेख मिलता है। आधुनिकयुग में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने संस्कारविधि ग्रन्थारम्भ के श्लोक संख्या-2 में सोलह संस्कारों का उल्लेख किया है।

गर्भाद्या मृत्युपर्यन्ताः संस्काराः षोडशैव हि।

वक्ष्यन्ते तं नस्कृत्यानन्तविधं परमेश्वरम्॥

याज्ञवल्क्यस्मृति के अनुसार सोलह संस्कारः-

1. गर्भाधान संस्कार।
2. पुसंवन् संस्कार।
3. सीमन्तोन्नयन संस्कार।
4. जातकर्म संस्कार।
5. नामकरण संस्कार।
6. निष्क्रमण संस्कार।
7. अन्नप्राशन संस्कार।
8. चूड़ाकरण या मुण्डन संस्कार।
9. कर्णवेध संस्कार।
10. अक्षराम्भ संस्कार।
11. उपनयन संस्कार।
12. वेदारम्भ संस्कार।
13. केशान्त संस्कार।
14. समावर्तन संस्कार।
15. विवाह संस्कार।

16. अन्त्येष्टि संस्कार।

इन सभी संस्कारों को नैष्ठिक ब्राह्मणों से लग्न, तिथि, मुहूर्त: नक्षत्रादि दिखा कर ही करावें।

शिक्षा

पूर्णमा राय,

शिक्षाशास्त्र प्रथम वर्ष

शिक्षा के द्वारा मानव का सर्वांगीण विकास होता है। शिक्षा मनुष्य को एक नया मार्ग प्रदर्शित करती है। शिक्षा जीवन को आलोकित करती है। और शिक्षा के माध्यम से मनुष्य आगे बढ़ता है। शिक्षा मनुष्य को पूर्ण तरीके से परिवर्तन कर देता है शिक्षा ही मनुष्य को नया भविष्य देती है।

पत्थर ऊपर उछालने से जैसे नीचे गिरता है उसी तरह हम जैसा काम करेंगे उसी तरह उसका फल जरूर पायेंगे। मनुष्य में जब शिक्षा नहीं होगी, तब वह मनुष्य पशु के समान होता है। जब मनुष्य शिक्षित होगा तब ही उस मनुष्य के अच्छे भविष्य का निर्माण हो सकता है।

स्त्रीहीन घर श्मशान के समान होता है। उसी तरह विद्याहीन व्यक्ति के जीवन में घोर अंधेरा रहता है। अर्थात् स्त्रीहीन घर में जैसे अंधेरा रहता है। स्त्री ही घर को आलोकित करती है। स्त्री ही घर के दीप के समान होती है। उसी तरह शिक्षा ही दीप के समान होती है। और वही दीप व्यक्ति का पुरा भविष्य आलोकित कर देता है।

शिक्षा क्या है? इस बारे में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने मतों का स्थापन किया है।

जैसे-

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार - शिक्षा मनुष्य की अन्तः निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।

महात्मा गांधी के अनुसार- शिक्षा से मेरा तात्पर्य उस प्रक्रिया से है, जो बालक और मनुष्य के शरीर, आत्मा और मन का सर्वोत्कृष्ट विकास कर सके।

फ्रावेल के अनुसार- शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी जन्म जात शक्तियों को अभिव्यक्त करता है।

पेष्टेलोजी- के अनुसार- मानव की आंतरिक शक्तियों को स्वाभाविक, सामंजस्यपूर्ण और प्रगतिशील विकास शिक्षा है।

काण्ट के अनुसार- शिक्षा व्यक्ति की उन सब पूर्णताओं का विकास है जिसकी उनमें क्षमता है।

T.P. नन के अनुसार शिक्षा व्यक्ति की वैयक्तिकता का पूर्ण विकास है, जिससे कि अपनी क्षमता के अनुसार मानव जीवन में योगदान कर सकते हैं।

हरबर्ट के अनुसार नैतिक चरित्र का उचित विकास है।

जॉन डी.वी. या ड्यूवी के अनुसार शिक्षा व्यक्ति की उन समस्त आंतरिक शक्तियों का विकास है, जिससे वह अपने वातावरण पर नियंत्रण रख सके, तथा आपनी संभावनाओं को पूर्ण कर सके।

अतः सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि शिक्षा मानव के बीच कुछ सीखने की प्रक्रिया है।

अनिवार्य तथा निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा

नीलम नाईक

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्ष

अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की अवधारणा पश्चिम देशों की है। यह अवधारणा सफल प्रजातांत्रिक शासन-व्यवस्था की देन है। स्वीडेन ने सर्वप्रथम 1842 ई. में अपने यहाँ अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की। इसके बाद 1852 ई. में अमेरिका, 1860 ई. में नार्वे, 1870 ई. में इंग्लैण्ड तथा सन् 1905 में हंगरी, स्विटजरलैंड पुर्तगाल आदि देशों में इस तरह की व्यवस्थाएँ की गई।

भारत में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क बनाने की मांग 1882 ई. में हंटर आयोग के समक्ष उठायी गयी। महात्मा ज्योतिष फुले ने आयोग को स्मार पत्र देकर इस दिशा में प्रभावी कदम उठाने का अनुरोध किया था, दादा भाई नौरोजी ने भी हंटर आयोग के सामने प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क बनाने की मांग रखी। भारत में इस दिशा में प्रथम आंशिक प्रयास सन् 1906 में बंबई सरकार ने किया।

सन् 1893 में बड़ौदा के महाराज सियाजी एवं गायकवाड़ ने अमरेली ताल्लके में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की थी। सन् 1918 में विठ्ठलभाई पटेल ने बंबई म्यूनिसिपल क्षेत्र में इसे लागू कराया। अनेक राज्यों ने इसका अनुसरण किया। सन् 1919 में बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश में सन् 1920 में मध्यप्रदेश व मद्रास में सन् 1926 में असम में सन् 1930 में कश्मीर में तथा 1931 में मैसूर में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने सम्बन्धी अधिनियम पारित किये गये, परन्तु इस अधिनियम पर कारवाई नहीं हो सकी। जब 1937 में प्रान्तीय स्वायत्त शासन की स्थापन हुई।

“इन निम्न लिखित बिन्दुओं के अवलोकन से स्पष्ट होगा कि प्राथमिक शिक्षा की अवहेलना के कारण भारतीय समाज काफी पिछड़ गया था तथा आज भी शिक्षा और साक्षरता के प्रयास संतोषजनक नहीं हैं।

■ वैदिक शिक्षा में शूद्रों और महिलाओं की शिक्षा की घोर उपेक्षा की गई ऋषियों के गुरुकुलो में लड़कियों की शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी।

■ बौद्ध शिक्षा में भी लड़कियों की शिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था नहीं की जा सकी। सामान्य एवं निम्नस्तरीय परिवारों की महिलाओं में शिक्षा का प्रचार लगभग नहीं के बराबर था।

■ मुस्लिम शिक्षा में भी नगरी शिक्षा की पूर्ण उपेक्षा थी। महिलाओं में पर्दा प्रथा का प्रचलन था।

■ 1882 ई. में हंटर आयोग में माना कि प्राथमिक शिक्षा संपूर्ण जनशिक्षा का अनिवार्य अंग है। बालक एवं बालिकाओं के विद्यालयों की सहायता के लिए प्रत्येक प्रकार के जनकोष-स्थानीय नगरपालिका व प्रान्तीय कोषों से समानुपात में धन लिया जाना चाहिए। वस्तुतः हंटर आयोग ने शिक्षा के सार्वजनीकरण का मार्ग प्रशस्त किया। अनिवार्य शिक्षा की महत्ता स्वीकार की

गयी।

■ सन् 1937 में वर्धा में गांधीजी की अध्यक्षता में अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसमें यह प्रस्ताव पारित हुआ कि राष्ट्र में समस्त बच्चों को सात वर्ष की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए।

■ सन् 1947 में स्वतन्त्रता मिलने और 1950 में संविधान लागू होने के साथ ही भारत में शिक्षा को अनिवार्य बनाने का रास्ता प्रष्ट हो गया। संविधान के अनुच्छेद 45 में निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का दायित्व राज्य सरकार को दिया। इसमें 14 वर्ष की आयु के बच्चों को अनिवार्यरूप से निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान था।

■ स्वतन्त्रता के बाद भारत में लोकतांत्रिक शिक्षा प्रणाली को अपनाया गया। लोकतंत्र की सफलता और सुदृढ़ता के लिए सभी नागरिकों को साक्षर-शिक्षित होना पर बल दिया गया।

■ दुर्गाबाई देशमुख समिति 1952-53 ने स्त्रियों की शिक्षा पर विमर्श करते हुए कहा कि सभी लड़कियों को मिडिल स्तर पर शिक्षा निःशुल्क दी जानी चाहिए। मिडिल एवं हाईस्कूल तक जाने के लिए निःशुल्क सुविधा चाहिए।

■ नयी शिक्षा नीति सन् 1986 में कहा गया कि प्रारम्भिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के लिए आवश्यक है। सन् 1990 में जोमटीन थाइलैंड में सबके लिए शिक्षा विषय पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया इसमें सम्पूर्ण विश्व को साक्षर-शिक्षित बनाने का लक्ष्य रखा गया और 21 वीं शताब्दी में सम्पूर्ण विश्व को साक्षर बनाकर ही प्रवेश करेंगे।

निष्कर्ष- इस प्रकार देखते हैं कि शिक्षा को अनिवार्य बनाने के लिए भारत समाज में निरंतर प्रयास चलते रहे हैं। जिस तरह से प्रत्येक नागरिक के लिए भोजन, वस्त्र और आवास अनिवार्य है। उसी तरह उनके लिए शिक्षा भी अनिवार्य है।

संगीत और मनोविज्ञान

पंकज तिवारी

शिक्षाशास्त्र प्रथमवर्ष

गीतं वाद्यं नर्तनं च त्रयं संगीतमुच्यते।।

संगीत आत्मा का सैन्द्र्य है यह मानसिक व्याधि की औषधि है और साथ ही आत्मा के लिए उत्तम भोज्य-पदार्थ भी है। संगीत अपने आप में सृजन प्रक्रिया का द्योतक है। संगीत में प्रदर्शन हो या शिक्षण, सृजनशीलता हमेशा विद्यमान रहती है। मनुष्य जब संगीत के सम्पर्क में आता है और शिक्षा-दीक्षा प्रारंभ करता है, सृजनात्मक प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। शिक्षण के क्रम में चाहे शिक्षक हो या शिक्षार्थी, अथवा प्रदर्शन के क्रम में चाहे कलाकार हो या श्रोता, दोनों के लिये ही यह सृजनशील है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में दोनों ही आनन्दविभोर होते हैं और आनन्द का सृजन होता है। कलाकार और श्रोता तथा शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही इस सृजन की प्रक्रिया में बराबर के भागीदार होते हैं और आपस में सामंजस्य स्थापित करते हैं।

कला की अभिव्यक्ति मानव-जीवन में सृष्टि के प्रादुर्भाव के आरम्भ से ही रही है, अपनी अन्तर्भावनाओं को व्यक्त करने के लिए मनुष्य ने विभिन्न माध्यमों का प्रारम्भ से ही सहारा लेना शुरू किया, अपने इद-गिर्द घटने वाली हर घटनाओं को, चाहे वह सुख प्रदत्त हो या दुःख प्रदत्त, व्यक्त करने में मानव ने प्रकृति का सशक्त सहारा भी सृष्टि के उद्भव काल से ही लेना प्रारम्भ किया है। यह उसकी विकसित हो रही मानसिकता ही थी, कि दुःख के समय में रोना या विषादयुक्त चिल्लाना तथा सुख की घटनाओं में विभिन्न प्रकार की हर्ष युक्त ध्वनि उत्पादित कर अपनी भावनाओं को व्यक्त करता आया है।

स्वर और लय से अविभूत संगीत ने विश्व इतिहास के प्रत्येक काल में अपनी विषिष्टता से मानव सभ्यता एवं संस्कृति को प्रभावित किया है, जीवन के हर क्षेत्र में संगीत की महत्ता प्रारम्भ से ही मानी जाती है, चाहे रंगमहल हो या लड़ाई का मैदान एक विशेष प्रकार का संगीत प्रस्तुत होते ही उस भावनाओं को व्यक्त करने के पीछे कुछ विशिष्ट मानसिकता का आभास होता है। जिस के माध्यम से अलग-अलग प्रकार की भावना व्यक्त होती है। समाज में प्रत्येक कार्य में आज संगीत की महत्ता सभी को ज्ञात है। वैवाहिक कार्य हो या धार्मिक कार्य, शान्ति के लिए कार्य या फिर कोई भी संस्कार संगीत सर्वत्र विद्यमान है।

भारत में गणतान्त्रिक सफलता के लिए शिक्षा की भूमिका

अर्जुन अर्पिता पति

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्ष

दुनिया का सबसे बड़ा गणतान्त्रिक देश है भारत में मनाये जाने वाले राष्ट्रीयपर्व में से एक है गणतन्त्र दिवस जिसको जनवरी 26 के दिन बड़े धूमधाम से जाति, धर्म, वर्ण लिंग निर्विशेष में हर कोई मनाता है। इसीदिन भारत देश स्वायत्त गणराज्य के रूप में घोषित किया गया। भारत के लिए संविधान इसीदिन लागू हुआ था। भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक गणराज्य के रूप में घोषित किया गया। जो संविधान के प्रस्तावना में लिखे हैं।

गणतन्त्र शासन में संपूर्ण देश का भविष्य जनता के उपर न्यस्त रहता है। अतः भारत जैसे विकासशील देश में शिक्षा ही तो एकमात्र साधन है। जो देश को विकसित कर सकता है। वर्तमान युग में गणतन्त्र सर्वश्रेष्ठ शासन है। लेकिन भारत जैसे विकासशील देश में इसके गुण, दोष, दुर्बलता दिन ब दिन बढ़ रही है।

शिक्षा ही एकमात्र साधन है जो गणतन्त्र में लुप्त कमियों को हटा कर भारत को रामराज्य के रूप में पुनः स्थापित कर सकता है। इसीलिए शिक्षा के महत्व को देखते हुए 86 वां संशोधन 2002 के तहत 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा को मौलिक

अधिकार के रूप में मान्यता देने संबंधी प्रावधान किया गया है। इसे अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत संविधान में जोड़ा गया है।

शिक्षा शब्द की उत्पत्ति शिक्ष धातु से हुई है जिसका अर्थ सीखना, ज्ञान ग्रहण करना या विद्या प्राप्त करना है। शिक्ष एक ऐसा साधन है जो मानव को प्राणी जगत के अन्य जीवों से पृथक् करती है। शिक्षा के बिना मानव पशु के समान है। (Without Education men like barbarus)

भारत जैसे विकासशील देश में निरक्षरता, गरीबी की मात्रा बहुत ज्यादा है। साल 2018 का ग्लोबल Global Hunger India) के अनुसार 119 देशों में भारत का स्थान 103 वां है। जब भारत में ज्यादा से ज्यादा लोग अपनी सर्वनिम्न आवश्यकता पूर्ण नहीं कर पा रहे हैं। तब कैसे वे सही नेता को निर्वाचित कर सकते हैं।

अतः शिक्षा ऐसा माध्यम है जो जनता के अन्दर अन्धकार को समाप्त करके ज्ञान का आलोक प्रदान करता है। शिक्षा ही तो है जो जनता को सही और गलत का फर्क समझाती है।

आकास में उड़ने वाले पक्षियों की गतिविधि पता लगाना सम्भव है परन्तु धन का अपहरण करने वाले भ्रष्टाचारियों से पार पाना बड़ा कठिन है। अतः एक सार्थक शिक्षा वही है जो देश से भ्रष्टाचार को खत्म कर सकती है। शिक्षा ही है जो मुक्त समाज का गठन करती है। सहनशीलता और भ्रातृत्वभाव देशप्रेम की वृद्धि करती है। जातीय चरित्र का गठन करता है। जनता के अन्दर नैतिकता, सत्यता, आत्मनिर्भरता, साहस, परिश्रम के लिए प्रेरणा देता है। शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक अर्थात् सर्वांगीण विकास करता है। उत्तम नागरिकों का निर्माण करती है इस से देश के विकास में सहायता होती है। देश में भरपूर प्राकृतिक संपदा का सही उपयोग शिक्षा के माध्यम से होता है। शिक्षा जीवन का अभिन्न अंग है। अतः शिशु को उचित शिक्षा देना चाहिए। क्योंकि जवाहरलालनेहरू जी के मत से-

आज का शिशु परसों का भविष्य है।

(Today's children tomorrow's future)

सही शिक्षा के माध्यम से हम उचित प्रार्थी का निर्वाचन कर सकेंगे। शिक्षित लोगों का निर्माण कर सकेंगे। जीवन में सभी समस्या का समाधान शिक्षा माध्यम से ही हो सकता है। निर्वाचित प्रार्थी के उपर हमारे और देश का भविष्य निर्भर है। जब हम शिक्षा के अभाव में अज्ञानता के कारण सही प्रार्थी का निर्वाचन नहीं कर सकेंगे। तो देश का भविष्य एक धनघोर अन्धेरे में खो जायेगा।

गणतन्त्र में शिक्षा की भूमिका उसी प्रकार है जिस प्रकार मत्स्य के लिए जल। शिक्षित समाज के बिना गणतन्त्र निरर्थक है। शिक्षित लोक से ही तो गणतन्त्र शब्द सार्थक है।

आचार्य चाणक्य की शिक्षा-नीति

श्रद्धा तिवारी

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

इतनी सदियां गुजरने के बाद आज भी जो हमारे बीच अमर हैं और इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिपिबद्ध हैं, जो अनुपस्थित होकर भी सभी शिक्षकों में उपस्थित हैं ऐसे वे आचार्य चाणक्य को मेरा अशेष प्रणाम है। ऐसी महान विभूति जिन्होंने अपनी विद्वत्ता, बुद्धिमत्ता और क्षमता के बल पर भारतीय इतिहास को बदल दिया, वे कुशल राजनीति, चतुर कूटनीति, सफल अर्थशास्त्र और शिक्षा को नए आयाम देने के लिए विश्वविख्यात हैं।

उनके द्वारा दी गई शिक्षा 2400 वर्ष प्राचीन है परन्तु आज भी हमारे लिए उतनी ही नई और प्रासंगिक है जितनी उस समय थी। उन्होंने शिक्षा की संकुचित सोच को बदलकर नए आयाम प्रस्तुत किए हैं, जिससे शिक्षा की परिभाषा बदल गई है। उन्होंने गुरु और शिष्य की विशेषता को बतलाकर लक्ष्यप्राप्ति पर बल दिया।

आचार्य चाणक्य ज्ञान की नई परिभाषा देते हुए कहते हैं कि-

श्रुत्वा धर्मं विजानाति श्रुत्वा त्यजति दुर्मतिम्।

श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति श्रुत्वा मोक्षमाप्नुयात्॥

अर्थात् मनुष्य धर्मशास्त्रों को सुनकर उसका अध्ययन करके ज्ञान का संचार होने पर उसकी कलुषता समाप्त हो जाती है और फिर होती है सद्गुणों के बीजों का रोपण।

शिक्षा आजीवन प्रवाहित एक प्रक्रिया है इस मत का खण्डन कर उन्होंने कहा है कि यह जन्मजन्मान्तरव्यापी प्रक्रिया है, शिक्षा के माध्यम से हमारा केवल एक ही जन्म नहीं अपितु आने वाले हमारे सभी जन्म सुधर जाते हैं अर्थात् कल्मषता विहीन, सुसंस्कृत और व्यवस्थित हो जाते हैं। आचार्य चाणक्य शिक्षा का महत्व बताते हैं-

उन्होंने शिक्षा को कामधेनु माना है। वे कहते हैं कि जिस प्रकार कामधेनु हमारी सभी कामनाओं की पूर्ति करने वाली होती है उसी प्रकार शिक्षा भी सर्वफलप्रदायिनी होती है।

श्रियः प्रदुग्धे विपदो रूणद्धि यशांसि सूते मलिनं प्रमार्ति।

संस्कारशौचेन परं पुनेते शुद्ध हि बुद्धिः किल कामधेनुः॥

वे शिक्षा को ही परममित्र मानते हुए कहते हैं कि कठिन समय में माता-पिता-भाई-बन्धु कोई भी साथ नहीं होता साथ होता है तो केवल शिक्षक द्वारा दिया गया वह ज्ञान। वह ज्ञान ही हमें सभी कठिनाइयों से उबारता है। अतः शिक्षा ही परममित्र है।

आगे वे शिक्षक के गुण बताते हुए कहते हैं कि-

शिक्षक पर्दे के पीछे रहें और छात्र पर्दे के आगे। अर्थात् शिक्षक छात्र को ऐसे प्रशिक्षित करें कि उनकी अनुपस्थिति में भी छात्र अपने जीवन में सही निर्णय ले सकें। आचार्य चाणक्य व्यवहारिक शिक्षा के मानने वाले हैं। वे कहते हैं कि शिक्षक को केवल पाठ्यपुस्तकीय ज्ञान देने

तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए अपितु छात्र को वे सभी प्रकार की शिक्षाएँ देनी चाहिए जो दैनिक जीवन में व्यवहृत की जाती हैं। जैसे- विज्ञान, दर्शन, प्राथमिक चिकित्सा, व्याकरण, गणित, अर्थशास्त्र आदि।

शिक्षक ऐसा हो जो छात्र को लक्ष्य की ओर प्रेरित कर सके। अर्थात् छात्र एक कमल की तरह हैं जो उस सूर्य रूपी शिक्षक के उदय होने से खिलता है।

उनके मत से शिक्षक को एक अच्छा मनोवैज्ञानिक होना चाहिए। जो छात्र के व्यवहार तथा ज्ञान का समझकर ये पता कर सके कि वह किस कार्य को प्रभावी ढंग से कर सकता है तथा उसे किस मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

जिस प्रकार सूर्य सभी को बिना स्वार्थ के प्रकाश देता है वैसे ही एक शिक्षक को छात्र की बिना स्वार्थ के हर क्षेत्र में सहायता करनी चाहिए। जिससे वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकें।

जैसे संगीत सात सुरों से ही पूर्ण होती है वैसे ही एक शिक्षक को नैतिकता, कर्तव्यनिष्ठा, चरित्रवान, सत्यता, कपटशून्यता, भेदभाव रहित तथा कर्मठता इन सात गुणों से सुषोभित होना चाहिए।

एक ही भूमि में अनेक प्रकार के वृक्ष, लता पौधे जैसे पल्लवित होते हैं उसी प्रकार शिक्षक को अपने छात्र के अन्दर सभी प्रकार की विद्याओं को पुष्पित करने की क्षमता होनी चाहिए।

छात्र के गुण-

आचार्य चाणक्य छात्रों के गुणों का विश्लेषण करते हुए कहते हैं कि-

जिस प्रकार एक वृक्ष O₂ ग्रहण कर CO₂ प्रदान करता है उसी प्रकार छात्र को भी समाज की बुराइयों को अपने अन्दर समाहित कर उसे सद्गुणों में परिवर्तित करके समाज में नए परिवेष का उद्भव करना चाहिए।

छात्र को देशसेवा के लिए सदैव उसी प्रकार तत्पर तथा सतर्क रहना चाहिए जिस प्रकार आँखों की पलकें आँखों के लिए रहती हैं।

जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू होते हैं और दानों ही महत्त्वपूर्ण हैं।

वैसे ही छात्र में शिक्षक के प्रति पूर्ण श्रद्धा और आस्था दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं।

छात्र में मौखिक ज्ञान के साथ-साथ प्रायोगिक ज्ञान भी हो अर्थात् उस ज्ञान का लोक में प्रयोग भी करे अन्यथा वह ज्ञान उसी प्रकार होगा जिस प्रकार बिना नमक के पकवान स्वादरहित होता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि हमारे शरीर में जो स्थान इन्द्रियों का है वही स्थान वर्तमान शिक्षा क्षेत्र में चाणक्य द्वारा बतायी गई शिक्षा नीतियों का है। शिक्षक को सरल अर्थ में परिभाषित करते हुए आचार्य चाणक्य कहते हैं कि शिक्षक देश का निर्माता और भविष्यवक्ता होता है। पत्थर में भगवान या भगवान में पत्थर इस विषलेषणात्मक दृष्टिकोण का विकास एक शिक्षक ही, छात्र के अन्दर करता है तथा छात्र ऐसा हो जो अपने शिक्षक को उनके द्वारा दिए गए ज्ञान को सदियों तक जीवित रखे।

भारतीयशिक्षायां/समाजे संस्कृतशिक्षणस्य भूमिका

विनय सिंह राजपूत

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

अर्थ- शिक्षा एका सर्वव्यापी मानवमूल्यानाम् उत्पादिका प्रक्रिया वर्तते। शिक्षा मानवस्य सर्वांगीणविकासं करोति।

भूमिका- भारतीयसंदर्भे तु शिक्षायाः अतिप्राचीनावधारणा वर्तते। प्रारम्भतः एव भारतीय वाङ्मये ज्ञाननिधिरूपेण चत्वारः वेदाः षड्दर्शनानि अष्टादश पुराणानि विभिन्नसाहित्यिक, नैतिक जीवनोपयोगी शास्त्राणि सन्ति। शिक्षा मनुष्याणां जीवने मानवीय-मूल्यानां विकासं करोति। इतोऽपि यदि संस्कृतशिक्षायाः चर्चा कुर्मः तर्हि तु सोना के ऊपर सुहागा वत् भविष्यति।

प्राचीन शिक्षा- प्राचीन भारतीयशिक्षापद्धतिः गुरुकुलाधारित आसीत्। तत्र शिक्षायाः उद्देश्यानि सा विद्या या विमुक्तये इत्यासीत्।

गुरुकुलेषु गुरुः शिष्याणां सर्वविद्यविकासस्य कृते शास्त्राणि पपाठ।

वर्तमाने समस्या- वर्तमानभारतीयसमाजे मानवस्य नैतिकमूल्यानां सर्वत्राभावः दरीदृश्यते यथाः लुण्ठनम्, व्यजनम्, परस्त्रीगमनम्, हिंसा, मद्यपानम् इत्यादयः विषयाः मानवे अनुरक्ता सन्ति।

किन्तु अस्माकं परम्परा तु तेन त्यक्तेन भुंजीथु इत्यादिकम् आसीत्। पुत्रस्योत्पादने दक्षः अदक्षः मुक्तिसाधने। इति भागवतात् भारतीयसंस्कृतिषु ब्रह्म सत्यं जगन् मिथ्या। अद्यत्वे समाजे दुराचाराणां, दुरव्यवहाराणां, कुप्रथां उत्पादकः अस्ति। वर्तमान भारतीय शिक्षा।

कारणभूततत्वं- भारतपुरातनकाले स्वर्णचटकः विश्वगुरुः भगवद्भूमिः आर्यवर्ताधः संज्ञाः विभूषितः आसीत्। किन्तु क्रूर, लम्पटाः वैदेशीयाः मुगलाः अग्रेजादयः। भारतोपरि आक्रमणं कृत्वा अत्रत्य सर्वमपि सपदं नाशयित्वा चोरयित्वा च, उपहारस्वरूपेण-भाषाः वेषभूषा, कुसंस्काराश्च दत्तः।

निवारणम्- भारतस्य पुनरुद्धारं भारतीय शिक्षाव्यवस्थायाः शुद्धिकरणाय संस्कृतस्य भाषात्वेन, संस्कारविद्यारूपेण आवश्यकता वर्तते।

धूर्तानां अभिशाप कारणेन वयं गुरुकुल पद्धति तु सर्वत्र संचालितुं न शक्नुमः किन्तु वर्तमानयुगे शिक्षाया मूलमस्ति प्राथमिक शिक्षा। अतः वयं प्राथमिक स्तरे संस्कृतस्य सुदृढ स्थापनां कृत्वा निम्नलिखितरूपेण वर्तमानसमाजस्य दृष्टीकोणं परिवर्तितुं शक्नुमः।

संस्कृतस्य भूमिकाः-

1. संस्कृतभाषा ईश्वरं प्रति आस्थाम् उत्पादयितुं समर्थः। ईश्वरस्य सत्ता यदि वयं स्वीकुर्मः तर्हि कार्यफलप्राप्तिभावं अपि स्वीकुर्मः।

यतोहिः - अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।

यथा दृष्टिः तथा सृष्टिः। अर्थात् संस्कृतस्य अध्ययन अध्यापनेन वयं नीरक्षीरविवेकिनः भेदग्राहीषु बुद्ध्या भविष्यामः।

2. संस्कृतेना संस्कारितः- यदि बाल्यकालात् एव-सत्यं वद, धर्मं चर, स्वधायान्माप्रमदः।

गुरुर्देवो भव, मातृ देवो भव, पितृ देवो भव इत्यादि पठित्वा सुसंस्कावान् भविष्यामः ।

वर्तमानसमये उद्योग विजनिमैथर्ड पठित्वा वणिजाः जता वयं । न तु संबंधमूल्यमर्मज्ञा ।

3. अनुशासनम् आचरामः- यदा संस्कृतयुगस्य ऋषीणां, महापुरुषाणां जीवनवृत्तं पठामः तदा तेषां दार्शनिकविचारधाराः अपि अस्मान् प्रेरयन्ति । यथाः मातृवत् पर दारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत् आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति सः पण्डितः ।

एवञ्च अयं निजः परावेति गणना लघु चेतसाम् । उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

4. संस्कृतस्य ज्ञानानन्तराम एव जनाः अहं ब्रह्मास्मि इति अनुभवति । तेन केवल्यं प्राप्तिः

5. दर्शनदिशास्त्राणाम् अध्ययनं कृत्वा जनाः धनवृद्धि-प्रतिष्ठास्थापनं च न चिन्तयति । अपितु आत्मतत्त्वस्य चिन्तनं कुर्वन्ति ।

6. गीतायाः स्मरणं कृत्वा जनाः-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

मातरं फलहेतूर्भूमाते संज्ञो स्त्वकर्मणि ॥

सुकर्तयम् आचरामः, कर्मनिष्ठो भवामः परोपकारी भावुकः भवेम इति ।

भारते तु सर्वाणि प्रयोगाणि आविकाराणि पुरातनकाले । संस्कृतकाले अभवन् ।

यदि नवीनानि प्रयोगाणि भारतस्य प्रतिलिपि नास्ति चेत्-भारतस्य पराधीनता पूर्वं भारतं विहाय अन्यः कश्चिदपि देशः कमपि प्रयोगम् आविष्कारं कृतं वा ?

यतोहि भारतस्य एव प्रतिलिपेः अनुकरणं कृत्वा ते अस्मान् शिक्षयन्ति ।

एतत् सुरेश सोनी इति नाम्नः आचार्यस्य रचित भारत में विज्ञान की उज्ज्वल परम्परा पुस्तके विस्तृतरूपेण प्रदत्तमस्ति ।

उपसंहारः - यदि वयं पुनः विश्वगुरुः भवितुम् इच्छेम तर्हि अस्माकं शिक्षापद्धतौ दोषनिवारणम् आवश्यकम् । अस्माकं प्रमुखं दायित्वं भवेत् यत् अस्माकं प्रचीनगौरवशाली परम्पराणां पालनं स्वदेशप्रेमजागरणं वर्तमानसमाजस्य न्यूनतानां च निवारणम् एतद् केवलं संस्कृतशिक्षा माध्यमेनैव संभवितः शक्नोति ।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित्दुःख भाग्भवेत् ॥

शिक्षा पद्धति में भारतीय दर्शन

संजीव कुमार उरमलिया

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

आधुनिक भारतीय शिक्षा पद्धति में प्रायः सभी उपयोगी विषय सम्मिलित हैं । विद्यार्थी का कार्य तो अध्ययन करना होता है उसे जिस तरह का पाठ्यक्रम प्राप्त होता है विद्यार्थी उसी को पढ़ता एवं सीखता है और अपनी प्रेरणा भी बनाता है । विद्यार्थियों का चिन्तन उत्कृष्ट एवं ज्ञान असीम हो इसलिए भारतीय दर्शन की अत्यन्त आवश्यकता है ।

क. दर्शन से अभिप्राय- देखना अर्थ में प्रयुक्त दृश धातु से ल्युट् प्रात्यय करने पर दर्शन शब्द निष्पन्न होता है जिसका संस्कृत में दृश्यते अपने ऐसा विगृह करते हैं। अष्टाध्ययी 3/3/114 नपुंसके भावे क्तं आचार्य पाणिनी के अनुसार ल्युट् प्रात्यय का प्रयोग भाव करण एवं अधिकरण इन तीन अर्थों में होता है यहां भाव से अभिप्राय पूर्णतया शुद्ध धातु के अर्थ से है इस प्रकार दर्शन का अर्थ हुआ-देखना। वह विद्या ज्ञान अथवा उपकरण साधन जिसके द्वारा किसी विषय या वस्तु के देख या जाना जाए अथवा आधारभूत वह वस्तु जिसमें किसी को देखा जाए।

दर्शन का मानव जीवन के साथ अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, क्योंकि मानव के जीवन का कोई भी पक्ष दर्शन की परिधि से बाहर नहीं हो सकता। सृष्टि के आरम्भ में जब से मानव ने विचार करना प्रारम्भ किया, उसी समय से उसके कुछ अनुभव स्थायी आकार लेने लगे स्थायी आकार से आकारित उसके वे अनुभव ही दर्शन रूप में परिवर्तित हो गए।

ख. भारतीय दर्शन का विकास- प्रकृति के विभिन्न व्यापारों को देखकर आदिकाल में मनुष्य अत्यधिक आश्चर्यचकित होता होगा उसकी सदैव जिज्ञासा रही होगी। कि प्रकृति क्या है? अर्थात् सूरज, याहं तारे, पर्वत, नदियां वृक्ष आदि ये सब क्या हैं? में कौन हूं? कहां से आया हूं? मुझे कहां जाना है? मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है? यह संसार क्या है? इसे बनाने वाला कौन है? इस संसार को बनाने वाले और मनुष्य का क्या सम्बन्ध है? आदि।

ये कुछ प्रश्न ही आदिमानव के मस्तिष्क में रहे होंगे, जिन्होंने उसे चिन्तन के लिए बाध्य किया होगा। आगे चलकर इन्हीं प्रश्नों के उत्तर विद्वान् मनीषियों ने दर्शनरूप में प्रतिष्ठित किए। इस समस्याओं पर अलग-अलग चिन्तकों ने अपनी अपनी शैली द्वारा चिन्तर किया तथा उनके समाधान का अन्वेषण किया। इसी प्रकार अनेक दर्शनों का भारत में प्रादुर्भाव हुआ।

ग. भारतीय दर्शन एक परिचय- भारतीय दर्शन विषयक विचारधाराओं को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जाता है 1. आस्तिक दर्शन 2. नास्तिक दर्शन। जिनमें वेदों की प्रमाणिकता को स्वीकार किया गया है आस्तिक एवं जो वेदों में महत्ता प्रदान नहीं करते उन्हें नास्तिक कहा गया है।

आस्तिक दर्शनों की संख्या छः है- 1. सांख्य 2. योग, 3. न्याय 4. वैशेषिक, 5. पूर्वमीमांसा 6. उत्तर मीमांसा या वेदान्त।

नास्तिक दर्शन मुख्य रूप से तीन हैं- 1. चार्वाक 2. जैन, 3. बौद्ध।

घ. शिक्षा में दर्शनों को यद्यपि सभी दर्शनों का लक्ष्य एक ही है-सांसारिक दुःखों से आत्यन्तिक निवृत्ति। रूचिभिन्नता व चिन्तन-मनन की प्रक्रिया सबकी अलग-अलग हो सकती है, अतः दर्शनों में मतभेद होना स्वाभाविक है। देश, काल, अवस्था व अधिकारी के भेद से भले ही दर्शनों में मतभेद हो किन्तु विवेकी पुरुष उन सभी मतों का समन्वय करते हैं।

तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं अज्ञ, विज्ञ, और विषेज्ञ और तीनों में विषेज्ञ उत्तम होता है अर्थात् उनका चिन्तन उत्कृष्ट होता है अधिकांशतः वो दार्शनिक या वैज्ञानिक बनते हैं। भारतीय शिक्षा पद्धति में यदि दर्शन का ज्ञान सभी को प्राप्त हो तो विदेशों में जाकर पढ़ने की आवश्यकता नहीं होगी। दर्शन से व्यक्ति देखना सीखता है दृश्यते ज्ञायते वस्तुतत्त्वमनेनेति दर्शनम्'' जीवन का

उद्देश्य क्या है? ये पता चलता है और यदि उद्देश्य लक्ष्य ही पता चल जाए तो मनुष्य उसे प्राप्त करने की कोशिश भी अवश्य करता है।

वेदानां महत्त्वम्

वेद कुमार सिंह जादौन
शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

“सा विद्या या विमुक्तये”

अथ कोऽयं वेदः? पुरुषार्थचतुष्टयास्तित्वस्य बोधः विवेचनञ्च विद्यते। मंत्रब्राह्मणयोः सामूहिकं नाम-वेदः। वैदिकमन्त्राणां संग्रह कथयति-संहिता। ज्ञानार्थकाद् विद् धातोर्धाञि प्रत्यये रूपमिदं सिद्धयति। वेदानां चत्वारः अर्थाः विस्तृत रूपेण एवं प्रकारेण वर्तन्ते।

1. विद् ज्ञाने, गणः अदादिगणः, सेट्, परस्मैपदी, लट् लकारे वेद/वेत्ति।
2. विद् लृलाभे, गणः तुदादिगणः, अनिट्, उभयपदी, लट्लकोर विन्दति/विन्दते।
3. विद् सत्तायाम्, गणः दिवादिगणः, अनिट्, आत्मनेपदी, लट्लकारे विद्यते।
4. विद् विचारणे, गणः रुदादिगणः, अनिट्, आत्मनेपदी, लट्लकोर वेदयते। इत्येतेभ्यः चतुर्भ्यः धातुभ्यो निष्पन्नोऽस्ति।

चत्वारः वेदाः उपवेदाश्च सन्ति-

वेदः

ऋग्वेदः, विषयः ज्ञानम्
यजुर्वेदः, विषयः यक्ष कर्म
सामवेदः विषयः उपासना स्तुति
अथर्ववेदः, विषयः विज्ञानां, प्रायश्चित्त

उपवेदः

आयुर्वेदः रोग निदानं
धनुर्वेदः अस्त्र शस्त्र कला
गन्धर्ववेदः गायन, वादन कला
अर्थवेदः षिल्प, व्यापार

आयुर्वेदस्य बृहत्त्रयी- 1. चरक संहिता, 2. सुश्रुत संहिता, 3. अष्टाङ्गहृदयं
संस्कृतसाहित्ये वेदानां स्थानं सर्वोपरि वर्तते। भारते धर्मव्यवस्था वेदायता एव। वेदः धर्म निरूपणे स्वतन्त्रभावेन प्रमाणम्। श्रुति स्मृति विरोधे श्रुतिः एव गरियसी। न केवलं धर्ममूल-कत्वेनैव वेदाः समादत्ताः अपितु विश्वेस्मिन् सर्वप्राचीन ग्रन्थत्वेन अपि परिगण्यन्ते।

ज्ञानविज्ञानराशयः संस्कृते आधाररूपाः कर्तव्यबोधकाः शुभा शुभनिर्देशकाः सुखशान्तिसाधकाः जीवन प्रदायकाः, विश्वहितसम्पादकाः, ज्ञानलोकप्रदायकाः, चतुर्वर्गफलप्रापकाः सन्ति।

उक्तञ्च- वेदव्यासेण-

अनादि निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयंभुवा।

आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयाः॥

सर्वेषां वेदानां वागेकायनम्। (बृह. 2.4.10)

यदन्तरं तद् बाह्यं, यद् बाह्यं तदन्तरम्।-(अथर्व. 2.30.4)

यत्पुरुषो मनसाभिगच्छति तद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति।-(तै.आ.1.1)

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्, मा स्वसारमुत स्वसा।-(अथर्व. 3.30.3)

ऋषीणां निधिगोप इति ह्यनूचानमाहुः । - (श. ब्रा. 1.6.2.3)

वेदानां सामवेदोऽस्मि । - (गीता 10/22)

सामवेद एवं पुष्पम् । - (छान्दो. 3/3/9)

सर्वज्ञानमयो हि सः, वेदोऽखिलो धर्ममूलम् । (मनुस्मृतिः)

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधमत्स्विनुष्ठितात् ।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः । - (भगवगीता, 3.35)

वेदानां पर्यायाः शब्दाः श्रुति, आम्नाय, छन्दस्, आगम, त्रयी सर्वे मन्त्राः सार्थकाः भवन्ति । अपि च अस्माकं शास्त्राणि कथयन्ति यत् मन्त्राणां प्रयोगः अर्थान् ज्ञात्वा वयं कर्मणि प्रवृत्तः भवामः । अतः संस्कृत मन्त्राणां भावज्ञानमावश्यकम् इति ।

मन्त्रहीनो स्वरतोवर्णतो वा, मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह ।

स वांग्वज्जो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रषत्रुः स्वरतोऽपराधात् । (पाणिनीय शिक्षा)

तैत्तरीयशिक्षावल्यां शिक्षा

सतीश भार्गव

शिक्षाशास्त्र- प्रथम वर्ष

उपनिषदः वैदिकज्ञानकाण्डस्य तुङ्गशकाः सन्ति । उपनिषत्शब्दस्तु वेदान्तशब्देन पराविद्याशब्देन वा अभिधीयते । वेदान्तो नामोपनिषत्प्रमाणम् उपनिषद् इत्यं शब्दः उप नि इति उपसर्गद्वय पूर्वक पद धातोः कृप् प्रत्यये कृते सति निष्पन्नः । अत्र उप इत्युपसर्गः सामीप्यार्थे एवं नि इति उपसर्गः निश्चयार्थे निष्ठार्थे वा येन अर्थः भवति गुरोः पार्श्वे तत्त्वज्ञानार्थं सविनयेन सनिष्ठया उपवेष्टव्यम् उपनिषदित शब्दे षद् धातोः अर्थत्रयं भवति गति 'प्राप्तिज्ञानं' येन ब्रह्मणः प्राप्तिज्ञानञ्च भवति । षदलृविशरणगव्यवसादनेषु 1. विशरण येन संसारबीजभूताऽऽविद्यायाः नाशः भवति । 3. अवसादन शिथिलीकरणम् येन मानवानां दुः खानि शिथिलानि भवन्ति । अर्थत्रयमाहत्य उपनिषदः ब्रह्मविद्यायोतकाः मन्यन्ते ।

उपनिषदां संख्या मुक्तिकोपनिषदि अष्टोत्तरशतमस्ति । यस्मात्पूषनिषत्सु आचार्यषंकरेण भाष्यं कृतं तेषां संख्या एकादश वर्तते । तेषूपनिषत्सु वर्तते एकोन्यतमोपनिषद् तैत्तरीयोपनिषदिति । उपनिषदस्यास्मिन् वर्तते । वल्लीत्रयं यथा शिक्षावल्ली ब्रह्मानन्दवल्ली भृगुवल्ली अत्र शिक्षावल्यानुसारेण शिक्षा इति विषयमधिकृत्य किञ्चिदहं लेखितुं ईहे ।

वैदिकवाङ्मये शिक्षायाः अर्थः वर्तते - वर्णोच्चारणस्य ज्ञानं प्रदानम् ऋग्वेदभाष्यभूमिकायामाचार्यसायणेनोक्तम् -

‘स्वरवर्णाद्युच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते उपदिष्येत सा शिक्षा’

अर्थात् शिक्षोद्देश्यं वर्तते यत् वर्णोच्चारणज्ञानप्रदानम्, उच्चारण स्थान-प्रयत्नाल्पप्राण-महाप्राणेत्यादीनां ज्ञानप्रदानम् । प्राचीनशिक्षायाः बृहद्ज्ञानं प्रातिसातग्रन्थेषु समुपलभ्यते । एतदतिरिक्तानि लघुग्रन्थानि अपि सन्ति शिक्षासम्बन्धीनि ।

यथा-पाणिनीयशिक्षा-याज्ञवल्कशिक्षा-नारदशिक्षा-माण्डुकीशिक्षेत्यादयः

तेषु शिक्षाविषये बहूतमं वर्णनं वर्णितमस्ति । एतेषु लघुशिक्षाग्रन्थेष्वपि द्वौ ग्रन्थौ व्यासशिक्षा-
पाणिनीयशिक्षा इति नामको प्रसिद्धौ स्तः ।

शिक्षावल्याः द्वितीयानुवाकस्य भाष्ये आचार्यशंकरेण शिक्षायाः व्युत्पत्तिः कृतः । शिक्षा
शिक्ष्यतेऽनयेति वर्णाद्युच्चारण लक्षणम् शिक्ष्यन्ते इति वा शिक्षा वर्णादयः इति
अर्थात् येन वर्णादीनां उच्चारणं शिक्ष्यते सा शिक्षा भवति अथवा शिक्षमाण वर्णादयः एवं शिक्षा
इति ।

तत्रैव शिक्षावल्याः द्वितीयेऽनुवाके शिक्षाध्यायस्यारम्भः क्रियते ग्रन्थकारेण प्रप्रथमे तस्य
शिक्षाध्यायस्य प्रयोजनं भाष्यकारेणोक्तम् अर्थज्ञानप्रधानत्वायुपनिषदो ग्रन्थपाठे यत्नोपरमो मा भूदिति
शिक्षाध्यायः आरभ्यते ।

अर्थात् ग्रन्थस्यास्याध्ययनं शिथिलं मा भूत, तदर्थं शिक्षाध्यायस्यारम्भं करोति इति
अभिधेयार्थः ।

अत्र शिक्षायाः षडङ्गानि स्वीकृतानि-यथा

वर्णः स्वरः । मात्रा बलम् । साम सन्तानः । इत्युक्तः शिक्षाध्यायः ।

अत्र शिक्षा इति पदेन शिक्षैवेति व्यवहर्तव्यः वैदिकप्रक्रियानुसारेण दीर्घत्वं वर्तते ।

भाष्यकारेणोक्तम्-

तत्रवर्णोऽकारादिः स्वर उदात्तादिः, मात्राहस्वाद्याः, बलं प्रयत्नविषेषः साम वर्णानां
मध्यमवृत्त्योच्चारणं समता सन्तानः सन्ततिः संहितेत्यर्थः एष हि शिक्षितव्योऽर्थः । शिक्षा यस्मिन्नध्याये
सोऽयं शिक्षाध्यायः इत्येवयुक्त उदितः । उक्तः इत्युप संहारार्थः ॥१॥

अर्थात् उपर्युद्धिष्टेषु शिक्षाषडङ्गेषु प्रथमोद्दिष्टः यः वर्णः इति पदेन अकारादयः वर्णाः स्वीक्रियन्ते । तेषां
प्रकारद्वयं वर्तते-स्वच्छन्नभेदात् ।

पाणिनीयशिक्षायां शम्भुमते त्रिषष्ठी चतुष्पष्ठी वर्णानामुल्लेख प्राप्यते-

त्रिषष्ठी चतुष्पष्ठीर्वा वर्णाः शम्भुमते मताः (पा.शि.)

द्वितीयः स्वरः उदात्तानुदात्तस्वरितभेदेन त्रिप्रारकं वर्तते । वेदेशु स्वर भेदेन अर्थ व्यत्ययः जायते-
यथा प्रसिद्धैका कारिकामहाभाष्ये-

मन्त्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह ।

स वाक् वज्रं यजमानं हिनस्ति यथेन्द्र शत्रुः स्वरतोपराधात् ॥ (म. भा.)

तृतीयः मात्रा इति पदेन अभिधीयते स्वरोच्चारणकाले जायमानः समयः स एव मात्रा इति पदेन
अभिधीयते । सोऽपि त्रिविधः ह्रस्वदीर्घप्लुतभेदात् ।

चतुर्थः बलम् वर्णोच्चारणे जायमानं प्रयत्नमेव बलम् इति कथ्यते स प्रयत्न इति पदेनापि
बुद्ध्यते । स द्विविधः आभ्यन्तरबाह्यभेदात् पञ्चमः साम इत्यस्यार्थः वर्तते निर्दोष-गुणयुक्तोच्चारणम्
इति यथोक्तं वर्तते गुणमुक्तोच्चारण विषये-

गीतीशीघ्री शिरः कम्पी तथा लिखित पाठकः ।

अनर्थाज्ञोऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाधमाः ॥

गुणानां विषयेऽपि उक्तं वर्तते यथा-

माधुर्यमक्षय्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः ।

धैर्यं लयसामर्थ्यं च षडेते पाठकाः गुणाः ॥

अन्तिमः वर्तते संतान इति अस्मार्थः संहितापाठे संधिनियमान् प्रयोगः इति यतोहि संहिता पाठे पदज्ञानमावश्यकम् अन्यथा अर्थज्ञानं न भवितुमर्हति ।

आधुनिक-शिक्षापद्धत्यामप्येतदषडङ्गं युक्तशिक्षाध्यापनमवश्यतेव भवितव्यम् । अनेनैव विद्यार्थीनां विविधकौशलानां विकासः संभवति ।

तदनन्तरं तृतीयेऽनुवाके गुरुशिष्ययोः यशसः ब्रह्मतेजश्च वर्धयितुं प्रार्थना कृता वर्तते । सह नौ यशः । सह नौ ब्रह्मवर्चसम् इति ।

ऋषिभिरक्तं शास्त्राध्ययनाध्यापनेति विषयस्य वर्णनं कृतम् । अत्र स्वाध्याय इति पदेन अध्ययनम् प्रवचन इति पदेन अध्यापनम् अभिधीयते । एकादशेऽनुवाके दार्शनिकविचारैः साकं आचार्यः स्वशिष्याय उपदेशो अदुः ।

यथा- सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान्माप्रमदः आचार्यायप्रियं धनमाहत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः । सत्यान्नप्रमदितव्यम्, मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव अतिथि देवो भव । इत्यादयः । एतादृशानि बहूनि शैक्षिकचिन्तनानि सन्ति अस्मिन् उपनिषदि, अत एव शिक्षाक्षेत्रेषु बहुमहत्वं वर्तते शिक्षावल्याः । अस्यां वल्यां यो वर्णितः विषयः वर्तते शिक्षाकल्याः । अस्यां वल्यां यो वर्णितः विषयः वर्तते तस्य विषयस्य आधुनिकीशिक्षायां विनियोगः कर्तव्यः । अनेनैव अस्याकं राष्ट्रस्य शिक्षाव्यवस्था उत्तरोत्तरं उत्कृष्टोत्कृष्टत्वं प्राप्स्यति ।

वास्तविक शिक्षा

गोविन्द शर्मा

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

आधुनिक युगीन शिक्षार्थी अपने जीवन में शिक्षा के माध्यम से अधिकाधिक धनार्जन व भौतिक सुख संसाधनों का उपार्जन करना ही इच्छा मात्र रह गई है ।

सा विधा या वियुक्तये

आज यह सिद्धान्त ही सर्वोपरि हो गया है । तो क्या वास्तव में आधुनिक युगीन विद्यार्थी ने वास्तविक ज्ञान को जाना है या नहीं ? हमारे प्राचीन ग्रन्थों में तो विद्या हो मुक्ति प्रदान करने वाली कहा गया है- सा विधा या वियुक्तये ।

आज की पाश्चात्य शिक्षा से मनुष्य के मन में भ्रान्तियाँ उत्पन्न होती जा रही है । वर्तमान में छात्र का उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ अंक लाना मात्र रह गया है । अगर विद्यार्थी असफल हो जाते हैं तो वह मानसिक रूप से प्रताड़ित होकर कुछ अघटित घटनाओं को अंजाम दे देते हैं ।

यह हमारी भारतीय शिक्षा एवं वास्तविक शिक्षा द्वारा प्रदत्त नहीं है । श्री कृष्ण द्वारा गीता में कह गया-

गतासूनगतासूच नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥२/११॥

भगवान कहते हैं कि जो ज्ञानी जन होते वह बीते हुए कार्यों के बारे में न सोचकर अग्रिम

सफलता को प्राप्त करने में संलग्न होने का आदेश देते हैं।

वीती ताहि विसार देय, आगे की सुध लेय।।

पुरातनकालीन संस्कार युक्त शिक्षा प्रदान की जाती थी, किन्तु आधुनिक समय की शिक्षा व्यक्तियों को संस्कार विहीन बना रही है।

आधुनिक युगीन समाज पाश्चात्य शिक्षा व संस्कृति से ओत-प्रोत होकर अपने आपको-educatade कहते हैं वही दूसरी ओर अपने माता पिता व्र आदरणीय जनों का अपमान करते हैं। परन्तु हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति इसे स्वीकार नहीं करती, क्योंकि कहा गया है।

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेवनम्।

चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोवलम्।।

वास्तविक शिक्षा तो वह है जो सन्मार्ग की ओर ले जाये, सत्य का ज्ञान कराये सभी के प्रति सम्मान करना सिखाये।

इसी सन्दर्भ में एक सुभाषित में कहा गया है-

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुक्ते

कान्तेव चापि रमयत्थपनीय खेदम्।

लक्ष्मीं तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिय

किं किं न साधयति कल्पल्पतेव विद्या।

विद्या तो वह जो सर्वदा माँ की तरह रक्षण करती है और कल्पतरू के समान वास्तविक विद्या है। समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली कहा गया है।

॥ विद्या कामदुद्या धेनुः ॥

शिक्षायाम् अनुशासनस्य आवश्यकता

आर्यसुता बेहेरा

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

शिष्टजनैः निर्मिता या जीवनशैली तस्याः अनुकरणमेव अनुशासनम्। अनुशासनम् नाम शास्यने अनेन इति शासनम्। अनु उपसर्ग पूर्वक शास् अनुशिष्टौ धानौः तस्मान् करणे ल्युट् प्रत्यये सनि अनुशासनम् इति रूपं भवति, सर्वस्मिन् अपि क्षेत्रे अनुशासनस्य अतीव आवश्यकता वर्तते। तत्रापि शिक्षायाम् अनुशासनस्य तादृशी एव आवश्यकता वर्तते यादृशी शरीर रक्षणाय आहारस्य आवश्यकता भवति। यदि मानव जीवने अनुशासनं न स्यात् तर्हि समग्रमपि जीवनं पशुवत् भावहीनं धर्मभ्रष्टं च स्यात्।

आङ्ग्ल भाषायाम् अनुशासनस्य कृते Discipline इति शब्दः अयुज्यते। अस्य शब्दस्योत्पत्तिः Disciplina इति लाटिनशब्दात् भवति। यस्यार्थः भवति - अभ्यासः, नियमः, शिक्षा व्यवस्था अध्यापनं प्रशिक्षितव्यवस्था च। मित्ररूपेणाऽपि Discipline इति शब्दस्योत्पत्तिः Discipulum इति लाटिनभाषातः मन्यते। यस्यार्थः वर्तते गुरुवः शिष्यसकाशात् आकंक्षन्ने यच्छिष्याः श्रद्धापूर्वकमादेशपालनं कुर्युः। स्वजीवने आवश्यक वाञ्छितगुणानां विकासं कुर्युः। एवं प्रकारेण

Discipline शब्दस्य अर्थो वर्तते आचरेषु नियमितता संपादनम्।

तदेव टि पि नन् महोदयः अब्रवीत् अनुशासनं नाम स्वभावनां शक्तीनाञ्च नियन्त्रणं वर्तते। येन अव्यवस्थायाः व्यवस्थितता परिदृश्यते।” एवञ्च प्राचीनकालदारभ्ये भारते अनुशासनस्य कृते अतीव महत्त्वं प्रदत्तम्। तत्र पुराणेषु श्लोकः अस्ति यत् -

लालयेन् पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत्
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्॥

एवं प्रकारेण गुरुकुले अपि आचार्याः छात्रान् अनुशासनविषये बहुपदेशान् ददाति स्म। तत्र यथा - सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायात्मा प्रमदः। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। श्रद्धया देयम्। इत्यादयः। एवं परञ्च अनुशासनेऽपि कालप्रभावेण न तदानुगुणं परिवर्तनं दृश्यते यथा -

- (1) आदर्शवादानुगुणमनुशासनम्
- (2) प्रकृतिवादानुगुणमनुशासनम्
- (3) व्यवहारिकवादानुगुणमनुशासनम्
- (4) यथार्थ-वादानुगुणमनुशासनम्

तथा च आधुनिकेषु (आधुनिकशिक्षयां) अनुशासनस्य एवं प्रकाराणि सन्ति।

- (1) दमनात्मकानुशासनम्
- (2) प्रभावात्मकानुशासनम्
- (3) मुक्त्यात्मकानुशासनम्

एवं प्रकारेण ज्ञायते यत् अनुशासनस्य मुख्योद्देश्यं भवति आत्मनियन्त्रणक्षमतायाः विकाससम्पादनं व्यवहारसम्बन्धसमस्यानां निवारणम्, प्रजातन्त्रात्मकाभिवृत्तेः विकासः सम्पादनम्। एवं तत्रपि मुख्यं भवति। छात्राणां सदाचरणसंपादनं येन अस्वाभाविकानां प्रवृत्तीनाञ्च शक्तीनां नियन्त्रणं कृत्वा अव्यवस्थायाः व्यवस्था सम्पादमेव शिक्षानुशासनस्य परमोद्देश्यं वर्तते।

निष्कर्षः - अनुशासनम् नाम मानवजीवने ये दोषाः दृष्टाः तान् वीक्ष्य तेषां निवारणं येनोपायेन जायते तन्नामानुशासनमिति। एवमेव शिक्षया सर्वाङ्गीणविकासाय तथा सर्वविधलक्ष्यसिद्ध्यर्थमपि अनुशासनस्य महती आवश्यकता वर्तते।

एवं च शिक्षानुशासनं नाम शिक्षारूपिणि वृक्षे यावदनुशासनस्य सेचनं भवति। तावत् फलं कल्पलते वात्र मिलत्येव। अतः सर्वत्र शिक्षानुशासनस्यावश्यकता दृश्यते एव।

सामाजिकजीवनस्य आधारः शिक्षा

मालती साहु

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

प्राचीनकालतः एव भारतीय समाजस्य स्वरूपं, वैविध्यपूर्णं इति सर्वे जानन्ति। अस्माकं समाजे बहवः जाति धर्म साम्प्रदायिक जनाः निवसन्ति। तेषां मध्ये सौहार्द प्रेम स्नेह आदि भावनानां सञ्चारः शिक्षा एव करोति यथा उदाहरणमपि वर्तते-

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।

उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥”

अस्माकं समाजः सर्वान् कुटुम्बवत् स्वीकुर्वन्ति। एतस्य कारणं वर्तते अस्माकं समाजेन प्रदीयमाना संस्कृत शिक्षा प्रति। इतोऽपि अस्माकं समाजस्य उदारत्वं वर्तते यत् समाजः सर्वेषां जनानां कल्याणाय कामना अपि करोति -

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभागभवेत्॥”

अतः स्पष्टं भवति यत् एतेषां नैतिक विचाराणां ज्ञानं शिक्षया एव भवति। शिक्षा विना मानवः तु पशु सदृशः भवति। इत्यस्य उदाहरणमपि वर्तते-

येषां न विद्या न तपो न दानम्

ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः

ते मृत्युलोके भूवि भारभूता

मनुष्य रूपेण मृगश्चरन्ति॥”

अर्थात् यस्य पाश्वे विद्यारूपी धर्म नास्ति, सः मनुष्यरूपेण पशु सदृशः भवति। केवलं मानवस्य शरीरः भवति अन्तर्निहित गुणाः पशु सदृशाः भवन्ति। एका उक्तिः अपि वर्तते-

ज्ञानेन हीना पशुभिः समाना॥”

ज्ञानहीनः पुरुषः पशुसदृशः इत्याशयः शिक्षा विद्यया च ज्ञानस्य प्राप्तिः एव सामाजिक गुणानां प्राप्तिः नैति, आध्यात्मिक सांस्कृतिक आदि गुणानां पक्षाणाञ्च विकासः भवति। विद्या किं किं ददाति इति विषये ‘विष्णुशर्मा महोदयः’ ‘पञ्चतन्त्रे’ उल्लेखितः यत्-

विद्या ददाति विनयं विनयादयाति पात्रताम्।

पात्रत्वाधनमाप्नोति, धनात्धर्मः ततः सुखम्॥”

अर्थात् - विद्या विनयं ददाति विनयेन पात्रता आगच्छति तथा यस्य पाश्वे पात्रता भवति तस्य पाश्वे धनं अवश्यमेव आगच्छति। एवञ्च धनेन एव धर्मस्य पालनं सम्यक्तया कर्तं शक्यते। यदा धर्मस्य पालनं भविष्यति, तदा सुखं स्वयम् एव आगच्छति। अतः अनेन श्लोकेन ज्ञातं यत् विद्यया एव सर्वेषां सुखादि उपलब्धीनां सुलभता भवितुं अर्हति। एते पक्षाः सामाजिक जीवने आवश्यकं भवति।

वस्तुतः शिक्षायाः अपरः नाम वा शिक्षायाः एकः अङ्गः विद्या अपि भवति। यदि वयं शिक्षायाः स्वरूप विषये चिन्तयामः तर्हि सत्यमिदं, यत् शिक्षायाः स्वरूपं समाजानुगुणं भवनीयम् कारणं ते शिक्षा समाजाय भवेत्। समाजे नित नूतन आवश्यकता भवति समाजे परिवर्तनमपि भवति। अनेन कारणेन सामाजिक जीवनं परिवर्तनशीलं भवति।

अतः पाश्चात्य विद्वांसः कथयन्ति वा पाश्चात्य अवधारणा वर्तते यत् - समाजेन सह शिक्षायामपि परिवर्तनं अपेक्षितं भवति। परन्तु अस्माकं भारतीय अवधारणा वर्तते यत् शिक्षायां केचन परिवर्तनं तु भवत्येव परन्तु केचन शास्वत सिद्धान्ताः सन्ति तेषु परिवर्तनं न करणीयं यस्मिन् नैतिकता, सामाजिकता मानवता आध्यात्मिकता आदि पक्षाणां तु ज्ञानं सदैव सर्वदा

करणीया। येषु परिवर्तनं समाजस्य पतनस्य कारणं भवितुं अर्हति।

वस्तुतः इदानीं शिक्षायाः स्वरूपं व्यवसाय प्रधानं वर्तते। इति कारणेन अस्माकं समाजे इदानीं विकृतिः दरिदृश्यते। समाजे जनाः केवलं व्यवसाय विषये एवञ्च आर्थिक लाभाय चिन्तयन्ति। परन्तु धर्मः किं? अधर्मः किं? पापपूण्यादि विषये नैतिकता मानवता आदि विषये जनाः न चिन्तयन्ति। आर्थिक लाभाय व्यापारिणः एव व्यापारे अनिष्टकारक वस्तुनां मेलनं कृत्वा व्यापारः करोति। अनेन कारणेन समाज नित नूतन रोगानां प्रादुर्भावः भवति। जनाः रूग्णाः भवन्ति।

अतएव समाजस्य दायित्व वर्तते यत् स्व राष्ट्रे प्रदीयमाना शिक्षा विषये चिन्तनं कुर्युः एवं च शिक्षायां अपेक्षित परिवर्तनाय प्रयासः कार्यश्च कुर्युः। अन्यथा यदि शिक्षायां केवलं तकनीकि विज्ञानादि विषये एवञ्च आधुनिकीकरणे एवं वृद्धि भविष्यति तर्हि शनैः शनैः नैतिकादि गुणानां ह्रासः भविष्यति। यदा नैतिकादि गुणाः समाजे न भविष्यन्ति तर्हि समाजः शनैः शनैः संकटग्रस्तं भूत्वा नष्टं भविष्यति।

अत्र स्पष्टीकरणम् आवश्यकं यत् शिक्षायाः तात्पर्यं केवलं विद्यालये प्रदीयमाना शिक्षा एव नास्ति। अपितु व्यक्तिः बालकः समाजे यत्र कुत्रापि ज्ञानं लब्धयति सा शिक्षा भवति। शिक्षा वस्तुतः जन्मतः मृत्यु पर्यन्तं प्रचाल्यमाना एका अनुस्यूत प्रक्रिया भवति।

शिक्षायां बालकानां सर्वांगीण विकासाय तत्त्वानि निहितानि भवन्ति। यथा - यदि वयं सार्वभौतिक दृष्ट्या पश्यामः तर्हि बालकः यदा मन्दिरे गच्छति तत्र बालके आध्यात्मिक भावना अवश्यमेव आगच्छति। अतः शनैः शनैः बालकः आध्यात्मिकः भवति। एतादृशमेव विवाहादि कार्यक्रमे यदि बालकः गच्छति तत्र सामाजिकता परोपकारादि भावनानां अभिवादानादि गुणानां विकासः भवति। तर्हि स्पष्टं भवति अत्र यत् समाजः एव शिक्षायाः प्रमुख केन्द्रः भवति। यदि दार्शनिक दृष्ट्या पश्यामः तर्हि विद्यालयः अपि समाजस्य एकः लघुः अङ्गः भवति। अनेन कारणेनाऽपि प्रमुख केन्द्र समाजः एव भवति इति द्योतयति।

अतः वक्तुं शक्यते यत् समाजशिक्षणयोर्मध्ये आधाराधेय सम्बन्धः वर्तते। शिक्षा समाजस्य विकासः तथा तस्य संस्कृतिः संरक्षणं करोति। तथा समाजः शिक्षां परिपोषयति।

अतएव सामाजिक जीवने शिक्षायाः तथा महत्वं भवति यथा शरीरे आत्मायाः महत्वं भवति। अतः स्पष्टं यत् सामाजिक जीवने शिक्षा महत्वपूर्ण भवति।

उक्तमपि -

न चोरहार्यम् न च राज हार्यम्
न भ्रातृ भाज्यं न च भारकारि
व्यये कृते वर्धत एव नित्यं
विद्याधनं सर्वधनं प्रधानम्॥”

अतएव सामाजिक विकासाय सर्वेषां कृते समान शिक्षा व्यवस्था भवेत् इति मे मतिः।

प्रकृतिवादे शिक्षा

शिल्पी उपाध्याय
शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

शिक्षाबालककेन्द्रिता निगदिता स्वभाविकी चादृता,
क्रीडापद्धितिराश्रिता प्रकृतिजा स्वातन्त्र्यमासेविताम्।
गच्छेति प्रकृति तथानुसरणं यै वर्धिता मानिता,
सा वै सज्जननिश्चिता प्रकृतिवादोऽस्तीति संकीर्तितः॥

संसारोऽस्मिन् निखिलानि वस्तूनि भौतिक वस्तुभिः निर्मितानि सन्ति इति मन्यमानः भौतिवादः यदि एवं मन्यते यत् संसारस्य सर्वाणि वस्तूनि प्रकृतेः परिणामः तस्याः उपहार स्वरूप वा तदा सैव भौतिकवादः प्रकृतिवादः रूपेण परिभाषितुं शक्यते। अस्यवादानुसारेण सर्वेषां दार्शनिक समस्यानां समाधानं प्रकृतौ निहितं विद्यते।

"Nature alone contains the final answer to all philosophical problems."

जेम्स वार्ड महोदयेन प्रकृतिवादे स्व विचारः प्रस्तुतः - प्रकृतिवादः सः सिद्धान्तः प्रकृतिं ईश्वराः पृथक् करोति, तथा आत्मानं पुद्गलस्य अधीने करोति अपरिवर्तनशील नियमान् च सर्वोपरि मन्यते। थॉमसलौगो महोदयः अपि प्रकृतिवादं परिभाषयन् कथयति यत् प्रकृतिवादस्य आदर्शवादस्य विरुद्धतया प्रवर्तते, जडतत्त्वस्याधीने मनः भवति, अन्तिम वास्तविकता जडे निहिता अस्ति। न तु आध्यात्मिके। एवं प्रकारेण प्रकृतिवादः आदर्शवादस्य प्रतिक्रिया रूपेण सा दार्शनिक विचारधारा रूपेण वा मनः पदार्थस्व अधीने स्वकरोति, तथा विश्वसति अन्तिमावस्था भौतिकता एव न तु आध्यात्मिक। इयं विचारधारा स्वकरोति यत् अस्मात् जगतः परो अन्यत् जगत नास्ति।

प्रकृतिवादस्य प्रमुखाः सिद्धान्ताः (सर्वश्री थॉमस एवं लंग)

1. परमाणु सद्रूपेण अनश्वररूपेण, अविभाज्य रूपेण चास्ति।
2. परमाणूनां संयोगेन ब्रह्माण्डस्य रचना अभवत्। अत्र नैतिक प्रकृतिः आत्मा परलोक व्यक्तिगतामरत्वमित्यादयः सर्वे भ्रममूलकाः विद्यन्ते।
3. सृष्टौ कार्यकारण सम्बन्धेन परिवर्तनं जायते।
4. सृष्टितः प्राप्तः सर्वमेव वस्तु उत्तममेव, परन्तु मानवं प्राप्य तद् भ्रष्टं जायते।
5. 'विश्वं' एकं बृहदन्त्रम् अस्ति, तत्र विज्ञानमेव ज्ञानं प्रददाति।
6. प्रकृतिपदार्थः भौतिक जगच्च वास्तविकाः सन्ति।
7. अनिश्चितस्य भविष्यस्य कृते निश्चितं वर्तमानं न त्यक्तव्यम्।
8. प्रत्यक्षमेव प्रमाणं नान्यत्।

शिक्षायां प्रकृतिवादः

शिक्षायां प्रकृतिवादस्य विभिन्नानां स्वरूपाणां प्रभावः पृथक् रूपेण द्रष्टुं शक्यते।

प्रकृतिवादः मानव प्रकृतिं प्राधान्यं प्रददाति। तस्मिन् मते मानवप्रकृतेः उदात्तीकरणमेव शिक्षा इति मन्यते। प्रकृतिवादी विचारधारायां सर्व प्रकृतौ एव निहितं वर्तते। अस्य शिक्षायां कथं प्रभावः जायते, तन्निम्नलिखितरूपेण द्रष्टुं शक्यते-

पदार्थवादी प्रकृतिवादी - अस्यमते अण्वेव सत्यं शाश्वतं, तदविरक्तं कस्यचिदपि सत्ता नास्ति। शिक्षाक्षेत्रे अस्य प्रयोगः नाधिकम भवत्।

यन्त्रवादी प्रकृतिवादी - अस्मिन् मते संसारः, संसारिणश्च एकः यन्त्र तस्यावयव सदृश सन्ति। संसारः एक प्राणहीनं यन्त्रमस्ति, यस्य रचना पदार्थेन तस्य गतिशीलतया चाभवत्। अस्मिन् यन्त्रे चैतन्यं, आध्यात्मिक तत्त्वं, इच्छाशक्ति अथवा विचारशक्तिन भवति। एवं प्रकारेण यन्त्रवादी प्रकृतिवादानुसारेण व्यवहारवादी मनोविज्ञानस्य जन्म अभवत्। यस्य शिक्षायां पर्याप्त प्रभावः संजातः।

जीवनवादी प्रकृतिवादी - अस्यां विचारधारायां मानवः सर्वोत्कृष्टः विकसितः जीवः वर्तते। सिद्धान्तोऽयं विकासवादस्य सदृशः अस्ति। विकासवादस्य द्वौ सिद्धान्तौ स्तः-

1. जीवनं संघर्षणाय।
2. शक्तिमानः जीवेत्।

एतयोः सिद्धान्तयोः प्रणेता क्रमशः डार्विन एवं लैमार्क अस्ति। अस्य सिद्धान्तस्यापि शिक्षायां अधिकं प्रभावः अभवत्।

प्रकृतिवादस्य शिक्षायामनुप्रयोगः -

1. **प्रकृतिमनुसर** - प्रकृतिवादिनः शिक्षया बालकः सुसाध्य सुसंस्कृतश्च भवतु इति न वाञ्छन्ति। बालकेन न किञ्चित् नूतनमभ्यसनीयम्। प्रकृत्या यथा वर्तते तथैव वर्तितव्यम्।
2. **पुस्तकीय ज्ञान विरोधः** - प्रकृतिवादिनः पुस्तकीय ज्ञानस्य विरोधं कुर्वन्ति। पुस्तकीय ज्ञानं कृत्रिमं भवति। तथा च तेन अधिगम स्पष्टं न जायते इति तेषामभिप्रायः। प्रकृतिवादिनः वदन्ति यत् प्रकृतिं प्रति पुनर्गच्छ इति।
3. **निषेधात्मक शिक्षा** - निषेधात्मक शिक्षायां गुणानां शिक्षा न दीयते। गुणानां शिक्षा तु प्रकृति विरुद्धं भवति इति तेषामभिप्रायः। निषेधात्मक शिक्षायां सत्यस्य शिक्षा न दीयते अपितु असत्यात् दूरे स्थातुं निर्देशः क्रियते। अर्थात् - सत्यं वद। धर्मं चर। इति एवम् उपदेश शिक्षा न दातव्या, किन्तु असत्यं मा वद। अधर्मं मा चर। इत्यादि रूपेण निषेधात्मक शिक्षा दातव्या इति प्रकृतिवादिनः अभि प्रथन्ति।
4. **पूर्णस्वातन्त्र्यम्** - प्रकृतिवादिनः उद्घोषयन्ति यत् शिक्षणप्रक्रियायां बालकस्य पूर्ण स्वातन्त्र्यं स्यात्। मनुष्यः स्वतन्त्ररूपेण जन्म ग्रहण करोति अतः तस्य कृते स्वातन्त्र्यं नितरामपेक्षते। इति ते वदन्ति।
5. **बालकेन्द्रिता शिक्षा** - प्रकृतिवादिनः विषयकेन्द्रितशिक्षा, परीक्षाकेन्द्रित शिक्षा, अध्यापक केन्द्रित शिक्षायाश्च स्थाने बालकेन्द्रित शिक्षां स्वीकुर्वन्ति। जान एडम्स महोदयः सर्वप्रथमं बालकेन्द्रित शब्दस्य प्रयोगमकरोत्। सः बालकेन्द्रित अभिवृत्तेः प्राददात्।

अतः उपर्युक्त विवरणेन स्पष्टीयते यत् प्रकृतिवादेन शिक्षायाः क्षेत्रे यदपि योगदानं प्रदत्तं

तदत्यन्तं महत्वपूर्णं विद्यते। तस्य महत्तामस्वीकर्तुं न शक्यते। प्रकृतिवादिनः एव रूढिवादी प्रणालीं विहाय, बालकस्य शिक्षां बालमनोविज्ञानं तथा विकासात्मक मनोविज्ञानाधारित-शिक्षां कृतवन्तः।

भारतीय शास्त्रेषु शिक्षायाः तत्त्वानि

सुषमा

अनुक्रमाङ्कः : 02

शिक्षायाः अर्थः - महावैयाकरणप्रमाणभूत-आचार्यपाणिनेः मतानुसारेण शिक्षा विद्योपादाने” इत्यस्मात् धातोः गुरोश्च हलः” इति सूत्रेण अ-प्रत्यये” कृते स्त्रीत्वे विवक्षिते शिक्षाशब्दः निष्पद्यते। यस्यार्थः भवति शिक्षणम्। शिक्ष्यते अनया शिक्षा” अथवा शिक्षयति या सा शिक्षा”। यदि वयं सूक्ष्मदृष्ट्या सुष्ठुतया परिलोकयामः चेत् शिक्षा नाम काचित् अपूर्वा शक्तिः वर्तते या संयमस्य साधयित्री, दमस्य दात्री, धर्मस्य धात्री मार्गदर्शिनी सत्यासत्यविवेचनी पथप्रदर्शिनी च वर्तते।

शिक्षायाः तत्त्वानि - प्राचीनकाले तपोनिष्ठः गुरुः स्वतपसा बलेन सर्वेभ्यः शिष्येभ्यः गूढ विषयाणां ज्ञानं प्रददाति स्म। शिष्या अपि श्रवणमननरीत्या श्रद्धया ब्रह्मचर्येण च अधीतविषयान् आत्मसात् कुर्वन्ति स्म। अर्थात् प्राक्काले शिक्षा द्विमुखी प्रक्रिया आसीत्। परन्तु शिक्षायाः चतुर्दश प्रमुखानि तत्त्वानि आसन्। यथा -

गुरुः, शिष्यः, पाठ्यविषयः, वेशभूषाः, दिनचर्या, गुरुशिष्यसम्बन्धः, दण्डव्यवस्था, यज्ञोपवीतसंस्कारः, वेदारम्भसंस्कारः, अनुशासनम्, गुरुशूश्रूषा, शिक्षासत्रम्, भोजनव्यवस्था, गुरुदक्षिणा च।

एतैः सम्यक्तया सरलतया च विद्याध्ययनं सम्भाव्यते इति।

गुरुः - गुरुः स्वकीयगुणकर्मस्वभावानुगुणम् अनेकैः उपनामभिः समाजे परिचितः भवति।

यथा - आचार्यः, अध्यापकः, उपाध्यायः, प्राध्यापकः, शिक्षकः इत्यादयः।

आचार्यः - समाजेऽस्मिन् आचार्यशब्दः लब्धप्रतिष्ठितः गरीमामयपदेन सुशोभते। अतः महर्षिणा यास्केनापि स्वस्मिन् ग्रन्थे आचार्यपदं सुष्ठुतया विवेचितम्- आचार्यः कस्मात्? आचारं ग्राहयति आचिनोति अर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा आचार्यः।

यद्यपि आचार्यः एकैव भवति परन्तु शिष्येभ्यः ज्ञानप्रदानसमये विभिन्नरूपाणि धारयति। यथा अथर्ववेदेऽपि उक्तमस्ति यत् - आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम यः पयः।

अध्यापकः - वर्तमानकाले अध्यापकशब्दस्य व्यवहारः बहुशः भवति। तर्हि कः अध्यापकः इत्युक्ते यः सम्यक् पाठयति अथवा अधीयानं प्रेरयति स एव अध्यापकः इत्युच्यते। महाकविकालिदासोऽपि स्वस्मिन् ‘मालविकाग्निमित्रम्’ नामकनाटके एकस्य सुयोरयाध्यापकस्य स्वरूपं चित्रयति-

श्लिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था

संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता।
यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां
धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव॥

शिष्यः - शासितुं योग्यः शिष्यः” अर्थात् सदाचारे अनुशासने यः तिष्ठति सः शिष्यः कथ्यते। शिष्यशब्दस्यापि अनेके समानार्थशब्दाः भवन्ति। यथा - अन्तेवासी, छात्रः, विद्यार्थी इत्यादयः।
सम्बन्धः - गुरुशिष्ययोः सम्बन्धः गंगाजलसदृशः अतिपवित्रः पितापुत्रवत् अस्ति। तैत्तिरीयोपनिषदि अपि द्वयोः सम्बन्धं प्रतिपादयन्नाह - आचार्यः पूर्वरूपम्। अन्तेवास्युत्तररूपम्। विद्या सन्धिः। प्रवचनं सन्धानम्।

गुरुशुश्रूषा - भारतीयसंस्कृतौ गुरुशुश्रूषा एकं दैनन्दिनं कर्तव्यं भवति। शुश्रूषां विना शिष्यः स्वकीयजीवने अफलीभूतः भवति। अतः सामाजिकव्यवस्थापरिवर्तकैः आचार्यचाणक्यैरपि उक्तम् - गुरुशुश्रूषया विद्या।

गुरुदक्षिणा - विद्याभ्यासानन्तरं दीयमानशास्त्रान्विता एका महत्वपूर्णा प्रक्रिया गुरुदक्षिणा इत्युच्यते। यां विना अधीतविद्याः तेजस्विन्यः भवितुं नार्हन्ति। शिष्यः स्व - सामर्थ्यानुसारं किमपि अवश्यं ददाति स्म। यथोक्तम् -

क्षेत्रं हिरण्यं गामश्वं छत्रोपानहनासनम्।
धान्यं शाकं च वासांसि गुरवे प्रीतिमावहेत्॥
एकमव्यक्षरं यस्तुगुरुः शिष्ये निवेदयेत्।
पृथिव्यां नास्ति तत् द्रव्यं यत् दत्त्वा चानृणी भवेत्॥

निष्कर्षः - प्राचीनकाले उपयुक्तैः तत्त्वैः एव बालकस्य सर्वाङ्गीणविकासः क्रियते स्म।

विवेकानन्दस्य शिक्षादर्शनम्

कृष्णप्रिया साहु

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

तमात्मविश्वासवलेन विश्वं सद्धर्ममार्गे पुरतो नयन्तम्।

स्त्रीशिक्षणे न्यस्तमतिं विवके मानन्दमेकं मनसा नमानि॥

जीवनवृत्तम् - भारतवर्षे समाजसुधारकेषु मूर्धन्यस्थानं भजमानः अयं महात्मा कलकत्तानगरस्य सोमुलिया-पल्ली-नामकग्रामे 1963 व्या.स. जनवरीमासस्य द्वादशदिनाङ्के सायं काले जनिं लेभे। जात्या वङ्गक्षत्रियः आसीत्। अस्य पितुः नामः विश्वनाथ दत्तः माता भुवनेश्वरी चास्ताम्। नामकरणसमये तस्य नाम ‘नरेन्द्रनाथः’ इति आसीत्। तस्य गुरुः रामकृष्णपरमहंसः आसीत्। सः अतीव विद्वान् आसीत्। 1902 व्या.सं जुलाई मासे सः स्वशरीरं विहाय गतवान्।

जीवनदर्शनम् - स्वामीविवेकानन्दस्य जीवनदर्शने स्वामिरामकृष्णपरमहंसमहोदयस्य प्रभावः आसीत्। विवेकानन्दः वेदान्तदर्शनं मुख्यत्वेन स्वीचकार आत्मविश्वासेन आत्मावलोकनं ततः ब्रह्मज्ञानं तत् पश्चात् मोक्षप्राप्तिः इति तेषामाशयः आसीत्। एतेषां जीवनदर्शनं न केवलं

भारतीयदर्शनेन प्रभावितम् अपितु पाश्चात्यवैज्ञानिकप्रगत्या अपि प्रभावितम् आसीत्। एते ईश्वरः, जगत्, ध्यानम्, मस्तिष्कम्, व्यक्तित्वम्, आत्मविश्वासः, लक्ष्यम्, चरित्रम्, मूल्यम्, विचाराः, भावः, प्रेम इत्यादि विषये बहुत्र चर्चा कृतवन्तः, उत्तिष्ठतः जाग्रत स्वीयप्रतिभां च प्रदर्शयत इति सः वदति।

शिक्षादर्शनम् – या पद्धतिः विद्यार्थिभ्यः स्वावलम्बनमार्गं न ददाति सा शिक्षापद्धतिः ‘शिक्षा’ इत्यभिधानम् प्राप्तुं कथं समर्था? स अवोयत् यत् – मानवान्तर्निहितदैवात्मस्वरूपाभिव्यञ्जनमेव शिक्षा” इति। अर्थात् ज्ञानं गुप्तरूपेण अस्माकं मस्तिष्के भवति। मस्तिष्कः एव विश्वपुस्तकालयः भवति। शिक्षा तस्य अनावरणं करोति। अतः वहिः न किमपि आयाति अपितु अन्तस्था एव अभिव्यक्ता भवति। पुस्तकानां पठनेन न ज्ञानोदयः किन्तु आत्मज्ञानेनैव ज्ञानोदयः भवति।

आत्म-शिक्षाविषये विवेकानन्दः वलम् अददत्। बालकस्य आत्मा एव उत्तमशिक्षकः भवति। अतः स्वयं बालकः आत्मावलोकनेन अथवा आत्म-शिक्षया अधिगच्छेत् बालकानां बालिकानां च समाना शिक्षा भवेत्।

शिक्षा उद्देश्यानि – स्वामीविवेकानन्दस्य शिक्षोद्देश्यानि अतीव गुरुत्वपूर्णानि आसन्। मनुष्ये मानवप्रेम, समाज-सेवा विश्वचेतनाजागरणं भवेत्। आत्मावलोकनेन मुक्तिः मनुष्यस्य शारीरिक-मानसिक-धार्मिक-नैतिक-चात्रिक-सामाजिकविकासः करणीयः मानवस्य अन्तर्निहितायाः पूर्णतायाः अभिव्यक्तिः भवेत्।

स्वामिविवेकानन्दस्य शिक्षादर्शनम् अतीव महत्वपूर्णम् आसीत्।

शिक्षकत्वम्

जितेन्द्र गौतमः

अनुक्रमाङ्कः : 26

यः शिक्षयति सः शिक्षकः। शिक्षकः तादृशस्य व्यक्तित्वस्य संज्ञा अस्ति, यस्य तुलना ईश्वरेण सह क्रियते। उक्तञ्च-

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परब्रह्मः तस्मै श्रीगुरवे नमः॥”

शिक्षकः एव छात्राणां मार्गदर्शको भवति। शिक्षकः छात्रान् मार्गे चलितुं प्रेरयति। आचार्यान् एव छात्राः आचारस्य ग्रहणं कुर्वन्ति। शिक्षकान् एव छात्राः अनुशासने भवन्ति। अतः शिक्षकस्य अनुशासनम् अपि च आचारः एतद्वयम् उत्तमं स्यादिति।

गुणाः – शिक्षकः राष्ट्रनिर्माता भाग्यनिर्माता च भवति। यथा अस्माकं पुरातनाचार्याः कौटिल्यादयः, यैः राष्ट्रस्य भाग्यस्य च निर्माणं कृतं वर्तते। शिक्षके तादृशं नेतृत्वं भवेत् येन छात्राः स्वयमेव तस्य अनुकरणं कुर्युः। प्रसिद्ध-शिक्षकः स एव भवितुमर्हति यस्य सम्प्रेषण-कौशलम् उत्तमं स्यात्। उक्तञ्च कालिदासेन शिल्पाक्रिया कस्यचिदात्मासंस्था, संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता, यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव।

सम्प्रेषण-कौशलेन सह शिक्षकस्य अधिगमः अपि आवश्यकः वर्तते। सम्प्रेषण-कौशलमपि च

अधिगमः (ज्ञानम्) यस्य एतद्वयं भवति सः शिक्षकः उत्तमशिक्षकेषु परिगण्यते।

वर्तमान समाजे शिक्षकस्य भूमिका

अद्यत्वे शिक्षकाः कर्तव्यच्युताः सन्ति। स्वकर्तव्यं प्रति जागरूकाः न सन्ति। केचन तु ज्ञानरहितारपि सन् शिक्षकाः सन्ति। यस्य शिक्षकस्य, स्वस्य अधिगमः नास्ति सः कथम् अन्यान् अधिगमयितुं समर्थः? अतः शिक्षकः प्रप्रथमम् अधिगमनं कुर्यात् स्वविषये दक्षतां प्राप्नुयात्। यावत् शिक्षकः दक्षः नास्ति तावत् सः अध्ययनं कारयितुं न शक्नोति। ये च ज्ञानवन्तः दक्षाश्च सन्ति, तेपि वृत्तिं प्राप्य त्यक्तपरिश्रमाः भवन्ति। यावत् वृत्तिं न प्राप्यते तावदेव पठने-पाठने च परिश्रमं कुर्वन्ति; किन्तु वृत्तिप्रारब्धे सति पठनं-पाठनञ्च त्यजन्ति। वर्तमान-समाजे शिक्षकस्य भूमिका एतान् बिन्दून् अधिकृत्य एव वर्तते। शिक्षके नेतृत्वं, सम्प्रेषण-कौशलं, दक्षता च तादृशी भवेत्। येन छात्राणां कल्याणं भवेत्। शिक्षकः मनोवैज्ञानिकः भवेत् येन छात्राणां भावानां ज्ञानं कृत्वा स्थितेः समाधानं कर्तुं सज्जः स्यात्। शिक्षकः एव कर्तव्यानां ज्ञानं कारयितुं शक्नोति। समाजस्य आवश्यकता का, समाजे कस्य नियोजनं कुत्र भवेत्? एतेषां विषये शिक्षकः समग्रं चिन्तनं कर्तुं शक्नोति। एवम्भूतेन शिक्षकेण समाजः राष्ट्रश्च द्वावपि उपकृतौ भविष्यतः।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ ॐ शम्।

भारतीय शिक्षापद्धतिः

नेत्रानन्द महापात्र

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

इदानीतन शिक्षाप्रणाली परतन्त्रकालीन शिक्षाप्रणालीमनुसरति। अस्याः प्रणाल्याः प्रणेता लर्ड मेकाले वर्तते। यः भारतस्य- प्राचीन शिक्षा पद्धतिं विनश्य आंग्ल शिक्षापद्धतिं नियोजितवान्। प्रणाल्यामस्यां केवलं देशस्य विनाशकाः एव प्रजायन्ते। इयं प्रणाली मूल्यहीना वर्तते, अत्र बालकानां आत्मिक-शारीरिक मानसीकोन्नतिः न भवति। भारतस्य प्राचीन ज्ञान-विज्ञानस्य विनाशाय आंग्लशासनकाले इयं प्रणाली लर्ड मेकाले नियोजितवान्।

प्राचीनकालेशिक्षायाः महत्त्वम् -

प्राचीनकाले शिक्षायाः स्थानं सर्वोपरी आसीत्। सभ्यतायाः, संस्कृतेः, शिक्षायाः च विकासः सर्वप्रथमे भारतदेशे एव अभवत्। पाश्चात्याः अपि निज ज्ञान-विज्ञान-चरित्र शिक्षणाय भारतमायान्ति स्म। यत् वर्णयता महाराजेन-मनुना मनुना निगदितम्-

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

प्राचीनकाले शिक्षायाः स्थानं ऋषीणामाश्रमाः गुरुकुलाश्चासन्। यत्र सर्वविध शिक्षा प्रदीयते स्म। सर्वेऽपि छात्राः तपस्यापूर्वकं गुरुचरणे सश्रद्धं शिक्षां प्राप्नुवन्ति स्म।

मध्ययुगे शिक्षाप्रणाली -

अष्टादश-नवदश शताब्द्याम् यवनाः आगत्य अरबी-फारसी शिक्षायाः च - प्रसारम् कुर्वन् यत्र केवलं धनिकाः सामान्ताश्च शिक्षाग्रहणाय अर्घः आसन्। शुद्धेभ्यश्च शिक्षा न दीयते स्म। तदा शिक्षाऽसीत् राजाधीना। तदा 'स्त्रीशुद्धो नाधीयताम्' इति कुरीतिः यत्र तत्र सर्वत्र भारतदेशे प्रचलति स्म। इमां कुरीतिं निवारणाय स्वामीदयानन्द, श्रद्धानन्दादयः महापुरुषाः आत्मानूमाहुतं कृतवन्तः सर्वेभ्यश्च पठनार्थं प्रेरितवन्तः।

नूतन शिक्षाप्रणाली -

सप्तचत्वारिंशद्वत्तरनवदशशततमेऽष्टादशदिनांके अस्माकं देशः स्वतन्त्रोऽभूत्। स्वातन्त्र्यप्राप्त्यनन्तरं येऽपि देशस्य कर्णधाराः अभवन् ते सर्वे संस्कृतिं सभ्यताम् च न जानन्तः मेकाले शिक्षापद्धतिं नियोजितवन्तः। पुनः अनेकैः आयोगैः इदानीं शिक्षापद्धतिः प्रचलति। यत्र छात्राः गणित-विज्ञान-इतिहासादीनं समेषां विषयाणां शिक्षा तु प्राप्नुवन्ति परं आचार-अध्यात्म-व्यवहार-चरित्रस्य च शून्याः मानवदेहधारिणः पशवः इव नाना भ्रष्टाचारान् कुर्वन्ति।

समेषामपि दुराचाराणां मूलं भवति धर्महीन शिक्षा। मानवस्य निर्माणं सुशिक्षया भवति। यया खलु शिक्षया प्राचीनकाले मानवानां निर्माणं भवति स्म। तदत्र सर्वकारेण सामाजिकैश्च चिन्तनीयं यत् यदि सर्वे पुनः इमाम् पुण्यभूमिं गौरवान्वितं दिदृक्ष्यन्ते चेत् चरित्रवतो मानवानां निर्माणं नूनं विधातव्यम्। अतः शिक्षाप्रणाली निश्चयेन सुधारणीया।

मधुरं भाषणम्

प्रभात कुमार नायक

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

सकल प्राणिषु मानवः श्रेष्ठः। तदर्थं भाषामानवस्य कृते दैवी वरदानः भवति। भाषायाः उपरि मानवस्य एव अधिकारः अस्ति। परन्तु पशूनां न भवति। मानवाः पशुभ्यः शारीरिकबलेन दुर्बलः भवन्ति। परन्तु स्वस्यबुद्धिः भाषा बलेन च सर्वेषु शक्तिशालीः भवन्ति। सः पृथिवी, जलम्, अग्नि, आकाश वायोपरि च विजयं लाभः करोति। भाषायाः ज्ञानं अनुभवभण्डारस्य च सुरक्षिताः भवन्ति। भाषया अस्माकं सहयोगभावं सामाजिकभावस्य उन्मेषः भवति। सावधानेन सह भाषाव्यवहारं कुर्याम। मधुरं वचनेन शत्रुः अपि मित्रवत् भवति।

मधुरवचनं हृदः कपाटं उन्मोचयति। अस्य आकर्षणः शक्तिं पृथिव्याम् माध्याकर्षणः शक्तिः चुक्ककीय शक्तेः च अपि बलवान् भवति। कोकिलः कस्मै किञ्चित् न ददाति। काकोऽपि कस्मै किञ्चित् न नेष्यति। किन्तु कोकिलः स्वस्यमधुरं वचनेन सर्वेषां हृदयम् द्रभीभूतः करोति। मन आनन्दं करोति।

एकाकथा वयं विभिन्न शैल्या वदेम स्मृति मधुरवचनम् भाषायाः यदि परिवर्तनं मधुरात् कटुः भवति, तर्हि कस्मै न रोचते।

कादम्बर्याः रचयिता बाणभट्टस्य पुत्र समुखे स्तित्वा शुष्कवृक्षस्य वर्णनं भिन्नं-भिन्नं शैल्यां कृतवन्तौ। सुतरां ज्येष्ठ पुत्रः उक्तवान्- शुष्ककाष्ठं तिष्ठत्यग्रे”। अर्थात् समुखे शुष्कं काष्ठं अस्ति। तस्य उक्तिं पुनस्च कनिष्ठ पुत्रः भिन्न शैल्याम् अवदत्-निरस तरुवर विलसति पुरतः”। अर्थात् समुखे निरसः वृक्षः शोभते। भिन्न शब्द संयोजनाद्वारा अभिव्यक्त उभयोः प्रभावः भिन्नं भिन्नं अभवत्। बाणभट्ट कनिष्ठपुत्रस्य भाषायाः मधुरतां लक्ष्यं कृत्वा कादम्बरी ग्रन्थं चमत्कारीजादुः निहितं भवति। मधुर वचनेन विस्वासः उत्पन्नः भवति। भीतोऽपि न भवति। मधुर वचनेन सह हृदः सह भावनायाः संयोग आवश्यकम् अस्ति।

अतः वक्तुं शक्यते- **परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम्।
वर्जयेत्त्रादुशं वन्धुं विषकुम्भं पयोमुखम्”॥**

मनकर्मवचने यस्य सामञ्जस्यम् अस्ति। सः मनुष्यः अवश्यं वन्दनीयः भविष्यति। किञ्चित् कार्यं आनन्देन कुर्युः उदारता प्रसन्नता च पूर्वकं कुर्युः। वचनं कदापि दारिद्र्यता न कर्तव्या। अत्र कथितमस्ति-

**प्रियवाक्य प्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।
तस्माद् परिहर्तव्यम् वचने का दारिद्र्यता”॥**

व्याकरण शिक्षणम्

विकाश कुमार पाण्डेय
शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

‘व्याकरण’ शब्दः ‘वि’ उपसर्गपूर्वक कृधातोः ल्युट्प्रत्ययेन निष्पन्नः अभवत्, यस्य तात्पर्यः व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते अनेन इति व्याकरणम् अर्थात् येन द्वारा अर्थस्वरूपमाध्यमेन शब्दानां व्याख्या भवति। शब्दानां व्यवस्थितरूपं अर्थात् शुद्धरूपव्याकरणं विद्यते, शुद्धभाषां अधिगमाय व्याकरणम् आवश्यकमस्ति, व्याकरणं वेदस्य मुखं वर्तते यथा-

**छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
शिक्षाध्यानं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥**

परिभाषा - डा. स्वीटमहोदयानुसारेण - “व्याकरणभाषायाः व्यावहारिकं विश्लेषणं अथवा तस्य शरीरं विज्ञानमस्ति”।

लेनार्डह्यूमफील्डानुसारेण - “भाषायाः रूपस्य सार्थकम् एवं शुद्धा व्यवस्था एव व्याकरणमस्ति”।

व्याकरणस्य महत्त्वम् -

1. असाधुशब्दान् दूरीकृत्य साधुशब्दानां ज्ञानं क्रियते।
2. व्याकरणं सूत्रात्मकमस्ति।
3. व्याकरणभाषा साधनमस्ति साध्यं नास्ति।
4. व्याकरणं वास्तविकस्वरूपे शब्दानुशासनमेवास्ति।

5. व्याकरणभाषा स्वरूपस्य सार्थकव्यवस्थां करोति।

6. व्याकरणेन नवीनभाषां सरला भवति।

उद्देश्यानि प्राथमिस्तरे -

1. संज्ञासर्वनामविशेषणादीन् ज्ञानस्य योग्यता प्रदानं करोति व्याकरणशास्त्रम्।
2. छात्रान् विविधध्वीनां ज्ञानप्रदानम्।
3. शुद्धरूपाणां प्रयोगसम्पादनम्।
4. समानार्थानां विपरीतार्थानां शब्दानां ज्ञानकरणम्।

उद्देश्यानि माध्यमिकस्तरे -

1. उच्चारणं भाषिकस्वरूपस्य ज्ञानं क्रियते।
2. व्याकरणेन विद्यार्थिषु रचना तथा सृजनात्मकप्रवृत्तीनां विकासः क्रियते।
3. विभिन्नावयवानां ज्ञानं क्रियते।
4. मानकम् एवं शुद्धभाषायाः लेखनम्।
5. भाषायाः शुद्धाशुद्धानां रूपाणां ज्ञानम्।

व्याकरणस्य शिक्षणस्य विधयः -

निगमनविधिः - व्याकरणस्य नियमाः सूत्राणि प्रथमतः कण्ठस्थीकरणं तदनन्तरम् उदाहरणमाध्यमेन लक्षणस्य (सूत्रस्य) संघटनं भवति।

समवायविधिः - आवश्यकतानुसारेण पद्यशिक्षणगद्यशिक्षणरचना शिक्षणैः सह व्याकरणस्य नियमैः सह अपि छात्रान् परिचयप्रदानम्।

व्याकरणस्य मुख्योद्देश्यं शुद्धं रूपं प्रत्येकभाषायाः व्याकरणं भिन्नं भवति व्याकरणमाध्यमेन मानसिकविकासः स्वाभाविकरूपेण भवति, व्याकरणं भाषायाः अङ्गरक्षकः किमपि शास्त्रज्ञानाय प्रथमतः व्याकरणस्य ज्ञानम् आवश्यकं भवति, यं छात्रं व्याकरणस्य ज्ञानमस्ति सः शास्त्रं सरलतया ज्ञास्यति, बालकेभ्यः व्याकरणम् शुद्धोच्चारणम् लेखनं पठनमस्ति।

इयं विधिः व्याकरणस्य शिक्षणे अत्यन्तामहत्वपूर्णा विधिरस्ति।

आगमनविधिः - निगमनविधिः यादृशी भवति तद् विपरीतविधिः आगमनविधिः, प्रथमतः उदाहरणानि छात्राणां सम्मुखे उपस्थापनं भवति। तदनन्तरं ये प्रचलिताः नियमाः सन्ति तेषां नियमानां अभ्यासः भवति अस्य विधेः प्रयोगः उत्तमः अस्ति, कारणमेतद् भवति छात्राः ध्यानपूर्वकं शृण्वन्ति, एवं सम्यक्तया अवबुध्यन्ते।

सूत्रविधिः - अनेन विधिना व्याकरणस्य नियमाः सूत्ररूपेण कण्ठस्थीकरणं भवति।

अनेन विधिना पूर्वं सूत्राणां कण्ठस्थीकरणम् आवश्यकं भवति तदनन्तरं तेषां लक्षणानां उदाहरणानां ज्ञानं प्रदीयते अयं विधिः अमनोवैज्ञानिकी विधिरस्ति अयं विधिः छात्राणां कृते बहूपयुक्तः नास्ति।

पाठ्यपुस्तकविधिः - अस्मिन् विधौ अपि व्याकरणस्य पुस्तके याः परिभाषाः सिद्धान्ताश्च भवन्ति, तेषां कण्ठस्थीकरणं भवति, अयं विधिरपि उपयोगी नास्ति प्रयोगात्मकपक्षस्य दर्शनं न भवति।

प्रयोगविधि: - अनेन विधिना व्याकरणपाठनसमये समाजान्तर्गते परिस्थित्यन्तर्गते अनेकानि उदाहरणानि क्षेत्रस्य पार्श्वे भवन्ति अस्य विधे: चत्वारि सोपानानि-

1. उदाहरणम् - प्रस्तुतप्रकरणेन सम्बन्धितानि अनेकानि उदाहरणानि बालकानां प्रत्यक्षं अवलोकनं भवति।

2. तुलना एवं विश्लेषणम् - तेषां उदाहरणानां परस्परं तुलनात्मकम्।

3. नियमीकरणम् - लक्षणा एवं विशेषतायाः आधारे नियमः निष्कर्षप्राप्तिः।

4. परीक्षणं एवञ्च अभ्यासः - निष्कर्ष एवञ्च नियमानां दृष्ट्या प्रयोगकरणम्।

निष्कर्षः - व्याकरणं सूत्रात्मकं न स्यात् व्यावहारिकम् अपि अत्यन्तावश्यकं व्याकरणस्य शिक्षा भाषाशिक्षणस्य अनिवार्याङ्गं वर्तते, व्याकरणं भाषायाः व्यवस्थितरूपं व्याकरणमाध्यमेन बालकाः शुद्धानि रूपाणि जानन्ति, व्याकरणं भाषायाः संगठनं करोति।

महाभारते नैतिकशिक्षायाः स्वरूपम्

सत्येन्द्र कुमार शर्मा

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

रामायणमिव, महाभारतमपि ऐतिहासिक कथामाधारीकृत्य वेदव्यासमुनिना विरचितम्। महाभारतं रामायणमित अस्माकं राष्ट्रियः इतिहासः। संस्कृतजगति सर्वबृहत् महाकाव्यमिदम्। अस्मिन् काव्ये 100000 श्लोकः सन्ति। अस्मिन् ग्रन्थे न केवलं उद्देश्यं कौरवपाण्डवयोः सम्प्रदायस्य वर्णनम् अपि तु भारतीय शिक्षायाः सविस्तरं चित्रणमपि तदीयं प्रमुखं लक्ष्यं विद्यते। प्राचीनकालादेव ग्रन्थोऽयं जीवनस्य समस्यानां समाधाने मनोयोगपूर्वकं संलग्नः वर्तते। यथोक्तं वेदव्यासेन -

नास्ति विद्यासमं चक्षुः नास्ति सत्यसमं तपः।

नास्ति रागसमं दुःखं नास्ति त्याग समं सुखम्॥

भारतीय गार्हस्थ जीवनपद्धतिः सम्पूर्णस्य विश्वस्य शिक्षिका किल इयं पद्धतिः आनन्ददा सुखदा समृद्धिदा खलु।

महाभारते उक्तं च -

नास्ति त्यागसमं सौत्यं नास्ति त्यागसमं तपः।

नास्ति त्यागसमं वित्तं नास्ति त्यागसमं फलम्॥

पुराणोक्तस्य सनातनधर्मस्य कश्चन प्रधानः व्याख्यानकारः व्यासः इति उच्यते। हिन्दवः भारतीयसंस्कृतिः च यावत् पर्यन्तं तिष्ठति तावत् पर्यन्तम् एतस्य नाम अमरम् एव जगति एव एषः महान् श्रेष्ठा पथप्रदर्शकः शिक्षकः च इति उच्यते।

अद्यत्वे कृतस्य भारतवर्षस्य वातावरणं द्विषितं सञ्जातं अस्ति सदाचारः तु अन्धतमसि निमग्नः सदृश्यते। काले अस्मिन् आचार शिक्षायाः भवति च आवश्यकता। यतोहि आधारं बिना संस्कारं बिना राष्ट्रनिर्माणं सर्वथा भवत्यसम्भवम्।

यथोक्तं तत्र महाभारते -

तस्मात् सत्यव्रताचारः सत्यव्रतपरायणः।

सत्यकामः समो दत्तः सत्येनैवान्तको भवेत्॥

सर्वत्रास्ति भ्रष्टाचारः दुराचारः तत्र तु सत्यपरायणेन युववर्गेण भाव्यमिति यतोहि सत्ये एव लोकोऽपि प्रतिष्ठितः चास्ति। अद्यत्वे समाजस्य मार्गदुष्टा ब्रह्मणः एव भ्रष्टः विस्मृतमार्गः वा विद्यते। अत एव वर्णेषु प्रधानः एव एतादृशः तर्हि अन्यस्य का कथा। समयेऽस्मिन् महाभारतस्य आदर्शवाक्यं तान् प्रति आवश्यकमस्ति।

यथोक्तं तत्र -

निवृत्तिः कर्मणः पापात् सततं पुण्यशीलता।

सादविधश्च समुदाचारः श्रेय एतदसंशयम्॥

मनुष्यस्याभूषणं भवति मधुरा वाक्। मधुर वाचा जनः परान्पि जयति शोभनश्चापि व्यवहारः हरति जन मनांसि। अत एव सदव्यवहारिणा भाव्यमिति कथितं शान्ति पर्वणि-

मार्दवं सर्वभूतेषु व्यवहारेषु चार्जवम्।

वाक् चैवमधुरा प्रोक्ता श्रेयएतद् संशयम्॥

स्त्रीणां कृते नैतिकता

भारतीया संस्कृत्यां स्त्री पूजनीया अस्ति। यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः तदवच्चापि निगदितं तुष्टे भर्तरि नारीणां तुष्टाः स्युः सर्व देवता। यथा मतिं बिना नैष्कलं जीवनं नारीणां तदवच्चापि भार्याम् विना नृणामपि पतिरेव देवः नार्याः। पाश्चात्यदेशेषु तु गार्हस्थ जीवनं सर्वथा छिन्नं दृश्यते। अस्य मूल-कारणं नारीणां उपेक्षैव। तत्र तु भार्याः अनुदिनं वस्त्रमिव परिवर्तनीयाः सन्तीति। तेषां अन्धानुकरणं कर्तुं चेष्टान्तेऽत्रापि एतादृशानां भ्रमितभारतीयानां कृते महाभारतस्य नैतिकतत्त्वानि प्रचलितव्यानि सन्ति।

राज्ञां कृते नैतिकगुणः

अद्यत्वे राज्ञां तु विशेषतः नैतिकपतनं सज्जातं अस्ति तेषां कीदृशः धर्मः स्यादिति महती चिन्ता। अद्यतनीयां राजनीतिदर्शम् दर्शं सर्वजनाः सर्वा वा प्रकृतिः सर्वाश्च मानवजातयः चकिताः सन्ति तान् नृपान् प्रति महाभारतस्य नैतिकशिक्षां निर्दिशति यत्।

लोकरञ्जनमेवात्र राज्ञां धर्मः सनातनः”

इति शान्तिपर्वणि वर्तते।

धर्मेणहीनाः पशुभिः समाना

शकुन्तला वेहेरा

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

धृञ-धारणपोषणायोः इत्यस्माद् धातोः औणादिके मन्” प्रत्यये कृते धर्मशब्दो निष्पाद्यते। वेदः कथयति यत् अलौकिकशक्तेः बोधकः इति। ऋग्वेदस्य मतानुसारं धर्मः नियमव्यवस्थायाः द्योतको भवति। अथर्ववेदे धर्म शब्दस्यार्थे भवति पुण्यम्। महाभारतानुसारं धारणादेव धर्मः

इत्यर्थः।

धारणाद्धर्म इत्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः”

वस्तुतः येन माध्यमेन लोकानां धारणं सम्भवेत्, यश्च लोकानां सुनिर्वाहाय संसारं धारयेत् स एव धर्मशब्दवाच्यः। मनुना धर्मस्य दशलक्षणानि वर्णितानि यथा -

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।

धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्”॥

एतानि दशलक्षणानि वस्तुतः जीवनस्य उन्नायकानि। समाजस्य उत्थापकानि जनमानसहृद्यानि साधनानि विश्वशान्तिस्थापकानि च। धर्ममाध्यमेन मनुष्यः सुखं प्राप्य मोक्षं प्राप्नोति नास्ति सन्देहः, यो धर्मं चरति विपवपि च धर्मं न त्यजति। धर्मस्तं रक्षति। अतः धर्मा न हातव्यः न च हन्तव्यः सततं रक्षितव्यः। अतः भगवता मनुना उक्तं यत्-

धर्म एव हता हन्ति धर्मो रक्षति रक्षतः।

तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्”।

आहारः - निद्रा-मैथुनादिकं तु मनुष्येषु पशुषु चोभयोरपि समानमेव। मनुष्येषु धर्म एव एक एतादृशः गुणः, येन ते परमोपेक्षया उत्तमाः श्रेष्ठाश्च कथ्यन्ते।

अतएव धर्मशून्याः जनाः पशुतुल्या एव प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तम्-

आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।

धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः”॥

परोपकारस्य जीवने उपयोगिता

मंगल राम

अनुक्रमाङ्कः : 96

परिवर्तनशील संसारेऽस्मिन् मानवानां महत्ता परोपकारैव मन्यते। अतः परोपकारस्य अर्थः भवति निः स्वार्थ भावेन परेषां सहाय्यं करणीयम्। स्वकीय शरणे आगतः मित्र, शत्रु, कीट-पतंग, देशी-परदेशी, बालक-वृद्ध सर्वेषां दुःखस्य निवारण निष्काम भावेन करणीयमेव परोपकारः मन्यते। मनुष्यः एकः सामाजिक प्राणी अस्ति। परस्पर सहयोगं तस्य जीवनस्य एकः आवश्यकः महत्वपूर्ण अङ्गं वर्तते। प्राचीन कालात् एव मानवानां प्रवृत्तिः द्वयं कार्यं कुर्वन्ति। अत्र प्रथमा प्रवृत्ति भवति स्वार्थ साधनानां पूर्तिः द्वितीया परमार्थः। परमार्थ भावनया कृतं कार्यमेव परोपकार भवति गोस्वामी तुलसीदासेन उक्तमस्ति-

परहित सरिस धर्म नही भाई, पर पीड़ा सम नही अधमाई

परहित बसै जिनके मन माई, तिन्ह कहु जग दुर्लभ कहु नाही

यस्य हृदये परोपकारस्य भावना भवति ते संसारे किमपि कर्तुं शक्यते। तेषां कृते किमपि दुर्लभं नैव भवति। ईश्वर द्वारा निर्मितं सर्वे मानवः सवेषां परस्परं परस्पर प्रेम भावेन भूत्वा विपत्ति काले परस्पर सहाय्यं कुर्वन्ति। स्वकीय भोग विलासैव यदि मनुष्यः संलग्न भवति तद् पशु प्रवृत्तिरस्ति मानवमात्रैव सर्व आत्मसमर्पणीय कार्यकरणीय मानवः प्रवृत्तिः अस्ति

उक्तं च -

यही पशु प्रवृत्ति है, कि आप ही आप चरे

वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे

प्रकृतस्य सर्वस्मिन् क्षेत्रे परोपकाराय दर्शनं भवति सूर्यः सर्वेषाम् प्रकाशयन्ति, चन्द्रमा सर्वेषां शीतलता एवञ्च तापश्च हरति, मेघः सर्वेषां कृते वर्षा करोति, वायु सर्वेषां कृते जीवनदातृ अस्ति, पुष्पं सदा सर्वेषां कृते गन्धं वितरति, वृक्षाः कदापि स्व फलं नैव खादति, नद्याः कदापि स्व जलं नैव पिबन्ति एतादृशमेव सत्पुरुषः सदैव परेषां हितार्थं एव शरीरं धारणं कुर्वन्ति -

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः,

स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।

नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहाः,

परोपकाराय सतां विभृतयः॥”

परोपकारी व्यक्तिनामेव जीवनमेव आदर्शः मन्यते सः सदा प्रसन्नः एवञ्च पवित्रः भवति तस्मै कदापि आत्मग्लानि नैव भवति सः सदैव शान्त मनसि भवति परोपकारीणां सम्पूर्ण संसारमेव कुटुम्ब भवति- उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बम्” इति महर्षि व्यासेन उक्तमस्ति। परोपकारेण पुण्यम् अस्ति एवं च परेषां पीडा पाप उक्तम् यथा-

परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीडनम्”

इतिहास एवञ्च पुराणानाम् अनुसारेण अनेक महान् जनाः परोपकाराय स्वकीय शरीरस्य त्यागः कृतः वृतासुरस्य हनन कृते महर्षि दधिचि इन्द्रस्य कृते प्रणायाम माध्यमेन एव स्व शरीर अर्पित कृतः एतादृशमेव महाराज्ञः शिवि एकः कपोतस्य कृते स्वकीय शरीरस्य मांसः दत्तः -

आत्मार्थं जीवलोकेऽस्मिन् को न जीवति मानवाः

परं परोपकारार्थं यो जीवति सः जीवति।”

भगवतः विष्णुः परोपकार एवञ्च मोक्ष उभयो परिमाण कृत्वा दृष्टवान् तदा परोपकारस्यैव भार अधिकं दृष्टम् अतः भगवतः विष्णु परोपकारार्थं दश अवतारं गृहीतम्-

परोपकृति कैवल्ये लोलयित्वा जनार्दनः।

गुर्वीमुपकृतिं मत्वा ह्यवतारानदशाग्रहीत॥”

परन्तु वर्तमान समये मानवाः स्वकीय भौतिक सुखस्य प्रतिमेव अग्रसराः भवन्ति। इदं भौतिक सुखानाम् आकर्षणं मानवेषु गुण-दोषानां ज्ञानात् बहु दुरे कृतवान्। अधुना मनुष्य स्वकीय स्वार्थपूर्णाथमेव कार्यं कुर्वन्ति। अस्मिन् समये मनुष्यः किञ्चित् व्यये कृत्वा अधिकं लाभाः प्राप्तुं वाञ्छन्ति वर्तमान समये मानवाः जीवनस्य प्रत्येकं क्षेत्रं व्यवसाय इव पश्यति। एतदर्थं वदन्ति यत् परोपकार शून्यं मानवस्य जीवनं धिक्कार अस्ति तेः पशवः धन्यमस्ति येषां मरणानन्तरं चर्म उपयोगे आगच्छति यथा-

परोपकारशून्यस्यधिक मनुष्यस्य जीवितम्।

जीवन्तु पशवो येषां चर्माप्युप करिष्यति।”

वेदेशु कृषि विज्ञान

मल्लिका महान्त

अनुक्रमांक-89

वैदिक कार्याणां प्रमुखो अवसायः कृषिरासीत्, अनेनैव हेतुना तदानीन्तने समये कृषि कर्म अति उत्तम अवस्थां प्राप्तवान्। वेदस्य अथर्ववेदस्य अनेकेषु मन्त्रेषु प्रयुक्तः कृषि शब्दस्य मृदयः संकेत कोऽस्ति प्रचुर मात्रायाः शस्य प्राप्तयै वैदिकेणैव मृदायाः प्रकृतिः जलपूर्तेः सुविधाः सूक्ष्मतया परिशीलताः मृदायाश्चोर्वयः शक्ति वर्धनाथ प्रयासः कृताः। प्रचुरमात्रायाः शस्य प्राप्तेः तेषां वाञ्छाध्यर्व वेदस्य बहुषु मन्त्रेषु दृष्यते। यथा-

उदृत्स शतधारं सहस्र धारमासिकम्।

एवास्मावेदं धान्यं सहस्र धारमाक्षितम्। (अथर्ववेदः vi-59.1)

यतोहि वैदिक काले जनानां जीवनं सामान्यतया कृष्याश्रितमासीत् अतः तैः पृथिवी मातृवत् पूजिता सत्कृता च।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या (अथर्ववेदः vi-1.12)

अथर्ववेदे यत्रीहि प्रभूति बहुविधानामन्त्रानाम् एकं प्रकारकाणां औषधीनांच वर्णनं प्राप्यते।

यस्यामन्त्रं व्रीहियवौ यस्थाः इमाः पंच कुष्ठयः

भूम्यै पर्जन्यपत्नै नमोहस्तु वर्षमेदसे (अथर्ववेदः vii-1.42)

पर्वतात् संरक्षन्ति वर्षायाः कृतेऽनुकूल वातारणं रचयन्ति।

जिह्वायाः अग्रे मथु में जिह्वामूले मधुलकम्

मम देहकृतावासे मम चिन्तमुपायसि। (अथर्व- 1/34/02)

परं इदानीं कुत्र माधुर्यदर्शनम् परिवहनं यानां कटु कठोर ध्वनिः कणीन् पीडयति मामेषु आपणे प्रचार वाहनेषु सर्वत्र सर्वकालं गर्जनं तर्जनं भीषणं भाषणं पापसंगीतं विस्फोटनं जीवनं प्रासयात्, मात्र एकं तकयति। परन्तु सततं परिवर्धमानं एतद् ध्वनिः प्रदुषणां नगरे तथैव ग्रामेऽपि पादान् प्रसारयति।

नद्यो वै श्रुत्यतीयाः जगति परिचितं दुषितं मागंमम्भः।

स्वल्पक्षीरो विपन्नः श्रुतिं कथमपि प्रायषो धेनु वर्गः

नित्यं भुगषदक्षः पतति चनवनं वृक्षमूले कुठारः

वायुः श्वासाय नालं तर्दाप, तव सस्वेः श्वागतं हे वसत।

इन्द्रस्य या मही दृषत् क्रिमेविश्वस्य तर्हणी। तथा पिनगिमि स क्रिमीन् दृषदा सरलां इव।

(अथर्ववेदः 11.31.1)

इक्षोरपि संकेतं प्राप्यतेऽत्रः-

परि त्वा परितलुनेक्षुणागामविद्विषे

यथा मा कामिन्यसो यथा मन्नापमा असः । (अथर्ववेदः-1.34.05)

इत्यमथर्ववेद प्रासौर्वनस्पति विज्ञान सम्बद्धैः शुद्धरणैः एतद् ज्ञायते यत् तदानीन्तना आयीवनस्पति विज्ञानस्य प्रारम्भिक ज्ञानेन सुपरिचिता आसन् ।

भौतिकं पर्यावरणम्

नमिता महान्त

अनुक्रमांक- 82

‘परि’ आवरण इति अनयोः योगेन पर्यावरण शब्दः निष्पन्नः भवति । पृथिवी एकः विचित्रः ग्रहः विभिन्नरूपेण जीवनगतः विकासः अभवत् । पृथिवी परितः यत् नैसर्गिकम् आवरणम् अस्ति, तत् पर्यावरणस्य पर्यायवाचकः ।

वेष्टने परिवेषः स्याद् भानोः सविधमण्डले । अमरकोषे परिवेष इति शब्दः उपलब्धः परिवेशस्तु उपसूर्यकमण्डली । परितः विष्यते अनेन इति परिवेषः । परि विष् व्याप्तौ + घञ - परिवेषः । येन सर्वं व्याप्तं भवति स परिवेषः । जगत् परितः आवरणं पर्यावरणम् । सृष्टिप्रक्रियायां पञ्च महाभूतानि परस्परं संश्लिष्टानि । सूक्ष्मात् भूतात् स्थूलस्य भूतस्य उत्पत्तिः भवति । आकाशाद् वायुः वार्याः अग्निः, अग्नेः आपः अद्भ्यः पृथिवी । एवं भौतिक सृष्टिक्रमः । पृथिवी स्थूलतमा यत्र अन्यानि भूतानि संश्लिष्टानि सन्ति । पर्यावरणे एतानि भूतानि गृहीतानि वर्तन्ते । आकाशः वायुः अग्नि जलम्, पृथिवी च भूतानि पर्यावरणमध्ये एतेषां ग्रहणं भवति । Ecology, Oecology इति शब्दद्वयं Oikocs इति ग्रीक शब्दतः निष्पन्नम् यस्यार्थः गृहम् । संस्कृते ओकस्य शब्दः गृहपर्यायवाचकः । प्राणिजगतः उद्भिज्जगतः च व्यापकं गृहं भवति पर्यावरणम् ।

भौतिक- जैविकभेदेन पर्यावरणं द्विविधम् भौतिकपर्यावरणं पञ्चभूतानां, जैविके वृक्षाणां जीवानां च ग्रहणं भवति । प्राणिनः भूमेः भोजनं जलाज्जल वायुमण्डलात् प्राणवायुं च गृहीता जीवन्ति । भौतिक पर्यावरणस्य सुरक्षया जीवजगत् सुरक्षितं भविष्यति ।

पृथिवी- पृथिवी विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा जगतो निवेशनी (अथर्ववेदः 12,16) पृथिवी अस्माकं माता पृथिवी जीवजगत वृक्षजगत, रत्नानि खनिजद्रव्याणि च धारयति । पृथिव्याः संरक्षणेन सर्वे सुरक्षिताः भविष्यन्ति । भूमेः प्रदूषणेन रोगाः जायन्ते । वृक्षाणां वृथा छेदनेन अत्यधिक- रासायनिक कीटनाशकविषप्रयोगेण च भूमिः प्रदूषिता शक्ति हीना च भवति । भूतिः प्रकृतिः उच्यते । अतः तस्याः संरक्षणेन सर्वं संरक्षितं भवति ।

जलम्- जायते अस्मात् इति जम् लीयते अस्मिन् इति जलम् । यत्र जीवजगतः उत्पत्तिः ल्पयः च भवतः तद्भवति जलम् । एवम् अर्थस्य जलं प्रतीकं भवति । जलं सर्वत्र आप्नीति व्याप्तं भवति, अतः जलम् आपः इति उच्यते । पृथिव्यां यज्जलं प्राप्तं भवति, सूर्यरश्मिभिः वाष्पीभवनप्रक्रियया तज्जलं मेघे सञ्चितं भवति । वर्षाकाले वृष्ट्या तज्जलम् अन्नम् उदथावचति अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः इति गीतावचनम् । जले जीवनस्य बीजं सृष्टम् । अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजम् । (मनुस्मृतिः 1.8)

जलम् रस उच्यते। पर्वतेभ्यः प्रवहन्तीषु जलधारायाम् मृत्तिकाधातुखनिजलवणादिरसाः सञ्जरन्ति। अत्र जीवनस्य धारकं वर्धकं च तत्त्वं निहितमस्ति, शिल्पामनेन वर्ज्यवस्तुत्यागेन जलं प्रदूषितं रोगजनकं च भवति। निर्मलेन जलेन जीवनम् आयुरारोग्यञ्च भवति।

अग्निः – अग्निः तेजोरूपः अग्नेः दाहिका भक्तिः सर्वमशुद्धं वस्तु नाशयति, पर्यावरणस्य विशुद्धिं च रक्षति। सूर्यः यज्ञाग्निः गार्हपत्याग्निः वनाग्निः वडवाग्निः इति विविधरूपेण अग्निः शुद्धेः कारणं भवति, वायुमण्डलस्य विषप्रक्रियाम् अग्निः नाशयति, संसारस्य हितं साधयति च।

वायुः – वाति गच्छति गन्धं वहति इति वायुः जीवनस्य आधारः वायुः। वायुः विश्वभेषजरूपः। प्राणवायु द्वारा जीवनस्य संचारः भवति। यज्ञे अग्नौ घृतयुक्ताः आहुतयः वायुमण्डलं शुद्धं कुर्वन्ति। वृक्षः वायुमण्डलात् अंगाराम्लं गृहीत्वा अंगारं संजिनीति, प्राणवायुम् अम्लजानं निःसारयति। वृक्षः स्वपत्रमाध्यमेन रश्मिप्रतिपालन प्रक्रियया Photosynthesis खाद्यं प्रस्तौति। वायुसंशोधने वृक्षाणां भूमिका महत्त्वपूर्णा। वृक्षाणां छेदनेन वायुप्रदूषणं वर्धते। वायुमण्डलस्य सुरक्षया जीवनं सुरक्षितं स्यात्।

आकाशः – आ समन्तात् कशते प्रकाशते इति आकाशः वायुमण्डलस्य शुद्धिं द्युलोकस्य भूलोकस्य च संरक्षणम् आवश्यकम् आकाशः पिता पृथिवी माता द्यौर्नः पिता अथर्ववेद- (6,120,2) द्युलोकस्य अन्तरिक्षस्य वा प्रदूषणेन जीवनं च संकटापन्नं भवति।

एतानि भूतानि समन्वितरूपेण प्राणिनां जीवनं धारयन्ति पोषयन्ति च। एकस्यापि विपर्यये सृष्टेः विनाशः अवश्यम्यावी। विश्वस्य तदावणस्य पर्यावरणस्य च सुरक्षया सृष्टिरिय नूनं रमणीया भविष्यति। सर्वत्र शान्तिः विराजताम् इति धिया एतेषां सुरक्षानिमित्तं शान्तिमन्त्रं पठ्यते।

ॐ द्यौः शान्तिः, अन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवीशान्तिः आपः शान्तिः, ओषधयः शान्तिः, वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवाः शान्तिः, ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधिः।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः (यजुर्वेदः- 36-17)

वेदेषु सृष्टि विज्ञानम्

इन्द्रजित साहु

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

विश्वस्य यत् मौलिकं तत्त्वं विद्यते येन अस्य विश्वस्य सृष्टिः स्थितिः विनाशस्य भवति तदेव वेद शब्देन आख्यायति। स एव वेदः यज्ञ प्रधानः यज्ञ सम्पादनमेव वेदस्य मूलविषयः। विराट्पुरुषस्य मानसिकयज्ञात् एव सृष्टिरियं सञ्जाता। इति पुरुषसुकतात् ज्ञायते। सोमेन देवाः जायन्ते, सौत्रामण्यां मानवाः इति ब्राह्मणवचनात् ज्ञायते यत् यज्ञादेव अस्य विश्वस्य सृष्टिः पुनश्च ऋग्वेदानुसारं पशवचक्रमाधारेण सृष्टिः सञ्जाता। वेदेष्वपि सृष्टिरचनायां प्रतीकरूपेण अनेकेषां शब्दानां प्रयोगः संदृश्यते। पुनश्च ऋग्वेदस्य दशममण्डले नासदीय अद्यमर्षणादि सूक्तेष्वपि सृष्टिक्रमः वर्णितः। अस्मिन् प्रसङ्गे वैदिकसाहित्येषु कीदृक् विचाराः प्रतिपादिताः सन्ति तेषां शास्त्रदृष्ट्या विवेचनं सद्दृश्यन्ते उपादेधातः –
ॐ यज्ञेन यज्ञ मयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्त।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः”॥ इति

(शुक्लयजुर्वेद काण्व - 35/16)

इति शुक्लयजुर्वेद वचनात् ज्ञायते यत् प्रजापतिः यज्ञेन देवान् सृष्ट्वा प्रजाभ्यः कथयति यत् हि देव त्वमपि यज्ञं कृत्वा प्रजावान् भव। श्रीमद भगवद्गीतायां भगवता श्रीकृष्णेनापि एतस्य वचनस्य पुष्टिं करोति। यथा -

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।

अनेन प्रसविष्यध्व मेषवाऽस्त्विष्वकामधुक”॥ (गीता-3/10)

पुनश्च अग्निहोत्रेण अस्य विश्वस्य पालनं भवति। दर्शपूर्णमासाभ्याम् अस्य जगतः सृष्टिः भवतीति कात्यायन वचनम्। सृष्टेः मूलकारणं भवति यज्ञः। अस्माकं शरीरे प्रत्यहं दर्शपूर्ण यागस्य सम्पादनं भवतीति गीतायाः ज्ञायते यथा -

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।

प्राणापान समायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्॥ (भगवद्गीता - 15/14)

यास्क प्रणित निरुक्त ग्रन्थे। अयमेव अग्नि वैश्वानरः इति शाकपृणिः (निरुक्त-7/6) वचनानुसारं ज्ञायते अस्माकं शरीरे अग्नि वैश्वानररूपेण स्थित्वा चव्य-चेष्य-लेय पेयादि चतुर्विधम् अन्नं पचति। दर्शपूर्णमासाभ्याम् अस्य जगतः सृष्टिः इत्युक्ते अत्र दर्श नाम ‘अग्निः’ पूर्ण नाम ‘अन्न’ यदा अग्नि-अन्नयोः मिलनं भवति तदा वीर्यस्योत्पत्तिर्जायते। अतः अस्य जगतः सृष्टिं द्वौ प्रधानतत्त्वौ स्तः अग्निः सोमश्च। यत् किमपि दृश्यते तत्सर्वम् अग्निसोमात्मकं जगत्। अग्निः अत्र अन्नस्य भक्षण-कर्त्ता पुरुषविशेषः परमात्मा तथा सोमोऽस्ति अन्नरूपः उपभोग्या स्त्री विशेषः। अनयोः तत्त्वयोः यथार्थं सम्मेलने सामाञ्जस्येन अस्य जगतः सृष्टिः भवति। अस्य सिद्धान्तस्याधारेण सांख्यादर्शनं पुरुष-प्रकृति नामकं तत्त्व द्वयमेव नित्यतत्त्वरूपेण स्वीक्रियते। प्रकृतिपुरुषयोः संयोगात् सृष्टिर्जायते। यथा -

पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य।

षड् ग्वान्धवदु भयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः॥ (सांख्य कारिका-21)

सृष्टेः प्राग गुणत्रयं साम्यावस्थायाम् अवतिष्ठते। पुरुष-प्रकृति संयोगे गुणेषु क्षोभः संजायते। गुणक्षोभे च रजोगुणे प्रवृत्तिनिमित्तकं चाश्चल्यम् उत्पद्यते। ततश्च सृष्ट्युत्पत्तिक्रमः सञ्जायते। यथा-

प्रकृतेर्महांस्ततोऽहंकारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः।

तस्मादपि च षोडशकात् पञ्चस्यः पञ्च भूतानि”॥ इति॥

(सांख्यकारिका - 22)

ऋग्वेदस्य दशममण्डले नासदीयादिसूक्तेषु सृष्टिक्रमः निरूपितः। ऋग्वेदे प्रतिपादित सृष्टि विज्ञान सूक्तेषु नासदीय सूक्तस्य स्थानं महत्वपूर्णं वर्तते। अस्मिन् सूक्ते सप्तमन्त्राः सन्ति। अत्र सृष्टिस्थितिप्रलयादीनां प्रतिपादनत्वात् अस्य सूक्तस्य महत्त्वं अस्मिन् प्रसङ्गे सर्वोपरि विद्यते। अत्र सूक्तस्य प्रथममन्त्रे जगतः प्रारम्भिकस्थित्याः वर्णनं कुर्वन्स्य

सूक्तस्य ऋषिः परमेष्ठी प्रजापतिः कथयति -

नासदासीन्नो सदासीत् तदानीं नासीद्रजो

नो व्योमा परो यत्।

किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्भ्यः

किमासो द्रह्मं गभीरम्”॥इति॥ (ऋक्-10-129-04)

अनेन मन्त्रेण स्पष्टं भवति यत् सृष्टेः प्राक् सर्वप्रथम कामः समुत्पन्नोऽभवत्। अर्थात् अस्य जगतः सृष्टेः प्रागवस्थायां परमेस्वरस्य मनसि कामः नाम सङ्कल्प एवासीत्। अस्यैव कामस्याभिव्यक्तिः सृष्ट्याः विभिन्नतरेषु प्रतिकफलिताऽभवत् एवं अविद्या कामकर्माणि सृष्टिहेतुत्व कारणानि तदा एक एव तत्त्वमासीत् यत् विनाद्धिद्या स्वासग्रहणम् अकरोत् तथा निजस्वाभाविक भवत्या जीवित मासीत्। ऋक्वेदस्य अपरस्मिन् अद्यमर्षण सूक्ते सृष्टि प्रक्रिया विषये श्रुयते यथा -

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात तपसोऽध्यजायत।

ततो सत्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥

समुद्रादर्णकादधि संवत्सरो अजायत।

अहरोत्राणि विदधद्विस्वस्य मिषतो वयी॥

सूर्याचन्द्र मसो धात्रा यथापूर्वम् कल्पयत।

दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमद्यो स्वः॥ (ऋग्वेद-10-190/2-03)

अनेन अधमर्षणसूक्तने सृष्टितत्त्वं सम्यक्तया विविच्यते। अत्र या प्रक्रिया उपदिश्यते सृष्टितत्त्वेन शाकं एतस्याः सामञ्जस्य पूर्णरूपेण भवत्येव। अत्र ब्राह्मणः विश्वमिदं जायते इति वैदिक सिद्धान्तः मन्त्राणाम् अयमेवद्यः भवति यत् आदौ प्रकाशमानात् परमात्मनो मायाद्यिष्टान रूपात् उपादानभवात् एतत् सत्यम् अजायत। ततः तस्मादेवस्वरात् अहश्च रात्रिस्याजायत। ततः तस्मादेवखद्यत् अर्णवात्समुद्रात् संवत्सरः नाम सर्वः कालोऽजायत।

ऋग्वेदानुसारं सृष्टेः कल्पना पञ्चचक्र माचारीकृत्य वर्तते। अत्र सृष्टिः नाम स्वयं परमेष्ठि-सूर्य-पृथिवी-चन्द्राणां समष्टिरूपा। एतत् पञ्चमण्डलानिका सृष्टिः पुण्डरीकात्मकं संसार कथ्यते। पृथिवीतः ऊर्ध्व स्वम्भुलोक, ततः ऊर्ध्वम् अक्षरलोकः वर्तते। तदद्यः सृष्टिः श्रुयते यथा - सुभुः स्वयम्भूः प्रथमोऽन्तर्महत्यर्णवे।

दधे ह गर्भमृत्विद्यं यतो जातः प्रजापतिः”॥

(शुक्लयजुर्वेद काण्व संहिता-25/55)

स्व्यंभूयसि श्रेष्ठी रश्मिर्वयोदा असि वर्चो मे देहि।

सूर्यस्या वृमन्वावर्त्ते”॥ इति ॥ (शुक्लयजुर्वेद काण्व शाखा-2/48)

पुनश्च प्रश्नोपनिषदि दृश्यते सूर्यः प्राणरूपः तथा चन्द्रमसः रश्मिः। अनयोः सम्मिश्रण इयं सृष्टिः जाता यथा - आदित्यो ह वै प्राणी रयिरेव चन्द्रमा रयिवा

एतत् सर्वं यन्मूर्तं चामूर्तं च तस्मान्मूर्तिरिव रयिः॥

(प्रश्नोपनिषद् अथर्ववेदः -1/5)

संस्कृतभाषायाः महत्त्वम्

कादम्बिनी खमारी

शि. शा- प्रथम वर्ष

भाष्यते अनया इति भाषां ध्वन्यात्मक शब्दैः विचाराणां प्रकटीकरणमेव भाषा। भाषाणाद् हि भाषा। भाषयति या सा भाषा। कथितमस्ति या भाषयैव मानवः मानव इति परिगण्यते। (Man is man Because of His Speech) सन्ति लोके बह्व्यः भाषाः यासु संस्कृतभाषा अन्यतमा मुख्या च।

सम् उपसर्ग पूर्वकं कृञ् धातोः क्त प्रत्यये कृते सति सुडागमे संस्कृत इति शब्दः निष्पन्नो भवति। सम्यक् कृतं संस्कृतम् अर्थात् प्रकृति प्रत्यय पुरस्सरं कृतमिति हेतोः अस्याः भाषायाः कृते नामैतत् सार्थक्यम् अभवत्। संस्कृतानां भाषा, संस्कृतां च भाषेति इति द्विधा विग्रहवाक्यं वर्तते।

संस्कृतभाषा सर्वासां भाषाणां जननी भवति। यथा त्रिवेणीसंगमे सरस्वती नदी अन्तर्लीना अस्ति तथैव संस्कृतभाषा सर्वासु भाषासु अन्तर्लीना इति सर्वे स्वीकुर्वन्ति। ताभ्यः भाषाभ्यः संस्कृतभाषायाः प्रभावः अत्यधिकः अस्तीति ज्ञायते। संपूर्ण भारतवर्षे तमिलभाषां विना अवशिष्टासु भाषासु 80 अथवा 90 पदानि संस्कृतभाषा सम्बद्धानि एव। अतः सर्वाः प्रादेशिक भाषाः संस्कृत भाषातः समुत्पन्ना इति नास्ति। अत्र संशयः। संस्कृत वाङ्मये अनेकानि शास्त्राणि सन्ति। पुराणानि, वेदाः उपनिषदाः, नाटकाः, काव्यानि, महाकाव्यानि सर्वमेव संस्कृतभाषायां एव लिखितमस्ति। सर्वमेतत् संस्कृतभाषायाः महत्त्वम् आवेदयति। शिक्षा, निरुक्तं व्याकरणं ज्योतिषं, छन्दः, कल्पश्रुति षड् अंगानि, चतुर्दशविद्या, विज्ञानं, आयुर्वेद आदि ग्रन्थाश्च सन्ति।

ग्रीकतः लैटिनतः विश्वस्य समस्त भाषाणाम् उद्गमः संस्कृततः एव मन्यते। संस्कृतम् अनेक भाषाणां जन्मदात्री भवति। भाषा विकासक्रमे संस्कृतभाषा प्राचीन आर्यभाषा-देवभाषा च अस्ति।

संस्कृतयोः मध्ये घनिष्टः सम्बन्धः वर्तते। “भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तया” इति प्रसिद्धम् उक्तिं वर्तते। एषा संस्कृतिः न केवलं भारतदेशस्य अपितु समग्र विश्वस्य मुकुटायमानाहस्ति।

“सत्य अहिंसादि गुणैः श्रेष्ठा विश्वबन्धुत्वशिक्षिका।

विश्वशान्ति सुखधात्री भारतीया हि संस्कृतिः॥

संस्कृते संस्कृतिर्ज्ञेया संस्कृते सकलाकलाः।

संस्कृते सकलं ज्ञानं संस्कृते किं न विद्यते॥”

संस्कृतं संस्कृतेः आत्मा। अस्याः भाषाया माध्यमेनैव भारतीय संस्कृतिः सुप्रतिष्ठिता अस्ति। बालकस्य जननादारभ्य मृत्युः पर्यन्तं क्रियमाणाः जातकर्म- नामकरण-

अन्नप्राशन-विवाहादि षोडशसंस्काराः संस्कृत भाषया एव विधीयन्ते संस्काराणां संपन्ने अनया भाषया एव श्लोकाः मन्त्रादि उच्चारणं कुर्वन्ति। न अन्य भाषया। पूजापाठः यज्ञायागादि क्रियाश्च अपि अस्यां भाषायामेव विधीयन्ते। संस्कृते संस्कृतिं तु अन्तर्भवति सर्वं ज्ञानमपि अत्र अन्तर्भवति।

अस्माकं देशस्य विशिष्ट पुरुषाणां विचाराः, वेशभूषाः, कार्याणि, आचाराः, व्यवहारः इत्यादयः सर्वमपि अस्माकं संस्कृतौ एव अन्तर्भवति। अतः वक्तुं शक्यते यत् संस्कृतिः संस्कृतं विना न तिष्ठति। संस्कृतं संस्कृतिः अनयोः मध्ये घनिष्टः सम्पर्कः वर्तते। नास्त्यत्र संशयः क्लेशश्च।

प्राक्कालादारभ्य अद्यावधि पर्यन्तं संस्कृतस्य स्थानं महत्वपूर्णं वर्तते। लोकेऽस्मिन् प्राचीनतमा भाषा भवति संस्कृतम्। मानवसभ्यतायाः संस्कृतेश्च विकासे भाषायाः स्थानं महत्वपूर्णं वर्तते। व्यक्तित्वस्य विकासे अपि एषा भाषा सहायिका भवति। प्राचीनतमा रचना ऋग्वेदः अस्यां भाषायां एव विद्यते। यस्य रचनाकालः भारतीयाः विद्वांसः 2500 ख्रिष्ट पूर्व इति मन्यन्ते। भारतीयानां विश्वानुसारं सृष्टिकर्तुः भगवान् ब्रह्मणः मुखात् वेदमयी संस्कृतवाणी निस्तृता-

अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।

आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः॥

संस्कृते न केवलं वेद वेदागादि वर्णितमस्ति अपितु संस्कृतभाषा दोषरहिता, सरला- गम्भीरा-मधुरा भाषा-देव भाषा वैज्ञानिकी च अस्ति। भाषा- साहित्य-व्याकरणदि ज्ञानं-चरित्र निर्माणं- बौद्धिक विकासः आत्मानुशासनस्य च ज्ञानं अस्यां भाषायामैव प्राप्तुं शक्यते। एषा भाषा वैज्ञानिकी अस्तीति नास्ति अत्र संशयः। धर्मार्थकाममोक्षार्थमपि एषा भाषा अत्यन्तमुपकराति। अतः सर्वैः संस्कृतं पठनीयम्। संस्कृतस्य प्रचारं प्रसारं च करणीयम्।

जयतु संस्कृतम्, जयतु भारतम्॥

वेदेषु कृषि विज्ञानम्

प्रभात कुमार नायक

शिक्षाशास्त्र- प्रथम वर्ष रोल नः- 65

वैदिक कार्याणां प्रमुखो व्यवसायः कृषिः आसीत्। अनेनैव हेतुना तदानीन्तन समये कृषि कर्म अत्युन्नतावस्थां प्राप्तवान्। ऋग्वेद स्यार्थर्ववेदस्यानेकेषु मन्त्रेषु प्रयुक्तः कृषि शब्दोऽस्य मुख्यः संकेतकौऽस्ति। प्रचुरमात्रायां सस्यप्राप्त्यै वैदिकैरायैः मृदायाः प्रकृतिः जलपुतैश्च सुविधाः सुक्ष्मतया परिशीलिताः मृदाया- शचीर्वराशक्ति वर्धना प्रयासः कृताः। प्रचुर मात्रायां सस्यप्राप्तेः तेषां वाञ्छाऽथर्ववेदस्य बहुषु मन्त्रेषु दृश्यते। यथा:-

उदुत्सं शतधारं सहस्रधारमाक्षिकम्।

एवास्मावेदं धान्यं सहस्रधार माक्षितम्॥

(अथर्ववेदः टप्- 59-1)

यनोहि वैदिक काले जनानां जीवनं सामान्यनया कृप्याश्रिनमासीत्। अनस्तैः पृथिवी मातृवन पूजिता सत्कृजा च माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।

(अथर्ववेदः गप्- 1-2)

अथर्ववेदे यवव्रीहि प्रभूति बहुविधानामन्तानामनेक प्रकारकाणामेषधी नाञ्च वर्णनं प्राप्यने-

“ यस्यामन्त्रं ब्रीहियवौ यस्याः इमाः पञ्च कृष्टयः
भूम्यै पर्जन्य पन्त्यै नमोऽस्तु वर्षमेदसे।”

(अथर्ववेदः गप्-1-42)

खल्वइत्यस्याप्युल्लेखोऽस्मिन् वेदे उपलभ्यते।
यस्य व्याख्या सायणाचार्येण चाणकरूपे कृताऽस्ति।
इन्द्रस्य या मही दुषत् क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी
तथा पिनप्मि स क्रिसीन् दृषदा सलवां इव
(अथर्ववेदः ष-31-1)

इक्षोरपि सङ्केतः प्राप्यनेऽत्र : -

“ परित्वा पारित्तु नेक्षुणगामविच्छिषे
यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः”

(अथर्ववेदः ऋ-34-5)

इत्थमथर्ववेदं प्राप्तैर्वनस्पति विज्ञान सम्बद्धै रूद्धरणैः रातद क्षायते यत् तदानीन्तना आर्याः वनस्पति विज्ञानस्य प्रारम्भिक ज्ञानेन सुपरिचिना आसन्।

विद्यालय एवं समाज

जय किशन कुमार

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

शिक्षा और समाज एक-दूसरे के पूरक और परस्पर सम्बन्धित हैं। वस्तुतः इसका सम्बन्ध कारण और परिणाम का है। क्योंकि समाज जैसा होता है वैसी ही शिक्षा होती है। प्रत्येक समाज अपने सदस्यों का समुचित विकास करने के लिए शिक्षा की व्यवस्था करता है।

बालकों के समुचित विकास एवं उचित शिक्षा के लिए प्रत्येक समाज को प्रत्येक अवस्था के बालकों का वातावरण आकर्षक तथा उसमें योग्य एवं अनुभवी शिक्षकों की व्यवस्था होना चाहिए। शिक्षा संस्थाओं को बच्चे के शारीरिक मानसिक, चारित्रिक, व्यावसायिक एवं आध्यात्मिक सभी प्रकार के विकास में सहायक होना चाहिए इसके अतिरिक्त समाज को व्यावसायिक शिक्षा संस्थाओं की भी स्थापना करनी चाहिए ताकि उनसे बालक अपनी रुचि, क्षमता और आवश्यकतानुसार तकनीकी शिक्षा प्राप्त कर सकें

और उसे नौकरी के लिए दर-दर न भटकना पड़े।

बच्चों का मानसिक विकास करने के लिए समाज को जनसाधारण के लिए पब्लिक पुस्तकालय एवं वाचनालय स्थापित करना चाहिए। इससे जनशिक्षा में भी बड़ा सहयोग मिलता है। बच्चों को बदलते हुए समाज से परिचित कराने के लिए वाचनालयों में देश-विदेश के समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं को मंगवाना चाहिए।

शिक्षा का एक उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है। अतः बालकों के शारीरिक विकास के लिए व्यायामशालाओं, खेलकूद संगठन, शारीरिक प्रशिक्षण आदि की भी व्यवस्था करनी चाहिए। जो समाज ऐसा नहीं करते वे शिक्षा के प्रति जागरूक नहीं कहे जा सकते।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति की रुचि, अभिरूचि, योग्यता, क्षमता आदि भिन्न-2 होती है। बालक के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विकास के लिए नाटक, क्लब वाद-विवाद समितियाँ, संगीत सम्मेलन, कवितापाठ, अन्तयाक्षरी प्रतियोगिता आदि की व्यवस्था करनी चाहिए।

विभिन्न संस्थाओं, संगठनों आदि को मिलाकर समाज बनता है। सामाजिक प्रगति के लिए संगठन या संस्था का जागरूक होना आवश्यक है प्रत्येक संस्था का पृथक्-पृथक् महत्व है। अतः विभिन्न सामाजिक इकाइयों को शिक्षा के क्षेत्र में सहयोग करना चाहिए।

इस संक्षेप में कहा जा सकता है कि समाज शिक्षा का सबल अभिकरण है। समाज अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए विद्यालयों की स्थापना करता है। विद्यालय में जो कुछ भी होता है वह समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर ही होता है अन्यथा उनका कोई मूल्य नहीं होगा।

महाभारते वृक्षविज्ञानम्

येषलाल पाण्डे

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष (व्यास वर्गः)

वर्यं जानीमः एवैतद् भारतं विशेषतो जगत्यायु वेदत्वात् प्रसिद्धम्। अत्रत्या आयुर्वेद निहिता चिकित्सा परम्परा विश्व विख्याता, विश्व वन्द्या, विश्वभोग्या विश्व भोक्ता चास्ति। इयं चिकित्सा विश्वेषतो वृक्षमूला वर्तते। इत्यत्रौषधं प्रायः वृक्षे निर्मितं भवति। वृक्षाणं महत्त्वं वेदेषु उपनिषत्सु पुरोणेषु दृश्यते एव। महाभारते यत्र मानवानां युद्ध समाप्ते सति “शान्ति पर्वाणि” भीष्म युधिष्ठिर संवादान्तर्गते भृगु भारद्वाज संवादे वृक्ष महत्त्वम् प्रतिपादितं विशेषतो वृक्ष- विज्ञानं प्रस्तौति।

अत्र भारद्वाजः प्रश्नं करोति-यथा इदं विश्वं स्तावर जंगमात्मकं वर्तते। स्तावर जंगमाह पंचभूतैः युक्ताः भवन्ति तथा भवतो चयते, परं वृक्षाणां शरीरे पचं धातवः कस्मान्नोपलभ्यते वृक्षाः पंच भौतिकाः प्रोक्ताः तथापि ते श्रवणमपि न कुर्वन्ति, गन्ध सेवनमपि न कुर्वन्ति

ते स्पर्शमपि न जानति मे रूपमपि न जानन्ति तर्हि ते कथं पचं भौतिकाः स्युः? (महाभारत शान्ति पर्व) अत्र भृगु महर्षिः समाधानं यच्छन् कथयति धानामपि वृक्षाणां आकाशः निश्चित रूपेण वर्तते। यतोहि महाभारते उल्लिखितं वर्तते तत्र पुष्प फलोत्पत्ति जायते। तथा च तत्र अग्निरपि वर्तते। यतोहि तत्पन्नं म्लायते। तत् पर्णं म्लायते शीर्यते तस्मात् स्पर्शानुभूमिरपि वर्तते। श्रवण शक्तिः समाधानां अनिलस्य अनतस्य विद्युतश्च भीषणः शौधैः वृक्षाणां पुष्पाणि फलानि पत्राणि च विश्रियन्ते, तेनेदं दायते यतो श्रोतुमपि प्रभवन्ति। एतद् भिन्नं श्रीमद् भगवद् गीतायामपि उल्लिखितं वर्तते यत-

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न सम्भवः॥

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो, यज्ञः कर्म समुद्भवः॥३/१४॥

एवञ्च वृक्षाः विलोकयितुं प्रभवन्ति नाम तेषां दृष्टिरपि वर्तते। दृष्टि समाधाने अत्र ऋषिः कथयति वयं तदा गमनं व्यापारं कुर्मस्तदा एकस्माद् स्थानाद् प्राप्तव्यं स्थानम् प्रति गमनं कुर्मश्चेत् तत्र दृष्टि व्यापारः अपेक्षितो भवति। विना स्खलेन यथा मार्गे गमनं दृष्टि शक्तिं विना सौख्यमेव नास्ति। अत्र तदेव इदं कर्तुं महर्षिः कथयति लता पादपमारोहति तद्वेष्टन् करोति भूमावचि अग्रे गमनं करोति। दृष्टि विरहितस्य गमनं न भवति। अन्येच केचन वृक्षाः सूर्याभिः मूखिः भूयः भ्रमणं कुर्वन्ति। तेनापि तद् दर्शनं व्यापारो गम्यते। तेषां घ्राणशक्तिः समाधानं कथयति-यद् यथा मानवाः अन्ये च जन्तवः रोगिणो भवन्ति, तथैव वृक्षाः अपि रोगिणो भवन्ति। तेषां स्वास्थ्यं विविधैः धूपैः पुनः प्राप्यते अनेन गम्यते यत् तेषां घ्राणशक्तिरपि वर्तते। तथा च रसेन्द्रिय समाधानं यच्छता तेनोच्यते यत् वृक्षाः पादेन जलं विवन्ति तथा पादेनौषध ग्रहणं कृत्वा व्याधिः प्रतिकारं कुर्वन्ति। एवमत्र वृक्षाणां पर्णानि म्लायन्ते तस्मात् तेषां स्पर्शज्ञानं अनिलानल विद्युत्द्योषैः पुष्पाणि फलानि च विश्रियन्ते।

तस्मात् तेषां श्रवणेन्द्रिय ज्ञानं लताः वृक्षाः रोहणं कुर्वन्ति केचन सूर्याभिमूखि भूय भ्रमन्ति। तस्मात् तेषां दृष्टिज्ञानं वर्तते। विविधैः धूपैः तेषां व्याधिनाशये भवति अतः तेषां घ्राणेन्द्रिय ज्ञानं वर्तते। तथा च पादेन सलिल पानं तथा औषधि ग्रहणं कुर्वन्ति। तस्मात् तेषां रसेन्द्रिय ज्ञानं वर्तते इति महर्षिणा भृगुणा प्रमाणैः प्रमाणितं कृतम्। वृक्षाणां सुख दुःखयो-रनुभूतिरपि वर्तते, तथा च छिन्नस्य वृक्षस्य विरोहणं भवति। तस्मात् तत्र प्राणानि सन्ति। एवमत्र प्राणानां समाधानमपि विहितं यथा-

सुख दुःखयोश्च गुहणा छिन्नस्य नो विरोहणात्।

जीवं पश्यामि वृक्षाणां चैतन्यं न विद्यते॥ (म.भा.शा.)

अनुशासनस्य महत्त्वम्

मंगल राम

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

वर्तमान समये सर्वस्मिन् जगति अनुशासनं दरीदृश्यते। प्रकृतिरपि अनुशासनबद्धा विलोक्यते, यथा- सूर्यो नियमित एव परिभ्रमन्ति। प्रकृतेः अनुशासनं पालनत्वात् सर्वत्र समाञ्जस्यं वर्तते। यदि मनुष्याः अपि अनुशासनबद्धाः स्युः। तर्हि शोभनं भवेत्। सर्वमानवैः अनुशासनं नियमाः अवश्यमेव परिपालनीया यतो मानव जीवने अनुशासनस्य खलु महती अपेक्षा वर्तते। यदि जनाः स्वेच्छया यत्र-तत्र यथा-तथा वर्तैरिन तदा तु जगतो गतिर्विचित्रैव स्यात् सर्वत्र कार्यहानिरेव भवेत्। अतः जीवनोन्नतयै जीवनसाफल्याय चानुशासनम् अनिवार्यम्। शैशवाद आरभ्य वृद्धत्वं यावद् अनुशासनम् आवश्यकं वर्तते। बाल्ये माता पित्रोः विद्यालये गुरोः गृहस्थाजीवने पत्युः पत्या वा, वृत्तिस्थानेषु उच्चाधिकारिणाम् अनुशासनं पाल्यते। अन्तरेण अनुशासनं पारिवारिकं सामाजिकं, राष्ट्रियं च संघटनं विच्छिद्येत। रत्नं घर्षणच्छेदनादिनाऽनुशिष्टं सद् महार्घत्वं भजते। अश्वाः सुनियन्त्रिताः समरभूमौ विजयं लभ्यन्ति सैनिकाः अनुशासनं पालयन्तः स्वसेनापतेः संकेतमात्रेण एकधा आचरन्ति व्यवहरन्ति च। सेनासु यादृशं कठोरम् अनुशासनम् तादृश्येव विजय-वैजन्ती समासाधते। किमन्यत् महात्मनो गान्धेर्नेतृत्वम् अनुशासनं चानुसृत्यैव भारतं स्वातन्त्र्यं लेभे। अनुशासनस्यैव एतन्महत्वं यत् सामाजिकं राष्ट्रियं च कार्यजातं सारल्येन प्रचरति।

अनुशासन-दृष्ट्यैव निर्दिश्यते- लालयेत् पञ्च वर्षाणि, दश वर्षाणि ताडयेत्। लालनाश्रयिणो दोषास्ताडनाश्रयिणो गुणाः। तैतिरीयोपनिषदि अत एव प्रोच्यते वेदमनुच्याचायोऽन्तेवासिनम् अनुशास्ति। सत्यं वद धर्मं सूत्रेषु स्मृत्यादिषु चाचारवर्णनम् कर्तव्याकर्तव्य विधाननिरूपणम् सर्वमप्यनुशासनमूलम्। अनुशासनमेव साधनां शिक्षयति। बुद्धिस्तथा-विधानुशासनेन कवित्वम् ऋषित्वं ज्ञानित्वं वैज्ञानिकत्वं च सिद्धयति। अनुशासनमूलकमेव संगीत-नृत्य विविध कला-विशेषज्ञत्वम् अनुशासनस्याभावेन मानवः प्रकृतिदत्त शक्तीनामुचितप्रयोगं कर्तुं न शक्नोति। अनुशासनेनैव व्यक्तिः उत्तमशक्तिं प्राप्नोति अनया शक्त्या जनः स्वनैसर्गिक प्रवृत्तीनां विकासे समर्थो भवति। व्यक्तिगतदृष्ट्या अनुशासनस्याति महत्वं वर्तते। तेनैव साकमनुशासनस्य सामाजिक दृष्ट्याप्यातिहत्वं वर्तते। दार्शनिकस्य अफलातून महोदयस्य कथनमस्ति- “राष्ट्रस्य निर्माणं शिलाभिः वृक्षैश्च नैव क्रियते अपितु नागरिकाणां चरित्रेण क्रियते।” इदं कथनं पूर्णरूपेण सत्यमस्ति। यदा कस्यापि देशस्य नागरिकाः अनुशासिताः भवन्ति तदा ते स्वदेशम् उन्नतिपथमानेतुं समर्थाः भविष्यन्ति। अनुशासिताः जनाः सच्चरित्रेण, मनसा वचसा, कर्मणा च शुद्धाः भवन्ति। अनेन भवति यत् राष्ट्रस्य कृते सम्पूर्णसमाजस्य कृते च अनुशासनस्यातिमहत्त्वमस्ति। तथ्यमिदमितिहाससहाय्येनापि स्पष्टं कर्तुं शक्यते। इतिहासः वर्तते यत् कोऽपि देशः अनुशासनहीनतया ग्रस्तः जातः तदैव सः बाह्यशक्तीनां दासतामपि स्वीकरिष्यति। अनुशासनेनैव व्यक्तिषु समाजेषु राष्ट्रेषु वा स्फूर्तिः उत्पन्ना भवति। अस्याभावे सर्वेषां शक्तेः विनाशो भवति। अतः अनुशासनं बहु आवश्यकम्।

संगणकसहभागाधिगमः ई. अधिगमश्च

सुरेश कुमार पाण्डेय

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्षम्

परिवर्तने समाजे समाजस्य निर्माणे विज्ञानस्य प्रविधेश्च महत्योगदानं वर्तते। अद्यमानवानां दृष्टिकोणः वैज्ञानिकः सञ्जातः अस्ति। सम्प्रति संगणक माध्यमेन शिक्षा प्रचलति। युगेस्मिन् यान्त्रिकी करणस्य प्रभावः अवलोक्यते। अतः मनुष्यस्य बहूनि कार्याणि यान्त्रिकपद्धत्या स्थानान्तरितानि क्रियन्ते, येन यन्त्रवत् कार्याणि कर्तुं जनानाम् अवकाशः लभ्यते। तेन ते अन्येषु सर्जनात्मक क्षेत्रेषु स्वसमयस्य उपयोगं कर्तुं शक्नुयुः। पञ्चत्रिंशत् वर्षेभ्यः पूर्वः विद्यालयेषु, विश्वविद्यालयेषु सङ्गणक नासीत्। गणकानाम् अपि उपयोगः अत्यन्तं सीमितमैव आसीत्, परञ्च सम्प्रति अध्ययनम्, अधिगमः, कार्यम् एतत् सर्वं सङ्गणकेन अल्पसमये अल्पपरिश्रमेण भवति एतदर्थम् एतस्य महती उपयोगिता अस्माकं जीवने वरीवर्तते।

अधिगमः – मानवस्य अधिगमप्रक्रिया जन्मतः एव आरभ्यते। अतः सः आजीवनम् अधिगच्छन् भवति। मानवस्य अधिगमार्थं न कोपि निश्चितः समयः न किञ्चित् सुनिश्चितं स्थानं भवति। इत्यस्य अर्थः शिक्षणम्, अध्ययनं, व्यवहारपरिवर्तनम् इत्यादि भवति। परन्तु सूक्ष्मरूपेण अधिगमेत्यस्यार्थः व्यवहारेण अनुभवेन च जायमानं अभिप्रायः वर्तते” ELEC-TRONIC-LEARNING,

ई. अधिगमः – इत्यत्र उभौ शब्दौ विद्येते। अत्र ई. इत्यस्य अर्थः (electronic) यन्त्रं भवति, तथा च अधिगमः इत्यस्य अर्थो भवति व्यवहारपरिवर्तनम्, अध्ययनं वा। इमम् ई. अधिगमः” आंग्लभाषायाम् (Electronic-Learning) इत्युच्यते। अतः एवं वक्तुं शक्यते यत् यन्त्र माध्यमेन क्रियमाणः अधिगमः ई. अधिगमेति। ई. अधिगमान्तर्गते Google, Internet, Youtube, Smart Board” इत्यादयः समागच्छति। अतः एतेन क्रियमाणः अधिगमः ई. अधिगमः। ई. अधिगमेन अस्माकं शिक्षणं सरलं सुन्दरं तथा च मनोवैज्ञानिकं च भवति। सम्प्रति एतस्य ई. अधिगमस्य” महती उपयोगिता वरीवर्तते। सङ्गणकेन ई. अधिगमेन वा अति जटिल समस्याः अपि समाधातुं शक्यन्ते। अतः प्रत्येकं क्षेत्रे अस्योपयोगं समास्थोस्ति।

सङ्गणकमाध्यमेन अधिगमः – आरम्भ काले सङ्गणकानि केवलं गणनायन्त्रत्वेन मन्यते स्म। किन्तु अनन्तरम् अनुभूतं यत् गणनायाः अपेक्षया अधिकं कार्यमपि अनेन साधयितुं शक्यते। अतः प्रत्येकं क्षेत्रे अस्योपयोगः आरब्ध अस्ति। सङ्गणकेन शिक्षादानकाले सर्वे छात्राः युगपत् उपविशन्ति। प्रत्येक छात्रस्य साक्षात्सम्बन्धः सङ्गणकस्य श्रवणयन्त्रेण सह, ध्वनिमुद्रणयन्त्रेण सह पिञ्जपट्टिकया सह च कार्यते। सङ्गणकमाध्यमेन अधिगमः सारल्येन अल्पसमये भवति। तथा च छात्राः सम्यक्तया अधिगमः कर्तुं शक्नुवन्ति।

सङ्गणकाधिगमस्य महत्वम् – सङ्गणकेन अधिगमक्षेत्रे एका प्रतिधिकी क्रान्तिः समुत्पादिता।

एतस्य बहुविध महत्वानि अपि विद्यन्ते। तद्यथा -

सङ्गणकं पूर्णतया निर्वैयर्थ्यशिक्षकः यत् पूर्वाग्रहेण रहितं भवति छात्राणां जाति, लिङ्गं, वर्गः इत्यादि सङ्गणकं नैव प्रभावयितुमर्हति।

छात्राः यावत् पाठ्यबिन्दुम् आत्मसात् न कुर्वन्ति - तावत् पर्यन्तं सङ्गणकेन पाठ्यबिन्दोः विश्लेषणं पुनः पुनः कारयितुं शक्यते।

सङ्गणकात् शिक्षितुं न कापि आयुसीमा भवति। अतः प्राथमिकस्तरात् विश्वविद्यालयस्तर पर्यन्तम् अध्येतृभ्यः एतद् यन्त्रम् उपयोगन्तुं शक्यते।

सङ्गणकेन अध्ययनं सारल्येन प्रतिपादयति अध्यापकः।

सङ्गणकेन अल्पसमये अल्पपरिश्रमेण कार्यं भवितुमर्हति।

निष्कर्षः - सम्प्रति सर्वेषु विकषितप्रदेशेषु एतस्य मस्तिष्कयन्त्रस्य प्रभाविसाधनत्वेन उपयोगः क्रियमाणः वर्तते। अद्य एषा प्रणाली औपचारिकानौपचारिकशिक्षयोः द्वयोरपि स्तरयोः कृते प्रयुज्यते।

वर्तमानसमये - NCERT, NCTE, UGC, CIET इत्यादि बहुविधपरियोजनाः समक्षिताः सन्ति। एतेन शिक्षणं यद्यपि यान्त्रिक शिक्षणम् इति बहवः अभिप्रयन्ति, तथापि अनेन अल्पीयसि काले बहुभ्यः छात्रेभ्यः छात्रास्तरानुगुणं प्रभाविरूपेण शिक्षणं प्रदातुं शक्यते।

हमारा प्यारा तिरंगा

लक्ष्मीप्रिया सेठी
शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

भारत माता की पहचान है तू
हर भारतीय की जान है तू
तू ही प्यारा झण्डा हमारा
और हमारी शान है तू।
शान्ति पथ विश्व को दिखाता
त्यागी सबको तू है बनाता
देश-देश में पहुँचाना
प्यार का पैगाम है तू॥
मेरे लिए लहू के हर बूँद और जान
तुझ पर निछावर है पूरा हिन्दुस्तान
कोटि-कोटि प्राणों का मान-सम्मान है तू॥
तेरी आभा फैली है दिशा-दिशा
सबके मन में लाती भरपूर आशा
है अमर केतू-कितना पावन और महान है तू॥
कोटि-कोटि वीर है अर्पित

जीवन की हर साँस समर्पित
ज्योति तेरी अब्दुत
भक्ति अमर भूतिमान है तू।।
पूजा तेरी करते हैं हम
साथ हमारे रह जनम-जनम
अमित हमारा मान है तू।।

शिक्षा मनुष्य के जन्मगत अधिकार

सुशान्त माझी

शिक्षाशास्त्री प्रथमवर्ष

हमारे जीवन में शिक्षा का महत्त्व शुरु से ही रहा है। शिक्षा हर एक नागरिक की एक ऐसी आवश्यकता है जिसके बिना कोई भी नागरिक जिंदगी में कुछ खास नहीं कर पाता है। इस विषय में कहावत है - शिक्षा के बैगर मनुष्य एक पशु के समान है।

हमारे देश में शिक्षा प्राप्त करने के लिए बहुत सारे विद्यालय-महाविद्यालय बनाये गए हैं, हर तरह से उन विद्यालयों-महाविद्यालयों में बच्चों को उचित शिक्षा दिलवाने के लिए बहुत सारी सुविधाएँ दी जा रही हैं। आज इस जमाने में शिक्षा को तेजी से फैलाने के लिए सरकार के द्वारा हर शहर गली हर गाँव में बहुत से विद्यालय खोले गये हैं क्योंकि कहते हैं कि-

पढ़ेगा इण्डिया तभी तो बढ़ेगा इण्डिया।

हमारे देश के लोग पहले की अपेक्षा शिक्षा का महत्त्व को समझ चुके हैं। आज सिर्फ पुरुष ही नहीं स्त्रियाँ भी इस दौड़ में आगे बढ़ रही हैं। आज हमारे देश के महान् लोगों ने बहुत तरक्की हासिल की उन्होंने अपने देश का नाम रोशन किया इसका अगर सबसे महत्त्वपूर्ण कोई कारण है तो वह है उनको दी जाने वाली उचित शिक्षा। हमारे देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षा लेने का अवसर दिया जाता है। पहले के जमाने में शिक्षा प्राप्त करने के अवसर कम होते थे लेकिन आजकल छात्रवृत्ति की सुविधा दी जा रही है। हमारे देश के राष्ट्रपति ए.पी.जे अब्दुल कलाम जो कि गरीब थे। लेकिन उन्होंने पढ़ाई की और पढ़ाई के महत्त्व को समझते हुए अपना पूरा ध्यान अपनी पढ़ाई पर दिया और अपने लगातार किये गए प्रयासों से उन्होंने बहुत सारे आविष्कार किये। उन्होंने अपने देश का नाम रोशन किया और हमारे भारत देश के राष्ट्रपति बनें। अगर ये सब कर पायें तो इसमें सबसे बड़ा योगदान उनकी शिक्षा का है क्योंकि- शिक्षा के बगैर इंसान कुछ भी खास नहीं कर पाता।

हमारे देश में गरीब जनसंख्या भ्रष्टाचार जैसी बहुत सी समस्याएँ हैं लेकिन आजकल के लोगों को उच्च शिक्षा प्रदान करने के अवसर मिलते हैं जिससे यह समस्याएँ तेजी से कम होती जा रही है। शिक्षा जिन्दगी की है एक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण है बहुत से लोग ऐसे होते हैं वह सोचते हैं कि मुझे अच्छी शिक्षा नहीं प्राप्त करनी है क्योंकि कोई नौकरी नहीं प्राप्त करनी है क्योंकि कोई नौकरी नहीं करना चाहता हूँ लेकिन यह सोच बिल्कुल गलत है क्योंकि शिक्षा का मतलब यह नहीं है कि शिक्षा प्राप्त करके अच्छी नौकरी करें बल्कि शिक्षा का उद्देश्य आपको ज्ञान प्रदान करना है - जिससे आप किसी भी क्षेत्र में उन्नति कर सकें।

शिक्षक शिक्षा और छात्र

गणेश्वर बेहेरा

शिक्षाशास्त्री प्रथम वर्ष

भारतीय शिक्षा एक ऐसी अवधारणा है जिसको यदि हम सम्पूर्ण ज्ञान सम्पद का नाम दे तो उचित होगा। हमारी शिक्षा व्यवस्था प्राचीन काल से ही छात्रों के सर्वाङ्गीण विकास की ओर प्रेरित करती है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात ये है कि शिक्षा को प्रदान करने के लिये शिक्षक की भूमिका प्रमुख होती है। शिक्षक एक ऐसा महत्त्वपूर्ण अङ्ग है जो शिक्षा की मूलभूत धारणाओं को समझने समझाने से एक भूमिका का निर्वहन करता है। शिक्षक के विषय में यदि विचार किया जाय तो शिक्षक शब्द भारत में बहुत बाद में आया है। हमारे भारत में शिक्षक को गुरु की संज्ञा से सम्बोधित किया जाता रहा है। हमारी भारतीय ज्ञान परम्परा में गुरु को साक्षात् ब्रह्म सदृश मानते हैं यथा-

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः॥

इसी प्रकार गुरु की वन्दना करते हुए महर्षि वेदव्यास कहते हैं कि -

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया।

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥

इस प्रकार गुरु की महिमा बनाकर एक भारतीय परम्परा को दर्शाया है।

अब हम शिक्षा की बात करते हैं। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है। जो छात्र के सम्पूर्ण पक्षों के विकास में सहायिका की भूमिका का निर्वहन करती है।

अब यहाँ यह स्पष्ट कर देना उचित होगा की शिक्षा को शिक्षकप्रदान करता है और छात्र के लिए शिक्षा को देता है। इसलिये यह भी कहा जा सकता है कि शिक्षक शिक्षा और छात्र इन तीनों के मध्य समवाय सम्बन्ध है। यहाँ यह भी कह सकते हैं कि तीनों के मध्य आधार आधेय सम्बन्ध है।

वस्तुतः यदि विचार करें तो इन तीनों के मध्य छात्र सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष है जो ग्रहण करता है। हम यह कह सकते हैं कि छात्र एक ऐसा अपरिपक्व ध्रुव होता है। जिसको शिक्षक अपने परिपक्वता से उसे शिक्षा प्रदान करके परिपक्व बना देता है -

मानेव रक्षति पितेर हिनेन युक्ते

कान्तेव चाभिरमयत्य पनीय खेदम

कीर्तिश्च दिक्षु विमला वितनोति लक्ष्मी

किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या।

अर्थात् विद्या सब कुछ देती है। जीवन जीने के सम्पूर्ण तरीके तथा मूल्य, परम्परा, संस्कृत, सभ्यता आदि का ज्ञान हमें शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त होता है। तो यहाँ स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा एक सम्पूर्ण विकास की प्रक्रिया है जो कि एक शिक्षक और छात्र के बिना सम्भव नहीं है।

इसलिये तीनों की भूमिका अवर्णनीय है। इस कारण हम यहाँ कह सकते हैं कि शिक्षा व्यवस्थाको सुचारु रूप से चलाने हेतु समाज को शैक्षिक संस्थाओं को अपने अपने दायित्वों का निर्वहन करते रहना चाहिए। जिसमें शिक्षा व्यवस्था नित नये नवाचार और शिक्षा में सुधार होते रहे हैं।